[illegible] पूजामें आत्म-बलिदान।



त्यागमूर्ति भाई परमानन्दजी एम० ए०

सरस्वती आश्रम ग्रन्थमाला सं० ४६

ॐ

भारतीय देवियों तथा नवयुवकोंके लिये ।

देश-पूजा

-: में :-

आत्म-बलिदान ।

लेखक

त्यागमूर्ति भाई परमानन्दजी एम० ए०

प्रकाशक—

राजपाल-प्रबन्धकर्त्ता,

आर्य्य पुस्तकालय सरस्वती आश्रम,

अनारकली, लाहौर ।

प्रथम संस्करण २००० प्रतियां	सन् १६२१.	मूल्य १।) रंगीन जिल्द १॥) रेशमी जिल्द १॥।)

प्रकाशक—
राजपाल-प्रबन्धकर्त्ता,
आर्य्य पुस्तकालय तथा
सरस्वती आश्रम
अनारकली,
लाहौर।

मुद्रक—
रिखबदास बाहिती
"दुर्गा प्रेस"
नं० ७४, बड़तल्ला स्ट्रीट,
कलकत्ता।

उपहार

विषय-सूची ।

विषय—	पृष्ठ
भारतवर्षके इतिहासका पठन	६
भारतकी स्त्रियोंका इतिहास	२१
सावित्री	२८
सुलभा	३०
विदुला	३८
दमयन्ती	४५
महारानी सीता	४६
द्रौपदी	५८
बौद्धोंका काल	६४
आर्य्य धर्म्मकी विजय	७१
इस्लामके साथ मुठभेड़	७५
इस्लामसे संघर्षण	७६
आर्य्य जातीय जीवन	१०३
तत्कालीन आर्य्यावर्त्तकी राजनैतिक अवस्था	१०५
महाराष्ट्र राज्य स्थापना	११०
सिक्खोंकी उन्नति	११८
माता सुन्दर कौर	१२५
अङ्गरेजोंका अभ्युदय	१२८
मरहटों और अङ्गरेजोंका पारस्परिक प्रतिरोध	१३६
सिक्खों और अङ्गरेजोंका सङ्घर्षण	१५३
१८५७ की हलचल व लक्ष्मी बाई	१६१
उपसंहार	१६४

भाई परमानन्दजी कृत अन्य पुस्तकें।

इस पुस्तकके अतिरिक्त भाईजीने निम्नलिखित पुस्तकें निर्माण की हैं जिनका पढ़ना न केवल आर्य्य स्त्री पुरुष प्रत्युत प्रत्येक हिन्दोस्तानीका आवश्यक धर्म्म है, इन पुस्तकोंके पाठसे पता लगता कि मृत्यु आरम्भमें कैसी भयानक और पश्चात् कैसी प्यारी लगती है

कालेपानीकी कारावास कहानी या आप बीती—इस पुस्तकमें लाहौरकी हवालातसे लेकर फांसीकी सज़ा पाने, इसके बाद काले पानी जाने और वहांकी मुसीबतोंके सब हालात विस्तारपूर्वक भाईजीने अपनी लेखनीसे लिखे हैं। कालेपानीमें हिन्दोस्तानी और विशेष कर राजनैतिक क़ैदियोंके साथ जो ज़ालिमाना और क्रूर बर्त्ताव किया जाता है उसको पढ़कर चीखें निकल जाती हैं और मालूम होता है कि अंग्रेज़ी राज्यमें न्यायके नामपर कितना अन्याय हो रहा है। पुस्तक सचित्र है। मूल्य केवल १॥) उर्दू १।) रुपया।

गीताअमृत—फांसीकी सज़ा सुनानेके पश्चात् भाईजीने मृत्युके साक्षात् दर्शन किये और इस अवस्थामें कालेपानीमें रह कर पतित पावनी **गीता** की एक ऐसी अद्भुत व्याख्याकी जो अबतक गीतापर नहीं लिखी गई। इस गीता अमृतको पढ़कर मनुष्य जीवन और मृत्युके प्रश्नको भली भांति समझ जाता है और मृत्यु उसके लिये कोई भयानक वस्तु नहीं रहती। इस व्याख्याके साथ गीताके अठारह अध्याओंके श्लोक अर्थ सहित दिये गये हैं। गीता अमृतके होते ही किसी दूसरे भाष्यकी आवश्यता नहीं रहती। मूल्य केवल २) उर्दू १।) रुपया।

पता—राजपाल-सरस्वती आश्रम लाहौर।

भूमिका ।

प्रस्तुत पुस्तक श्रीभाई परमानन्दजी एम० ए० की लिखी हुई है। आप लेखक, वक्ता, दार्शनिक, सरलजीवी, इतिहासज्ञ, प्राच्य और पाश्चात्य साहित्यके मन्थन दण्ड, दूरदर्शी, निष्काम कर्मयोगी, अध्ययनशील, बहुज्ञ और सच्चरित्र धार्मिक विद्वान् हैं, सहिष्णुताकी आप प्रत्यक्ष मूर्ति हैं। हम ठहरे निरक्षर भट्टाचार्य्य। मुझमें क्षमता कहां कि आपके ग्रन्थ-रत्नकी भूमिका लिखें। हां, मित्रकी आज्ञाका पालन और हार्दिक भावोंकी श्रद्धाञ्जलि, ये दोनों मुझे लिखनेको हठात् विवश कर रहे हैं। पूर्व इससे कि आपके इस ग्रन्थके विषयमें कुछ लिखूँ, उचित समझता हूँ कि इतिहासके विषयमें कुछ लिखा जाय।

इतिहास क्या है ?

इतिहास ललित कलाओंका आधार है। यह हमें प्रत्येक देशकी प्राचीन तथा अर्वाचीन घटनाओंका दिग्दर्शन कराता है। इतिहास हमें बतलाता है, किस प्रकार मनुष्य अपने बुद्धि कौशलसे अत्यन्त असभ्य और जङ्गली दशासे उन्नति करते करते इस वर्त्तमान सभ्य दशाको पहुँचे हैं जिसमें हम यूरोप और अमेरिका तथा जर्मन, अंग्रेज आदि उन्नत जातियोंको देख रहे हैं। इतिहाससे उनके रहने सहनेके ढङ्ग और धार्मिक तथा सामाजिक दशापर भी अच्छा प्रकाश पड़ता है। केवल इतना ही नहीं प्रत्युत उन देशोंके इतिहासोंकी घटनाओंपर ध्यान रखकर उनके परिणामोंका मनन करते हुए अपनेको हानिप्रद अन्याय मार्गसे हटा कर शुभप्रद और न्याय-पथका पथिक बना सकते हैं। जो देश अवनत और पददलित होकर अत्यन्त नारकीय कष्ट उठा रहा हो,

उसके लिये इतिहास महौषधि है। वह उस जातिको उसकी उस दशामें ढांड़स बंधाता है और पुनरुत्थानके लिये उसे प्रोत्साहित करता है। राजनीतिका भी एक मात्र अवलम्बन ही इतिहास है, इसे बिना जाने उसमें हाथ डालना व्यर्थ है।

भारतवर्षका इतिहास।

संस्कृतमें राजतरङ्गिणीके अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा इतिहास नहीं जिसको इतिहास कहा जाय। हां, महाभारत अपूर्व ग्रन्थ है, किन्तु उसमें नवीन पण्डितोंने बहुत कुछ प्रक्षिप्त मिला दिया है जिससे अतिशयोक्ति आ गई है। बेचारे टाड साहिबने बड़ी भद्दी भूलें की हैं, जिनको रमेशचन्द्रदत्त आदि विद्वानोंने पूर्ण रूपसे स्वीकार किया है। हां, इन दिनों ज्ञानमण्डल काशीसे श्रीहरि-मंगल मिश्र एम० ए० का "भारतका प्राचीन इतिहास" अच्छा छपा है। हमारे बच्चोंको जो आधुनिक शिक्षा शैलीके अनुसार इतिहास पढ़ाये जाते हैं, वे प्रायः विदेशियोंके लिखे हुए हैं, उनमें पक्षपातकी पूर्ण ज्वाला-माला प्रदीप्त हुई देख पड़ती है।

भाईजीकी प्रस्तुत पुस्तक।

भाईजीने इस पुस्तकको यों तो बाल, वृद्ध, युवा, स्त्री, पुरुष सबके अध्ययनार्थ लिखा है परन्तु कन्याओं और स्त्रियोंके लिये विशेषरूपसे लिखी गई है। इसमें गम्भीरतर विषयोंका वर्णन न करके सीधे सादे ढंगपर मातृ मन्दिरपर बलिदान होने वाले भारतीय वीर पूजारियोंकी चरितावली लिखी है। भाई जीकी सहृदयता और शालीनता इसीसे प्रकट होती है कि जहां आप अन्य वीरोंके चरित लिख रहे हैं, स्त्रियोंके सुपाठ्य जीवन चरित्र भी लिखने नहीं भूले हैं। स्त्री शिक्षा, समाज सुधार, चरित्र बल आदिकी अनेक भाव भङ्गिता इस ग्रन्थके पढ़ने पर प्रकट होते हैं। इस पुस्तकको साद्यन्त पढ़नेपर आपकी प्राचीन

प्रियताका अच्छा पता लगता है। यह प्राचीनोंके प्रति श्रद्धा आपके स्वरूपके अनुरूप ही हुई है। हम आपके ग्रन्थके विषयमें अधिक लिखकर (न कस्तूरिकामोदभरेण विभाव्यते) यह कहकर ही समाप्त करते हैं। यद्यपि यह मेरी अनधिकार चेष्टा ही है, तथापि भक्तका अपने आराध्यके प्रति भाव टूटे फूटे शब्दोंमें भी वह भाव ही रहता है। आशा है, कि इस पुस्तकके पाठसे भारतके नवयुवकों और देवियोंमें देशपर बलिदान होनेका भाव उत्पन्न होगा। यही इस पुस्तकका उद्देश्य है।

निवेदक—

रामस्वरूप शर्म्मा।

देशपूजामें--
आत्मबलिदान ।

भारतवर्षके इतिहासका पठन ।

किसी संस्था (सुसायटी) की उत्पत्ति, वृद्धि और अवनतिके वृत्तान्त और परिवर्त्तनों (तब्दीलियों) का वर्णन उसकी तवारीख़ वा इतिहास कहलाता है। इतिहासके लिये यह आवश्यक नहीं कि यह तीनों बातें उसमें पाई जाती हों। किसी एक हालतका वर्णन भी उसका इतिहास बनानेके लिये पर्य्याप्त है।

Organism वा सुसायटी जीवित वस्तुका नाम है जोकि वाह्य हालातके प्रभावसे बदलती रहती है—संसारमें साधारण दृष्टिसे दो प्रकारकी वस्तु प्रतीत होती हैं—जड़ और चेतन जड़ वा निर्जीव अवस्था वह है जिसमें जीवनके निशान नहीं पाये जाते अथवा जिस वस्तुपर वाह्य प्रभाव कोई विशेष तबदीली पैदा नहीं करता—इसके विपरीत चेतन वा सजीवोंमें वाह्य हालातसे तत्काल ही तब्दीली पैदा हो जाती है—एक पत्थर है, उसके ऊपरसे आन्धी तूफान सब कुछ गुज़र जाता है, वह अपने स्थानसे नहीं हिलता—दूसरी ओर यदि आप एक पौधेको लीजिये, यदि उसको समय पर काफी खुराक नहीं मिलती—रोशनी नहीं मिलती तो वह तत्काल मुर्झा जाता है और अंतमें मर भी जाता है, नियमानुसार खुराक मिलने पर बढ़ता है और फल देता है।

(२) प्रत्येक मनुष्य व्यक्ति रूपसे ही तो (Organism) वा सजीव संस्था कहा जा सकता है, परन्तु प्रश्न यह है कि उसे समष्टि रूपसे कहां तक एक (Organism) सजीव कहा जा

सकता है। जिस दर्जा तक मनुष्योंका एक समुदाय कुटुम्ब कबीला वा जाति विशेष हालातसे एक ही तरहसे प्रेरित होते हैं, उसी दर्जेतक वह एक (Organism) वा सजीव कहलाते हैं। जब एक मनुष्य बिलकुल असभ्य अवस्थामें होता है, वह अकेला ही अपने लिये रोटी कमानेका प्रबन्ध करता है, किसी अन्य मनुष्यसे उसका सम्बन्ध नहीं होता, वह स्वयं ही एक Organism वा सजीव रूप है। उस समय वह पाशविक (हैवानी) अवस्थासे एक पद भी आगे नहीं है। जिस समय वह एक स्त्रीके साथ मिल कर एक जोड़ेकी आकृतिमें रहता है और दोनों मिलकर बच्चे पैदा करते हैं, तो उस समय उसका व्यक्तिरूप कुछ नहीं, प्रत्युत समष्टि रूपमें वह एक कुटुम्बके रूपमें रहते हैं और वह सारा कुटुम्ब उस समय (Organism) कहलाता है। भोजन प्राप्त होने पर सब पेट भर खाते हैं और न मिलने पर सभी भूखे रहते हैं। इससे अधिक जब कई एक कुटुम्ब इकट्ठे रहना शुरू कर देते हैं, इकट्ठे मिलकर आजीविका करते हैं या किसी दूसरे शत्रुका मुकाबला करते हैं तो उस समय वह कुटुम्ब एक (Organism) रूप बन जाता है और उसका सम्मिलित (साझा) इतिहास बनाया जा सकता है। जब इसी तरह कुछ कबीले (Tribes) इकट्ठे होकर अपनी लाभ हानिको एक समझ लेते हैं तो वह एक जाति वा कौमके रूपमें एक Organism बन जाते हैं। उस समय उनके अन्दर श्रेणियोंकी ऐसी दशा होती है, जैसे शरीरके अन्दर भिन्न भिन्न अङ्ग प्रत्यङ्गोंकी। इसीको वेदोंकी ऋचाओंमें वर्णन किया गया है कि ब्राह्मण मुखके समान हैं। क्षत्री भुजाओंके समान और वैश्य ऊरु रूप तथा शूद्र पावोंके समान हैं। इसी भावको प्राचीन रोमोंकी एक गाथामें वर्णन किया गया है कि जिस हाथ पाँव और पेट

का दृष्टान्त देकर समाज वा सोसायटीकी एकता सिद्ध की गई है, वह जाति एक Organism होती है, इस तरह पर विचार के तौर पर समझ लो कि वह किसी शत्रुके साथ युद्धमें पराजित हो जाती है तो उसके समस्त व्यक्ति-दलपर दासता आजाती है, यदि इसी प्रकार उनमें मलीनता वा बुरे आचरणके कारण कोई व्याधि फैलती है, तोभी उसका प्रभाव उनपर समान रूपसे पड़ेगा। यदि उनके अन्दर ऐसा साहित्य वा उत्तम उत्तम पुस्तकें, जिनके अध्ययनसे मनुष्य श्रेष्ठाचारी बनता है, पढ़नेका नियम पाया जाता है तो वह सोसायटी वा समाज व्यक्ति रूपसे शिष्टा-चारी होगी और समष्टिरूपसे प्रत्येक अंशमें उन्नत होती जायगी। दुर्भिक्ष हो वा सुकाल हो, प्रत्येक व्यक्ति पर उसका समान प्रभाव पड़ेगा, यदि कोई मनुष्य अन्न जमा करके दूसरोंसे बचा लेगा तो उसको सदैव जीवनका भय रहेगा। उस समाज वा सोसायटीकी उन्नति वा अवनति साम्प्रदायक नियमाधीन हो जाती है।

(४) जिस समय कुनबेसे कबीला और कबीलोंसे कौम को हालतमें परिवर्तन होता है तो सामाजिक उन्नति दो प्रकार के भिन्न नियमोंके अधीन हो सकती है—एक तो सांग्रामिक (जंगी) नियम है—इसका भाव यह है कि समाज समष्टि रूपसे दूसरोंके साथ युद्ध होनेपर आपसमें सहयोग करती है। उनका नेता या लीडर वा राजा दूसरेके साथ युद्ध करनेमें अपनी बड़ाई समझता है। सब लोग उसकी आज्ञा पालन करते हैं, और उससे उनको बड़ाई मिलती है। ऐसी अवस्थामें प्रत्येक मनुष्यका स्वार्थ सोसायटीकी समष्टिरूप उन्नतिमें होता है। उस सोसायटीमें मनुष्योंके इस संयोगका सम्बन्ध बहुत मजबूत होता है। यूरोपकी समस्त जातियोंकी जातीयता इस नियमपर

है। इङ्गलैंड, जर्मनी और फ्रांसमें भिन्न भिन्न जातियां एक दूसरेके साथ सदैव युद्ध किया करती थीं। उनके अन्दर जातिगौरवाभिमान बहुत अधिक था। जब एकके अधीन होकर वह उन्नत अवस्थामें आगये तो अन्य अन्य कौमोंके साथ उन्होंने युद्ध करना अपना एकमात्र धर्म बना लिया। इसलिये उनका जातीय भाव उन्नति करनेके रूपमें बदल गया। अरबकी जातियां, उनका धार्मिक जोश तथा उनका इतिहास एक खास ढंगका है। दूसरा प्रकार सामाजिक उन्नतिका वह है, जिसमें प्रत्येक मनुष्य वा जन-समुदाय अपना ही लाभ अपना लक्ष्य समझता है और उसके अपने फायदेमें सारी सोसायटीका फायदा होता है। वर्णों और जातियोंका विभाग उक्त नियमोंके ही आधार पर किया गया है। प्रत्येक मनुष्य अपने आपको खास कर्त्तव्य के योग्य पाता है। वह उन कर्तव्योंको अपने ऊपर लेकर खास वर्णमें सम्मिलित होता है, इससे वह अपना फायदा करता है और सोसायटीका भी भला होता है। एक जुलाहा कपड़ा बुनता है, दूसरा हथियार बनाता है और कृषि करता है। सब प्रकारके लोग अपने लिये फायदा करते हैं और साथ ही जिस सुसायटीमें वह रहते हैं, उसकी भी उन्नति करते हैं। ऐसी सोसायटीमें जातीयताका भाव प्रबल नहीं हो सकता और न उनके अन्दर इस किस्मकी ही प्रीति पाई जाती है, जिसके आधार पर वह दूसरी जातियोंसे घृणा करे। भारतवर्षकी सोसायटी बहुत कालसे इस दूसरे नियम पर बनाई गई है, इसलिये उनके अन्दर दूसरोंसे नफरतका भाव बहुत कम पाया जाता है।

(५) साधारणतया यह कहा जाता है कि प्राचीन आर्य्योंको इतिहासका प्रेम न था, इसलिये कोई ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं मिलते। मैं इसे असत्य समझता हूं। जिस भांतिकी मौजूदा

यूरोपीय जातियोंके इतिहास पाये जाते हैं, उस ढंगके प्राचीन भारतका कोई इतिहास हो ही नहीं सकता था। भारतकी सामाजिक संस्था किसी समयमें भी जंगी सहयोगपर अवलम्बित न थी। इस लिये उनके अंदर जातीयताका प्रबल भाव कभी मौजूद ही न था। तमाम सोसायटी एक खास किस्मके वर्णाश्रमके सूत्रमें बंधी थी। मगर इसके अतिरिक्त वह बिलकुल स्वतन्त्र थी। साधारण तौरपर न केवल नगर अपने प्रबन्धमें आजाद थे; वरन प्रत्येक ग्राम अपना भिन्न भिन्न इन्तजाम करता था। प्राचीन यूरोपमें रोमका राज्य जगत् विस्तृत था। परन्तु चिरकाल तक रोम एक नगर ही था जोकि एक जातिके रूपसे ही अपना राज्य बढ़ाता जाता था। स्पार्टा और एथंज़ भी अलग अलग नगर थे। जिन्होंने अपने अपने भिन्न राज्य स्थापित किये थे। इसी तरह भारतीय राजा केवल हस्तिनापुरमें ही अपना राज्य किया करते थे। जब स्वयम्बरके पश्चात् पाण्डव लौटे और कौरवोंसे उनकी सन्धि हो गई तो उन्होंने एक नया शहर इन्द्रप्रस्थ बसाकर वहां अपनी राजधानी स्थापित की। जब राजसूय यज्ञ किया तो अर्जुन भीमादिक चारों दिशाओंमें गये और अन्य नगरोंके राजाओंसे भेंट लेकर लौट आये। मगधका राजा जरासिंध था, जिसे कृष्ण परास्त करना चाहते थे। भीम अर्जुन और कृष्ण बिना किसी सेनाके वहां चले गये * और युद्ध करके उसे मार डाला।

* चित्तमें प्रतिहिंसाका भाव रहते हुए भी शत्रु के घर बिना शस्त्रके चला जाना उस समयकी धार्मिक परिस्थितिका अच्छा परिचय देता है, जरासिंधने अपने शत्रुओंसे बड़ा प्रेम व्यवहार किया और अपने घरमें स्थान दिया। धन्य है अतिथि सेवा !!! आधुनिक यूरोपकी ऐहिक विषयोंमें उत्पन्न, कुटिल नीतिज्ञ क्रूर जातियोंको इससे बहुत कुछ शिक्षा लेनी चाहिये।

यद्यपि सामाजिक रीतियोंके भावसे सोसायटी आपसमें एक तरहकी और समान थी, तथापि राजनैतिक भावसे देशके अंदर भिन्न भिन्न बहुधा रियासतें थीं, जिनका आपसमें कोई सम्बन्ध न था। इसी कारण सारे देशका कोई एक इतिहास हो नहीं सकता। केवल उन वंशोंके हालात इतिहासके तौरपर काममें आते हैं जो कि अपने राजाओंकी बड़ाई और योग्यतामें उन सबसे आगे बढ़ गये थे। देशमें सबसे बढ़े हुए राजाका पद सबसे अधिक आकर्षणीय था और जो कोई योग्य नेता किसी समयमें पैदा होता था, उसकी यही इच्छा हुआ करती थी कि वह उस मान और प्रतिष्ठाको उपलब्ध करे और इस प्रकार शक्तिशाली होकर महाराजाधिराज कहलाता था। यह सब मान प्रतिष्ठा नाम मात्र हुआ करती थी। इससे भिन्न भिन्न राज्योंके अंदर कोई विशेष एकता पैदा नहीं होती थी, परन्तु जब कोई नगर वा ग्राम उन्नति करता था तो दूसरे उसका अनुकरण स्वाभाविक ही करते थे। ऐसी अवस्थामें केवल उन्हीं राजाओंके समाचार इतिहास रूपसे स्मरणीय हो सकते हैं, जिन्होंने कि समाजमें कोई विशेष परिवर्तन किया हो। इसी भावसे प्रेरित हो रामायण तथा महाभारत प्राचीन आर्य्योंके प्रामाणिक इतिहास हैं।

(६) जातीय एकता पैदा करनेका एक ढंग तो सहवास होता है। एक छोटे रकबाके अंदर परस्पर मेल और एकताका भाव पैदा होना सरल होता है। यदि देशका रकबा बड़ा होता है तो लोग एक दूसरेसे दूर दूर रहनेपर भी परस्पर मेल नहीं रख सकते। जब किसी समयमें ब्राह्मणों और कायस्थोंके कुछ परिवार आर्य्यावर्तसे बंगालमें जाकर बसे तो दूरीके कारण भाषामें भी बहुतसा भेद हो गया और परस्पर मेल न रहनेसे जातिसे अलग हो गये। इसी प्रकार ब्राह्मण मद्रासमें गये और वहां भी अलग अलग

उनका अस्तित्व हो गया। अमरीका और इंगलैण्डमें थोड़ी बहुत जातीय एकता पायी जाती है, जिसका कारण यह है, कि वहां जलयानके सदैव चलनेके कारण फासलेकी दूरी कट गई है।

जिस समयमें सफर करनेका आसान तरीका न था, उस समय गवर्नमेण्ट ही देशको एक बना सकती थी। अशोकने अपना एक राज्य स्थापित करनेकी चेष्टा की और उसमें वह सफल हुआ, परन्तु उसके मर जानेपर भारतवर्ष फिर अपनी पुरानी अवस्थामें चला गया। जब मुसलमान हमला करनेके लिये हिन्दुस्थानमें आये तो उन्होंने खास खास शहरोंपर हमले किये थे और राजा लोग भी केवल उनकी ही रक्षा करना अपना धर्म समझते थे। शेष प्रदेशोंके साथ उनका कोई राजनैतिक सम्बन्ध न था, इसीलिये दुश्मन अपनी सारी सेना लिये राजधानीकी ओर आजाते थे और सारे प्रदेशमें कहीं भी कोई उनकी प्रतियोगिता (मुखालफत) न करता था। किसी एक राज्यका न होना ही उस राज्यकी बड़ी निर्बलता थी, जिससे कि उनके शत्रुओंको लाभ पहुंचता था। मुसलमानोंके राज तक भी हम वालिये कनौज, वालिये अजमेर आदिक उपाधिधारी राजा सुनते हैं, इससे यही प्रतीत होता है कि वह राजे इन शहरोंके ऊपर अपना राज्य करते थे, शेष प्रदेश राजनैतिक भावसे नितान्त स्वतन्त्र होता था। जिस समय शहाबुद्दीन गोरी देहलीको जीतकर अपने एक दास कुतबुद्दीनको वहांका राजा बनाकर छोड़ गया, तो वास्तवमें केवल देहली शहरका ही राज्य मुसलमानोंके अधिकारमें चला गया था, इसके साथ साथ यह जन श्रुति थी कि देहलीका ईश्वर जगदीश्वरका रुतबा रखता है। मुसलमान हाकिमोंके कई वंश, एकके बाद दूसरा, भारत पर शासन करते रहे और जब कभी कोई सैनिक बादशाहको देहलीके तख़्तसे उतारकर उसपर अधिकार कर लेता था तो वही शहंशाह

...ने लगता था। तुगलक वंशके समयमें इब्न बतोता देहलीमें आया था, उसने अपनी यात्रापत्रीमें (सफरनामा) में लिखा है कि देहलीकी शहरसे कुछ मीलकी दूरीपर कोई बादशाहके शासनका नाम ... न जानता था। ऐसी दशामें भारतका एक इतिहास ... सकता है? जो पुस्तकें साधारणतया भारतका इतिहास कह कर विद्यार्थियोंको पढ़ायी जाती हैं, वह भारत-वासियोंके जीवनसे किंचन्मात्र भी सम्बन्ध नहीं रखती हैं, वे ... विदेशी लोगोंके आक्रमण और शूरवीरताओंकी कथायें है, और जन समूहसे उनका कोई सम्पर्क नहीं हैं। इन आक्रमणोंके अन्दर सदियों तक यदि लोगोंके जीवनका कोई चिन्ह मिलता है तो केवल इतना ही कि लोगोंको सदैव जान मालका भय बना रहता था और अशांति थी। ऐसी अवस्थामें लोग अपने घरोंको त्यागकर दूर दूर देशोंको चले गये और अपने देश और पूर्वजोंको याद रखनेके लिये भिन्न भिन्न जातियाँ स्थापित कीं। इसी प्रकार यही जातियोंका रिवाज उनको एक दूसरेको सहाय-तामें लाभदायक हुआ। हिन्दू जातिके अन्दर लाखों जातियोंका कायम हो जाना उस समयके इतिहासका द्योतक है और यही सदियोंके इतिहासकी एक कुञ्जी है।

(७) भारतको एक राजनैतिक संगठनमें लाकर एक राज्य बनानेवाला अकबर था। यदि हिन्दू भावसे उस समयके इति-हासका पाठ किया जाय तो अकबरका आचार कोई विशेष उच्च प्रतीत नहीं होता। उसने सारे भारतवर्षको एक संगठनमें लानेकी चेष्टा की। राजपूत जाति जो कि उस समय तक हिन्दुओंकी रक्षक थी, उसकी विरोधी हो गयी। प्रताप उनका शिरोमणि नेता था, उसे अकबरके क्रममें आना उचित न जँचा और जीवन पर्य्यन्त बराबर अपनी जानको जोखिममें रखता हुआ,

सहस्रों कष्ट सहता हुआ, उसके सामने डटा रहा। सच्चे राजपूत सब उसके साथ थे, यदि इन समस्त बातोंको राजनैतिक भावसे देखें तो बुद्धि चकित हो जाती है कि किस तरह एक अपठित पुरुष इतनी गूढ़ राजनीतिका जाननेवाला हो सकता है। अकबरने धार्मिक द्वेषको दूर करनेके लिये एक नया मत निकाला ताकि हिन्दुओंके दिलोंसे वह घृणा दूर हो जावे, जोकि उनके हृदयमें मुसलमानोंके प्रति उनके विजातीय आक्रमणकारी होनेके कारणसे थी। मुसलमानोंसे छूतछात करना कोई धार्मिक बात न थी। परन्तु यह एक राजनैतिक भाषा-उन हिन्दुओंके प्रति असहयोग था जोकि अपना धर्म त्याग कर दीन इसलाम को स्वीकार करके अपने भाइयों और जातिके शत्रु बन जाते थे। अलबेरूनीने अपनी विख्यात पुस्तक "इण्डिया" में जो उसने सन् १००० ईस्वीमें लिखी थी, इन घृणाके कारणोंको अच्छी तरह दरशाया है, कि किस तरह हिन्दू लोग मुसलमानोंके अत्याचारोंसे दुखी होकर दूर दूर पहाड़ोंके अन्दर भाग गये और इसी कारण वह उनकी छायासे भी घृणा करते थे। अकबरने साथ साथ यह भी यत्न किया था कि वह हिन्दुओंकी माननीय पुस्तकोंकी प्रतिष्ठा करे और इसी भावसे उसने उनके अनुवाद कराये। वह चाहता था कि इस तरह विद्वान और शास्त्रवेत्ता हिन्दू उसके सहायक बने रहें। जिस बातने उसका शासन समस्त देश पर दृढ़ किया वह उसका तरीका मालगुजारी था जिसे राजा*

* यद्यपि मुसलमान बादशाह तो बने, किन्तु प्रत्येक बादशाह हिन्दुओंकी बुद्धिमताका कायल था, यही कारण था कि अकबर जैसे कूट राजनीतिज्ञने हिन्दुओंको ऊँचे ऊँचे पद सौंपे, जिनमें टोडरमल, बीरबल तथा प्रसिद्ध संस्कृत कवि पण्डितराज श्रीजगन्नाथ आदि मुख्य थे। ईश्वरने स्वाभाविक ही इस जातिमें यह गुण भरा है।

टोडरमलने जो कि "चूनिया" के रहनेवाले एक क्षत्री वंशसे था, चलाया। टोडरमल अपने समयमें एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्रज्ञ विद्वान हो गुजरा है। इससे पूर्व मुसलमान राजाओंके पास कोई बड़ी सेना नहीं होती थी और जब कभी उनको रुपयोंकी आवश्यकता होती थी, वह किसी अमीर राजापर आक्रमण करके उससे सब धन लूट कर, या कर लगाकर ले लिया करते थे,— टोडरमलने करका एक नियमानुसार ढंग निकाला। प्रत्येक ग्राममें नम्बरदार नियत किये, जोकि लगान इकट्ठा करके सरकारी कोषमें जमा कराते थे, उनको फी सैकड़ा एकत्रित धनसे कुछ भाग मिला करता था। इस प्रकार राजकोषमें वार्षिक आय शुरू हुई और उससे एक नियत सेना रखनी आरंभ हुई और इसी प्रकार अन्य अन्य राज-सेवक रखे गये। एक राजनैतिक प्रणालीके बँधनेसे एक राज्यकी नींव बन्ध गई। जहाँगीर और शाहजहाँके समय तक एक राज्य चलता रहा। औरंगजेबने फिरसे धार्मिक आघात करने शुरू किये, जिससे हिन्दुओंके अन्दर वह धार्मिक जीवन पैदा हुआ जोकि महाराष्ट्र और पंजाबमें पोलीटिकल ताकत बन गया। यही सिलसिला मालगुजारीका बना बनाया बृटिश कम्पनीके हाथ आगया, जिससे भारतकी विजय उनके लिये बड़ी सुगम हो गई। अंग्रेजोंका पोलीटिकल शासन और भी दृढ़ हो गया, जब कि उन्होंने हर जगह अदालतें कायम कर दीं— विदेशी व्यापारियोंको इस तरह भारतका शासन लेते देख कर राजा लोग घबरा गये, और सबसे पहले १७८० में उन्होंने एका करके अंगरेजोंको भारतसे निकालनेका प्रयत्न किया। इस प्रयत्नमें नाना फरनवीस, हैदर अली, निजाम अली, महाराज देहला शामिल थे—

(८) अंगरेजी राज्यकी कामयाबी रेलवेसे बहुत सुदृढ़ हो

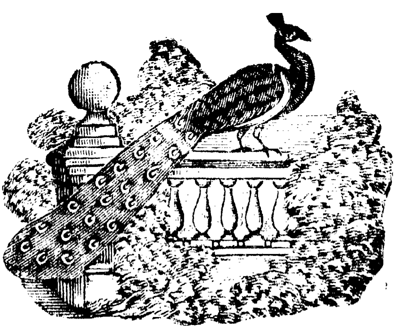
गई। सारे देशमें न केवल एक राज हो गया, प्रत्युत जिस रेलवे की सहायतासे राज्य स्थापित हुआ, उसने बारबरदारी आसान कर दी और देशके अन्दर आना जाना ज़ियादा होनेसे जातीय एकताका सम्बन्ध अधिक बढ़ता गया। इस कारण यह जरूरत हुई कि इस देशका एक इतिहास लिखा जावे। अब लोगोंका एक इतिहास (तवारीख) हो ही नहीं सकता था, क्योंकि कभी जातीय ऐक्य इतना मजबूत न हुआ था कि उसे एक संस्था (Organism) कहा जावे। इस कारण स्वाभाविक ही लिखने के लिये केवल उन लोगोंके वृत्तान्त लिख दिये गये जोकि चढ़कर आये और जिन्होंने भारतकी पोलिटिकल ताकत अपने हाथमें लेली। यह लोग भारतवासियोंसे इस प्रकार अलग रहे, जिस तरह पानीके ऊपर तेल तैरता है। इन दोनोंका आपसमें मिलाप नहीं, एकका हाल दूसरेका हाल नहीं कहा जा सकता। अँगरेज़ इतिहास लेखकोंने भी मुसलमान लेखकोंका ढंग स्वीकार किया और उसी प्रकारसे इतिहास लिखना आरम्भ किया।

मुसलमान तथा पाश्चात्य (यूरूपीय) जातियोंने इतिहाससे भाटकी भांतिसे काम लिये, जिससे कि लोगोंके अन्दर जोश भरनेका काम लिया जावे —पृथ्वीराजके साथ * चन्दवरदाई कवि था। शिवाजीके साथ भूषण कवि था। इसी प्रकार मुसलमान बादशाह अपने वृत्तान्त लिखनेके लिये भाट साथ रखा करते थे, जोकि उनके गुण गाया करते थे। इन सबका भाव एक ही है, वह लोग भारतवासियोंको एक फुटबालके समान समझते हैं, जो जड़ रूप हैं और ज्ञान रहित हैं और जिसका

* उक्त दोनों ही कवि बीररसके प्रसिद्ध कवि थे और योद्धा भी। चन्द्रबरदाईका 'पृथ्वीराज रासो' एक बड़ा उच्च कोटिका वीररस पूर्ण महाकाव्य है, भूषणके ग्रन्थ 'भूषण ग्रन्थावली' नामसे संगृहीत हैं।

व्यक्ति भावसे कोई रूप नहीं। इतिहास केवल उन लोगोंका है जो उसे लाते लगाते और शासन करते हैं। जिस जिस समय हिन्दुस्तानियोंके मुकाबलेमें उन्हें सफलता हुई, वहां उनके दिलमें उन्माद पैदा हुआ और जहां जरा कष्ट हुआ, वहां उनके प्रति घृणा और वैर भाव प्रगट किये।

गदरकी कहानियां अंगरेज बच्चोंको पढ़ाई जाती हैं। मैं लण्डनमें एक घरमें रहता था, उसमें एक लड़की थी जो स्कूलमें पढ़ने जाया करती थी। एक दिन वह आकर कहने लगी—आइन्दे मैं तुम्हारे साथ न बोला करूंगी। मैंने पूछा क्यों? कहने लगी तुमने हमारे विरुद्ध गदर किया था। मैंने उत्तर दिया, मेरा तो उस समय जन्म भी नहीं हुआ था। उसने कहा, तुम्हारे लोगोंने तो किया था।



भारतकी स्त्रियोंका इतिहास।

भारतके इतिहासमें स्त्रियोंका साक्षात् भाग बहुत थोड़ा है। कहीं कहीं हमें दृष्टान्त मिलते हैं कि स्त्रियोंने अमुक कार्य्यका बोझ मैदानमें आकर अपने ऊपर लिया और उसे बड़ी शूरवीरतासे निभाया। राजपूत स्त्रियां मर्दोंका लिबास पहनकर खड्ग हाथमें लिये कई बार रणभूमिमें गईं। मरहट्टोंमें अहिल्या बाईका शासन कार्य्य और विपत्तिके समय लक्ष्मी बाई रानी झांसीका काम विशेष प्रशंसनीय है। परन्तु साधारण तौरपर अन्य देशोंकी भांति भारतीय स्त्रियोंका प्रभाव इतिहास और जनतापर अप्रत्यक्ष रूपसे ही हुआ है। भारतकी स्त्रियोंने अपने दायित्त्वको पूर्ण करनेमें कभी आगा पीछा नहीं किया।

इस देशमें यह भाव प्रबल रूपसे रहा है कि पति पत्नी दोनों मिलकर एक ही संस्था हैं। कोई यज्ञ वा संस्कार बिना स्त्रीकी उपस्थितिके धर्म्म-कार्य्य नहीं कहलाता। विवाह करने या अपने लिये वर ढूंढनेमें लड़कीके लिये माता पिताकी सहायता आवश्यक समझी गई है। परन्तु जैसे स्वयंबर आदि दूसरे तरीकोंसे पता लगता है, कि वरके आखिरी पसंद करनेमें लड़कीका विशेष भाग होता था। लेकिन जब एक बार विवाह हो गया तो जीवन पर्य्यन्त सम्बन्ध दृढ़ हो गया और लड़कीके लिये किसी दूसरे पुरुषसे प्रेम भाव प्रकट करनेकी आज्ञा न रही। इसमें थोड़ासा अन्याय तो प्रतीत होता है, कि जब लड़कोंके लिये पुनर्विवाह करनेकी आज्ञा है तो लड़कीके लिये क्यों रोक डाली जावे, परन्तु कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि ईश्वरने स्त्रियोंको पतिव्रता अर्थात् एक ही से प्रेम करनेवाली बनाया है। पुरुष बहुभार्य्यत्व भावको प्रकट करता है, एकको छोड़ दूसरेके साथ प्रेम कर लेता है। संभव है

कि मर्दोंकी प्रकृति बिगड़कर ऐसी बन गई हो। मगर जिस अवस्थामें हम हैं, हम ऐसा देखते हैं, कि एक ही से प्रेम कोई बनाई हुई बात नहीं है। एक युवती कन्याकी प्रकृतिमें ही यह नहीं है कि वह एकके संग प्रेम करके फिर उसे मिलावट करके अपवित्र करें। भारतीय स्त्री जिसके साथ प्रेम करेगी, दिल और जान अर्पण कर देगी और जब एक पुरुषके संग प्रेम किया तो फिर उससे बदलना क्या, जीवन और मृत्यु उससे संगठित हो गई। वह प्रेम* दिलसे होना चाहिये उनका विवाह धार्मिक और शुद्ध होना चाहिये। इस समय जब कि पुरुष एक स्त्री मर जानेपर एक युवतीसे पुनः विवाह करना चाहता है, यह धर्मके उतना ही विरुद्ध है, जितना कि एक विधवा स्त्रीको एक युवकसे विवाह करना। कारण क्या, जिस प्रकार एक युवक अपनेसे उमरमें बहुत बड़ी विधवा स्त्रीसे विवाह करनेसे घबराता है, उसी प्रकार एक युवती एक वयोवृद्ध पत्नीरहित पुरुषसे विवाह करनेमें घृणा करती है। लोगोंके लिये इस प्रकारकी शादी रुपया जायदाद वा जेवर देखकर भले ही हो जावे। परन्तु न तो इसमें धर्म होता है और न पवित्रता आ सकती है। यदि रण्डुवे पुरुष विवाह करने

* यहां हम भारतीय आर्ष ग्रन्थोंसे प्रेमकी परिभाषा जरा स्पष्ट कर देना चाहते हैं:—भारतीय सदासे प्रेमको बाह्य पदार्थ नहीं मानते, अर्थात् जो चमक और रंगको देख प्रेमसा प्रतीत होने लगता है, वह काम है, जो कि विषयजनित है, वासनापूर्ण होनेपर उसका कहीं पता भी नहीं लगता। हां प्रेम! ओफ!! उद्भ्रान्त प्रेम!!! कितना मीठा शब्द है। इसका सम्बन्ध मनुष्य हृदयसे है, चाहे नीरस योरुपियन जो कि मस्तिष्क को ही प्रधान मानते हैं, हमारी इस युक्तिको अपने विज्ञान (साइन्स) की अग्निसे जलानेकी चेष्टा करें। किन्तु हम बताये देते हैं कि जिस समय संसार हृदयहीन हो जायगा उस दिन श्मशान और उसमें कोई अन्तर न रहेगा।

की इच्छा रखते हों तो उन्हें अपने लिये कोई न कोई विधवा ही ढूँढ़नी चाहिये। हमको कहा जाता है कि सतीकी रिवाज बड़ी भयानक थी और वह जाति वा समाज किस तरहकी हौलनाक होगी, जिसने इस रीतिको जारी किया। यह उन लोगोंकी बातें हैं, जिन्होंने प्रेम-भावकी पवित्रताको अनुभव ही नहीं किया और जो इस शरीरको ही सब कुछ समझते हैं। इसमें संदेह नहीं कि पिछले समयमें सतीकी रीतिका अनुचित व्यवहार किया जाता था। वह इस तरह कि एक विधवा स्त्रीको मजबूर किया जाता था कि वह अपने मृत पतिके साथ अपने आपको दाह करके मृत्यु प्राप्त करे, जब कि वह अपने जीवनको प्यार करती हुई जीवित रहना चाहती थी। यह अत्यन्त अत्याचार था, और नितान्त पतित सोसायटीमें हो सकता है। परन्तु वह सोसायटी निहायत ही पवित्र और उच्च है, जिसमें कि युवती स्त्री अपने पतिके वियोगमें अपने आपको जीवित नहीं रख सकती। प्रत्येक रीति चाहे वह कितनी ही उच्च और पवित्र हो बिगड़नेका डर रखती है और उसका बुरा बर्ताव हो सकता है। परन्तु इससे रीतिकी पवित्रतापर दोष नहीं आ सकता। पतित पुरुष कई शादियां करते थे, और उनके मरनेपर उनके सम्बन्धी सब स्त्रियोंको मृत पतिके साथ जल मरनेके लिये विवश करते थे। ऐसी स्त्रियोंको ज़िन्दा जलाना, जिनके अंदर प्रेमका अंश मात्र भी नहीं है, परम घृणित मनुष्य वध है। इसी प्रकार हम गाथाओंमें सुनते हैं कि जब एक युवक और युवती स्त्री आपसमें प्रेम करते थे, तो उनका प्रेम, जीवन क्या मृत्यु पर्य्यन्त स्थिर रहता था।

राजपूतानाके एक राजाका सरदार गोविन्द राय था। उसकी स्त्री उससे बहुत प्रेम किया करती थी। एक दिन वह रानीके पास बैठी थी। क्या देखती है कि कई मनुष्य मृतक शरीरको

अर्थीको ले जा रहे हैं, उनके साथ ही एक युवती स्त्री रोती पीटती सिरपर धूल उड़ाती अपने नवयुवक पतिके साथ सती होनेको जा रही है। गोविन्द रायने देखकर आश्चर्य्यसे यह कहा कि यह स्त्री योंही इतना रोती है, इसका अपने पतिसे सच्चा प्रेम नहीं है। रानीने कहा, क्यों और क्या करे? सती होने जाती है। वह बोला कि यदि इसके अन्दर सच्चा प्रेम है तो यह जीवित कैसे है? रानीने यह बात अपने दिलमें रख ली। एक दिन जब राजा और उसके सरदार शिकारको गये थे तो एक सिपाहीने दौड़ते हुए आकर खबर दी कि गोविन्द रायको शेरने मार डाला। गोविन्द रायकी स्त्रीने सुना और सुनते ही प्राण त्याग दिये। जब गोविन्द रायको इस बातका ज्ञान हुआ तो उसने भी जीवित रहना उचित न समझा और अपनी स्त्रीका अनुसरण किया। यह बात तो कदाचित् दूरके समय की समझी जावे। अभीका जिक्र है। भाई बालमुकुन्दने बी० ए० की परीक्षा दी थी कि उसका विवाह हुआ। नव-विवाहिताका नाम रामरखी था। दोनोंका आपसमें अगाध प्रेम था। एक वर्षके अंदर ही बालमुकुन्द एक सरकारी मुकदमेमें पकड़ा गया। उस दिनसे लड़कीने भी कैदीका जीवन व्यतीत करना आरम्भ कर दिया। जमीनपर सोती थी, मैले कपड़े पहनती और इतना ही खाना खाती कि जीवन कायम रहे। देहलीके मुकदमेमें केवल वादा मुआफ (Approver) के बयानपर उसे फांसीकी सजा दी गई। बालमुकुंदने इसपर अपने पत्रमें लिखा, कि मुझे भाई मतीदासकी आत्मा अपनी ओर बुलाती है। भाई मतीदासजीको हुए कई शताब्दियाँ गुजर गईं, आरेसे सिरसे लेकर पांवों तक इस नगरमें चिराये गये थे। जिस दिन यह खबर मिली कि बालमुकुन्दको फाँसी लटकाया गया, उसी दिन रामरखीने अपने प्राण दे दिये। यदि इस देशमें, ऐसी पतित

अवस्थामें भी रामरखी जैसी देवियाँ पैदा हो सकती हैं, तो प्राचीन समयकी बातें हमें अधिक सम्मान भावसे देखनी चाहियें।

यह भाव स्वाभाविक ही था—ऐसे वृत्तान्त भी थे, जब कि पतिके वंश और नामका संसारमें स्थिर रखना जरूरी होता था। ऐसी अवस्थामें युवती स्त्रीको सतीसे भी अधिक बलि देनी पड़ती थी। जो अत्याचारी और दुष्ट पुरुष नियोगके अंदर व्यभिचार समझता है, उसका मस्तिष्क इतना गंदा हो गया है, कि वह आर्य्य स्त्रियोंकी पवित्रताको उसमें जगह नहीं दे सकता। वह युवती स्त्री पतिके नाममें अपने दिलपर पत्थर रख लेती थी, अपने सतीत्व का भाव भी दो मिनिटके लिये भुला देती थी, ताकि वह अपने पतिका वंश स्थिर रख सके। संयोग करते समय उसका मन अपने विवाहित पतिकी ओर होता था न कि भोग विलासमें। उसकी वास्तविक प्रसन्नता विषय भोग रसमें न होती थी, प्रत्युत इसमें कि वह इस क्रियासे अपने पतिका नामलेवा पैदा कर रही है। आजकलके पतित पुरुषों तथा स्त्रियोंके लिये नियोग निस्संदेह उसी प्रकार पापके समान है, जिस प्रकार सती होना अत्यन्त घोर अत्याचार है।

भारतकी स्त्रियोंका इतिहास यदि हमें मनन करना हो तो हम इतिहासके तमाम कार्य्य-क्षेत्रके साथ अंदरकी ओर एक दूसरी लहरकी तरफ ध्यान देनेसे कर सकते हैं। ऊपरकी लहर एक कार्य्यकी है, जिसमें भाग लेनेवाले प्रायः पुरुष ही हुए हैं। परन्तु इस लहरको पैदा करनेवाली स्त्रियां हुई हैं। जिनकी कथाओं और और भावोंमें एक दूसरा गहरा इतिहास दिखाई देता है। इस इतिहासके लिये बहुत वृत्तान्तोंके वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं है, परन्तु समय समय की स्त्रियोंके जीवन, आदर्श और विचारोंमें उस समयके इतिहासका मूल पाया जाता है। उपनिषदोंके समय

की स्त्रियाँ ऐसी हैं, कि वे जीवन-मुक्त राजा जनकसे भी अधिक आदर्श रखती हैं। बाज स्त्रियां ऐसी हैं जो अपने आदर्शको रखती हुई सोसायटीको जीवित रखतीं और चलाती हैं। यह जनश्रुति है कि इस संसारमें बहुधा लोग पापी होते हैं और यह लोक केवल थोड़े धर्मात्माओंके आश्रयपर स्थिर हैं। वह अपने जीवनको बीज रूप व्यतीत करते हैं, इन तमाम घटनाओंके अन्दर भारतकी स्त्रियोंका विशेष भाग रहा है। इस पुस्तकमें समय समयकी स्त्रियोंके आदर्श दिखाकर यह सिद्ध करनेकी चेष्टा की गई है, कि भारतवर्षके इतिहासमें स्त्रियोंका क्या स्थान था।

इस देशका नाम राजा भरतसे हुआ है। राजा भरतकी उच्चता एक अद्वितीय स्त्रीके कारणसे है जो कि राजा भरतकी माता थी। शकुन्तलाको कवि कालिदासने अमर कर दिया है। शकुन्तला एक ऋषिकी कन्या थी और बनमें रहती थी। जब वह अपने पूर्ण यौवनमें थी तो एक दिन राजा दुष्यन्त शिकार खेलते हुए उधर जा निकले। ऋषि-आश्रम फूलदार वृक्षोंसे सुसज्जित था। राजा उसे सुन्दर और रमणीक समझ कर अन्दर चले गये। अन्दरसे शकुन्तला निकली। राजा उसे देख कर मोहित हो गये और उससे विवाहकी याचना की। शकुन्तला भी यौवन सम्पन्न राजाको देख कर विवाहपर राजी हो गई। वहां थोड़ी देर रह कर राजा दुष्यन्त लौट गया। जब ऋषि आये तब शकुन्तलाने सब समाचार सुनाया। ऋषि बहुत प्रसन्न हुए। इस विवाहसे राजा भरत पैदा हुआ। उसने उसी ऋषि आश्रममें रह कर बाल्यावस्था गुजारी। बड़ा होनेपर शकुन्तला उसे लेकर राजा दुष्यन्तकी राजधानीकी ओर रवाना हुई। दुष्यन्तके दरबारमें जाकर उसने राजासे कहा कि हे राजन्! यह आपका पुत्र अब युवावस्थाको प्राप्त हो गया है, इसे संभालिये और अपना

वारिस बनाइये। राजा दुष्यन्त बोला,—न मैं तुमको पहचानता हूं और न इसे जानता हूं। शकुन्तलाकी आंखें--इस उत्तरको सुन कर क्रोधसे रक्तपूर्ण हो गईं। उसने स्मरण कराया, कि तुम बनमें ऋषि आश्रमपर गये थे और मुझसे प्रण किया था। राजा बोला, मुझे कुछ स्मरण नहीं। शकुन्तलाने क्रोध भरी बातें करते हुए कहा कि हे राजन्! तुम पाप करते हो। क्षत्री होकर इतने पतित हो गये हो!!! वह वापस लौटने लगी, कि इतनेमें एक आवाज आई, कि शकुन्तला सच्ची है। हे राजन्! तू इसे ग्रहण कर। राजा उठा और उसे अपने गलेसे लगा लिया। शकुन्तलासे कहने लगा कि मैंने जान बूझकर ऐसा किया है, यदि मैं ऐसे ही तुमको रख लेता तो यह लोग दिलमें न मालूम क्या क्या खयाल करते। अब इन सबने देख लिया है और साक्षी दी है। अब तुम मेरी प्राणेश्वरी हो और भारत राज्यकी गद्दीकी स्वामिनी हो।



सावित्री

सावित्रीका पातिव्रत धर्म दृष्टान्त रूप है। पातिव्रतकी बड़ी महिमा कही गई है। महाभारतमें एक योगीकी कथा आती है, कि वह एक वृक्षके नीचे खड़ा था। ऊपरसे एक पक्षीने उसपर बीट कर दी। योगीने क्रोधसे ऊपरको ओर दृष्टि डाली। उसकी आंखोंका तेज इतना था कि वह पक्षी जलकर नीचे आ पड़ा। वही योगी एक ग्राममें भिक्षाके लिये किसी गृहस्थके घरपर गया। गृहपत्नी अपने बीमार पतिकी सेवा कर रही थी। भिक्षा लानेमें उसे जरा देर हो गई। जब वह आई तो योगी क्रोध भरी आँखोंसे उसकी ओर देखने लगा। सती बोली "महाराज! यहां कोई चील कौवे नहीं हैं, जो जल जायँगे।" सावित्री सबसे बड़ी है। युधिष्ठिरने मारकण्डेय ऋषिसे प्रश्न किया, कि भगवान्! क्या द्रौपदीके अतिरिक्त कोई और भी स्त्री हुई है, जिसमें पातिव्रत धर्म ऐसे प्रबल रूपमें पाया जाता हो। ऋषिने उत्तर दिया, हां वह सावित्री हुई है। उसका वृत्तान्त इस प्रकार है। मद्रास देशका एक राजा अश्वपति नाम हो गुजरा है। सावित्री उसकी पुत्री थी। वह परम रूपवती थी। जब युवावस्थाको प्राप्त हुई तो राजा उसे संग लेकर वरकी तालाशमें निकला। फिरते फिरते एक बनमें पहुँचा। बनोंमें राजा तपस्या करनेके लिये रहा करते थे और इसी निमित्त वहां एक देवव्रत सैन नामी राजा रहता था। राजाने उसकी कुटिके पास जाकर अपना रथ खड़ा किया। उसके लड़के सत्यवान्को देखकर सावित्रीने उसे अपना वर वरण कर लिया। वहां निश्चय करके घरको लौट आये। राजाने ज्योतिषियोंको बुलाकर उस लड़केकी बात पूछी। ज्योतिषियोंने कहा—"राजन्! और तो सब कुछ ठीक है परन्तु

वर एक सालके अन्दर मर जायगा।" बाप सावित्रीको समझाने लगा कि वह अपना संकल्प बदल दे। सावित्री बोली, बस एकबार जिससे प्रेम कर लिया फिर बदलना कैसा। विवाह हो गया। सावित्री वनमें जाकर कुटियाके अन्दर रहने लगी। सत्यवान् लकड़ी लानेके लिये वनमें जाया करता था। सावित्री बराबर नित्य प्रति दिन गिना करती थी। जब समय पूरा हो गया और सत्यवान् बाहर जाने लगा तो सावित्री भी संग जानेके लिये तैयार हो गई। वनमें सत्यवान् उससे कहने लगा कि मेरा सिर दर्द करता है। वह उसे लेकर बैठ गई। उसका सिर अपनी गोदीमें रख लिया। वह मूर्च्छित होने लगा और मृत्युको प्राप्त हो गया। यमके दूत आये कि उसे ले जायें, पर वे सावित्रीका तप देखकर डर गये। आगे बढ़नेका उन्हें साहस न हुआ। वे वापस चले गये और यमराजसे जाकर बोले कि वह सावित्रीके पास नहीं जा सकते थे। यमराज आप आये। उनको भी साहस न हुआ कि पास जा सकें। दूरसे सावित्रीको समझाया कि तेरा पति अब मर चुका है, उसका समय गुजर गया है, उसे छोड़ देना उचित है। सावित्रीने छोड़ दिया। यमराज उसे लेकर चल पड़े। सावित्री साथ हो चल पड़ी। यमराज घबरा गये और उसे फिर समझाना शुरू किया कि वापस जाओ। जो कुछ मांगना हो मांग लो। सावित्री वर मांगती रही परन्तु साथ न छोड़ा। यमराजने कहा, तुम क्यों पीछे आती हो, क्या लाभ है? सावित्री बोली, मैं सत्यवान्को छोड़कर किधर जाऊँगी। स्त्री अर्द्धाङ्गिनी होती है, पतिसे किस प्रकार पृथक् हो सकती है? इस प्रकार बहुत प्रश्नोत्तर हुए और यमराज अत्यन्त प्रसन्न हुए और सत्यवान्को सावित्रीके हवाले कर दिया। सावित्रीका पातिव्रत सबसे बड़ा है।

सुलभा।

महाभारतके शान्ति पर्वमें लिखा है कि महाराज युधिष्ठिर भीष्म पितामहसे पूछते हैं कि महाराज गृहस्थाश्रमका काम न छोड़ कर किसने अबतक मोक्ष प्राप्त की है। उसका वृत्तान्त मुझे कहिये। भीष्म उत्तर देते हैं, कि प्राचीन समयमें विदेह मुक्त जनक नामका एक मिथलाका राजा था। वह वेदज्ञ और ब्रह्म-विद्याका ज्ञाता था। यद्यपि वह राज-कार्य्यमें प्रवृत्त रहता था, तथापि वह पूर्ण वैरागी था। इन्द्रिय दमन करके वह इस लोकमें शासन करता था। उस सत्ययुगके समयमें सुलभा नामकी एक संन्यासिन स्त्री योगकी कुल क्रियायें तथा साधन पूर्ण करके संसारमें विचरती थी। उसने कतिपय महात्माओंसे राजा जनककी प्रशंसा सुनी थी और उसको परीक्षा करनेके निमित्त राजा जनकसे मिलनेकी उसे बड़ी आकांक्षा थी। अतः उसने संन्यासीके वस्त्र उतार दिये और परम सुन्दरी रमणीका रूप धारण किया और जनकपुरीको चल पड़ी तथा राजा जनकके दर्बारमें आकर उपस्थित हुई। राजाने उसे कोमलवदना सुन्दरी जानकर प्रश्न किया कि तू कौन है, किसकी है? और कहांसे आई है? जनकने उसका आदर सत्कार किया, चरण धोकर उसे अत्यन्त स्वादिष्ट भोजन दिया। जनकके आतिथ्य सत्कारसे प्रसन्न हो, उसने जनककी परीक्षा लेनी चाही कि वह किस तरह राजकार्य्यमें निमग्न वैरागी हो सकता है। महाराज जनक बोले "ऐ पूज्या देवी! तू क्या क्रीड़ा करती है? किसकी है? कहांसे आई है और यहांसे किधरको जायेगी? बिना प्रश्न किये किसीको दूसरेकी विद्या जाति तथा आयुका ज्ञान नहीं हो सकता। सुन, मैं राजमदसे विमुक्त हूं, मैं तुझसे वैराग्यके विषयपर वार्तालाभ करना चाहता

हूं। कोई और मनुष्य नहीं जो इस विषय पर तुझसे प्रश्नोत्तर कर सके। मैं परम बुद्धिमान पंचशाखाका शिष्य हूं। वे पराशर वंशके संन्यासी थे। मेरे सब सन्देह उन्होंने दूर कर दिये। मैं योग और सांख्यमें पारंगत हूं और मोक्षके साधनों तथा कर्म उपासना ज्ञानसे अवगत हूं। महाराज पंचशाखाने वर्षा ऋतुमें शास्त्र रीति अनुसार चार मासतक मेरे गृहपर विश्राम किया। उस सांख्य शास्त्र वेत्ताने मुझे योग विद्याकी शिक्षा दी, परन्तु राज्य-त्यागकी आज्ञा नहीं दी। मोक्षके लिये निष्काम कर्म करना लिखा है। ज्ञानसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। योगसे ज्ञान प्राप्त होता है और ज्ञानसे ही सुख दुःखसे मुक्ति होती है। मुझे वही ज्ञान मिला है। इस सांसारिक जीवनसे मुझे किसी प्रकारका सम्बन्ध नहीं। जिस तरह गीली जमीनमें बोया हुआ दाना जम पड़ता है; उसी प्रकार मनुष्यके कर्मकी उत्पत्ति है। भूने हुए बीजसे वृक्षकी उत्पत्ति नहीं हो सकती, इसी प्रकार ज्ञानके पैदा होने पर जन्मका भेद छिप जाता है। ज्ञानसे इन्द्रियोंके विषयमें मेरा प्रेम नहीं रहा। न मुझमें अपनी स्त्रीके लिये विशेष प्रेम है और न शत्रुके लिये वैर भाव है। मैं दोनोंसे पृथक हूं। ईर्षा द्वेषसे रहित हूं। मेरी दृष्टिमें वह दोनों पुरुष एक जैसे हैं, जिनमेंसे एक तो मेरी दाहिनी भुजामें चन्दनका लेप करता है और दूसरा बाईं भुजाको आघात करता है। मुझे मिट्टीका ढेला और स्वर्णकी ईंटे एक समान प्रतीत होती हैं—मैं हर प्रकारके राग-द्वेषसे रहित हूं, यद्यपि राज्य-कार्य्य करता हूं। इसी कारण मुझे साधु जनोंपर विशेषता है। यदि मनुष्य घरमें रहकर यम नियमका साधन करे तो वह संन्यासीके बराबर है। यदि संन्यासीके मनमें इच्छा, द्वेष, मान, प्रमाद और राग मौजूद है तो वह गृहस्थ है, अगर किसीने मोक्ष प्राप्त किया तो वह साधु हो गया—मोक्ष

न तखंड में है न राजश्रृङ्गमें, न दरिद्रतामें ही है और न सम्पत्ति में। केवल साधुओंको क्या मोक्ष मिले और राजाओंको न मिले? राजा होते हुए भी मनुष्य अपने आदर्शको साफ रख सकता है। गेरुवे वस्त्र, सिर मुंडवाना, कमण्डल हाथमें रखना, बाह्य चिन्ह हैं—यह मोक्षके साधन नहीं हैं। इनके होनेपर भी मोक्षके लिये ज्ञानकी आवश्यकता रहती है, इस कारण ये समस्त अनावश्यक हैं। यद्यपि बाह्य दृष्टिसे मैं धर्म्म, कर्म, धन, ऐश्वर्य्य तथा गृहस्थके कार्य्य को करता रहता हूं और लोग इनको बन्धनका साधन समझते हैं, परन्तु मैंने वैराग्यकी खड्ग से राज्य दौलतके बन्धनको काट दिया है।"

फिर जनकने उससे अपने प्रश्न किये। तू किसके इशारेसे मेरे दिलमें दाखिल हुई है? अगर तू मेरे गोत्र की है तो दूसरी बुराई पैदा होती है। अगर तेरा पति जीवित है तो और बुराई है, तू मुझको स्पर्श मत कर। जो कुछ तूने कहा है। वह हानि पैदा करनेवाला है। तेरे मनकी शान्ति जाती रहेगी। अपना बड़प्पन दिखलानेकी इच्छासे तुझमें बड़ी औरतोंके चिन्ह आ गये। विजयकी इच्छा रखती हुई न केवल मुझको, परन्तु इस सकल ब्राह्मण मण्डलीको परास्त करनेका संकल्प करके तू आई है। तू अपनी इच्छासे यहां आई हैं या किसी राजाकी भेजी हुई है? तेरे लिये उचित नहीं कि अपना मनोरथ मुझसे छिपाये। तू मुझे बता कि तू जन्मसे कौन हैं? तेरी विद्या और स्वभाव कैसा है? और इस राजगृहमें आनेका क्या कारण है? यद्यपि राजाने अनुचित और मन्द वचन कहे? तथापि सुलभाका मन किंचित्मात्र भी विषादको प्राप्त न हुआ। राजाने जब बात समाप्तकी तब सुलभाने अत्यन्त सुन्दर रूपसे उत्तर दिये। पहिले तो उसने बतलाया, कि वाणी किस प्रकार होनी चाहिये। उसमें किस

प्रकार शब्दोंका प्रयोग करना चाहिये और वाणीके अन्दर और कौन कौन गुण होने चाहियें। इतना कहकर वह राजासे इस प्रकार बोली,—"हे राजन्! मनको एकाग्र करके मेरे वचन सुन। तूने पूछा कि मैं कौन हूं? किसकी हूं और कहांसे आई हूं सो उनका उत्तर सुन। जिस प्रकार लाल लकड़ी धूल और जल-विन्दु परस्पर मिलकर स्थिर हैं, उसी प्रकार समस्त देहधारी जीवोंका अस्तित्व विद्यमान है। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध इत्यादि इन्द्रियां अपने अपने कम रूपसे भिन्न भिन्न हैं, परंच काष्ठके समान मिलकर कायम हैं। यह भी ज्ञात है कि उनसे कोई नहीं पूछता कि तू कौन है। इनमेंसे किसीका अपना वा दूसरेका ज्ञान नहीं है। आँख अपने आपको नहीं देख सकती। कान अपने आपको नहीं सुन सकता और नेत्र दूसरी इन्द्रियोंका काम नहीं दे सकते। यदि यह बाह्य मिलकर रहें तो भी वह अपने आपको नहीं पहचान सकते। जिस तरह गर्द और पानी एक दूसरेके संग रहकर भी एक दूसरेका नहीं पहचान सकते। अपना कर्त्तव्य पालनके लिये उन्हें किसी और वस्तुकी जरूरत है। दृष्टिके लिये आँख, शकल और रोशनीकी जरूरत है। इन्द्रियोंके भीतर मन एक अलग है जिसका कम भिन्न है। इसकी सहायतासे यह ज्ञान होता है कि कौन जीवित है और कौन मृत है। पांच कर्म इन्द्रियां, पाँच ज्ञान इन्द्रियाँ, ग्यारहवां मन, बारहवीं बुद्धि है, जिस समय किसी विद्यमान वस्तुके विषयमें सन्देह पैदा होता है। बुद्धि आकर फैसला देती है।

इससे जीवधारियोंमें कमी वेशीके लिहाजको अनुभव करनेकी शक्ति रहती है। चौदहवां तत्व आशा है। वासना १५ असूल है। इसमें तमाम सृष्टि बंधी हुई है। सोलहवां अविद्या है, प्रकृति व्यक्ति दो और निकान्त हैं। सुख दुःख, जरा, मृत्यु, लाभ, हानि,

यह मिलकर १६ असूल हैं, इनको द्वंद कहते हैं। २० काल हैं, ५ भूत भाव, प्रभाव सबको २७ बनाते हैं। विधि, शुक्र बल ३ और मिलकर ३० हुए, जिसमें यह तीस रहते हैं, वह शरीर है। कई एक लोग कहते हैं कि अव्यक्त प्रकृति इनका कारण है। कणाद ऋषि परमाणुको कारण मानते हैं। चाहे उत्पत्ति रूप चाहे अनुत्पत्ति रूप, प्रकृति इसका कारण हो चाहे पुरुष वा प्रकृति इसका कारण हो, या चार पुरुष उसकी माया जीव और उनकी अविद्या कारण हो—जो अध्यात्मसे परिचित हैं, प्रकृतिको उपादान कारण मानते हैं। प्रकृति जो पहले अनजान अवस्थामें थी, इन सिद्धान्तोंमें पैदा होती है। राजन्! तू, मैं और समस्त जीवधारी इसी प्रकृतिसे पैदा होते हैं, और और हालतें बीज और रुधिरके मिलापसे पैदा होती हैं। बीजसे कलल, कललसे बुदबुद बुदबुदसे २०............से अंग उसी अवस्थासे बाल और नाखून निकलते हैं। ६ मासमें जीवधारी पैदा होता है। उसे लड़का या लड़की कहते हैं। बाल्यसे यौवन उससे फिर बुढ़ापा-तत्व जो शरीरके अन्दर क्षण क्षणमें बदलते रहते हैं। उनका बदलना किसीको प्रतीत नहीं होता। परमाणुकी उत्पत्ति, उसकी तब्दीली और मौतका ज्ञान किसीको नहीं—जैसे कोई जलते हुए चिरागकी लूको नहीं जान सकता। जब सबके शरीरका यह हाल है कि क्षण क्षण परिवर्तनशाली है तो कौन कह सकता है, कौन कहांसे आया, कहांसे नहीं आया या यह कौन है या किसका नहीं है और कहांसे पैदा होता है।

ज्ञानद्वार और उसके शरीरमें क्या सम्बन्ध है, जिस प्रकार चुम्बकमें लोहेसे लगनेकी शक्ति है या दो लकड़ियोंके रगड़नेसे आग पैदा होती है, इसी तरह इन तत्वोंके मिलनेसे जीव पैदा होते हैं—तू अपने शरीरमें, अपने ही शरीरमें दीखता है। अपनी आत्मा-

को अपनी आत्मामें देखता है, क्या तू अपनी आत्मा और शरीरको दूसरोंकी आत्मा और शरीरमें नहीं देखता ? यदि यह सत्य है कि तू आत्मवत् दूसरोंको देखता है, तो मुझसे क्यों पूछता है कि तू कौन है ? कहांसे आई है ? अगर यह सत्य है, कि तू द्वैत ज्ञानसे मुक्त हो गया है, जिसे गलतीसे लोग मेरा तेरा कहते हैं, तो प्रश्न करनेकी क्या आवश्यकता है, कि तू कौन है, और कहांसे आई है। इस राजामें मुक्तिके कौनसे चिह्न हैं जो दूसरोंकी तरह मित्र, शत्रु और उदासीनका सा बर्ताव करता है। उस मनुष्यमें मोक्षके कौनसे चिह्न हैं, जो सुन्दर, बलवान् और निर्बलको एक समान नहीं देखता। तेरे मन्त्रियों तथा अन्य अधिकारी वर्गको चाहिये, कि तेरे मनसे इस देहमुक्त होनेके भावको निकाल दें। तेरा हाल उस बीमारका सा है जो हर प्रकारके खाद्य पदार्थोंमें अपनी निःसङ्गता ढूँढ़ता है। मोक्षकी व्याख्या तू मुझसे सुन। मैं बन्धनके बारीक सम्बन्धोंको चार काम (नींद, भोग, भोजन, वेष) में विभक्त करती हूं। तू मोक्षका अधिकारी होनेपर भी इनमें फँसा हुआ है, जो पुरुष संसारमें राज करता है, जरूर वह एक ही होगा, उसको हठात् एक ही महलमें रहना होगा। उस महलमें उसके लिये एक खाट ही नियत होगी। उसका आधा हिस्सा उसे भार्य्याके लिये छोड़ना पड़ता है। इससे प्रतीत होता है कि राजाका नियत भाग कितना थोड़ा है—यही हाल भोगोंका है। यही अवस्था अन्न और वस्त्रकी है। हर चीजके विशेष भागसे वे गठित हैं। राजा दूसरोंका मुहताज है। सुलह और लड़ाईके मामलोंमें स्वतन्त्र है। मन्त्रियोंसे सम्मति लेनेमें उसे क्या स्वतन्त्रता है, जब हुक्म देता है वह स्वतन्त्र है। दूसरे क्षणमें वह स्वयं मुहताज हो जाता है, सोनेकी इच्छा है, वह अपनी इच्छा अनुसार सो नहीं सकता, जिनको इससे काम रहता

है उसकी ख्वाहिशका मुकाबला करते हैं, नहाना, सोना, पीना, खाना, यज्ञ करना आदि सब कामोंमें राजा दूसरेका मुहताज है। दान देनेसे डरता है, कि खजाना खाली हो जायगा।

दुशमनीका डर रहता है। बुद्धिमान्, शूरवीर, धनी साथ होनेसे राजा उनसे डरने लग जाता है। जब भयका कोई कारण नहीं, अगर मुल्क विनष्ट हो जावे, शहरमें आग लग जावे, राजाको दूसरेकी तरह डर रहता है, उसे हार्दिक दुःखसे भी छुटकारा नहीं होता, उसे सिर दर्द और दूसरी बीमारियां प्रायः हो जाया करती हैं। उसको रातको चिन्तासे नींद नहीं आया करती। ऐसी अवस्थामें कौन है जो राजा होना स्वीकार करेगा, कौन है जो राज्य पाकर शान्त रहता हो? हां, तू इस राजको अपना समझता है, इस..............को अपना समझता है। फौज, खजाना, मशीनोंको अपना समझता है। मित्र, मन्त्री, राजधानी, सूबा, दण्ड देना, कोष यह सात राजके अङ्ग हैं—जो एक दूसरेके आश्रित हैं। जैसे बहुतसी लकड़ियां एक दूसरेके सहारे स्थिर रहती हैं। कौन इनमेंसे विशेष समझी जा सकती है? जो राजा परिश्रमी और पुरुषार्थी है, वह प्रजासे दशांस लेकर तृप्त रहता है। दूसरे राजा उससे भी कम लेते हैं। यदि तूने बन्धन तोड़ दिये हैं, और उनसे विमुक्त है; तो मैं पूछती हूं, कि तूने राज्यके व्यसनोंसे क्यों सम्बन्ध रखा है? ऐ मिथिला नरेश! तू क्या कह सकता है कि मैंने दूसरोंके शरीरसे सम्बन्ध पैदा किया है, जब कि मुझे स्वयम् उस शरीरसे सम्बन्ध नहीं। तू मुझे कोई दोष नहीं लगा सकता। क्योंकि मैंने जात-पातमें गड़बड़ पैदा कर दी है। यदि तूने सचमुच मोक्ष प्राप्त कर ली है तो मेरी बुद्धि द्वारा तेरे अन्दर प्रवेश करना क्या दोष पैदा कर सकता है? यदि लोग नित्य निर्जन स्थानोंमें रहते हैं, मैंने क्या हानि की, यदि बुद्धि द्वारा

तेरे शरीरमें दाखिल हुई। जो असली ज्ञानसे शून्य है—मैं तेरे शरीर बिना ज्ञान इस तरह उपस्थित हुई हूं, जैसे जलकी बूँद कमलके पत्तेपर ठहरती है और पत्ता भींगता नहीं, इसके विपरीत यदि तुझे छूतका खयाल है तो कैसे विश्वास हो कि तेरा दिल विषय भोगसे हटा हुआ है। मोक्ष कठिन चीज है, तुझको प्राप्त नहीं हुई। जो शरीरको ही आत्मा समझते हैं; वह अज्ञानी हैं। मेरा शरीर तेरे शरीरसे भिन्न है परन्तु आत्मा भिन्न नहीं है। प्याला हाथमें है, प्यालेमें दूध है, दूधमें मक्खी है, यद्यपि सब एक दूसरेके साथ हैं, तथापि एक दूसरेसे भिन्न भिन्न हैं। मैं तेरी तरह शुद्ध पवित्र वंशसे नहीं हूँ। राजर्षि वृद्धमान् नामका हुआ है, मैं उसके वंशसे हूँ। मेरा नाम सुलभा है। उस वंशमें पैदा होनेसे खयाल हुआ कि मेरे योग्य कोई पति नहीं। मुझे मोक्षकी शिक्षा दी गई। मैं संसारमें रहती हूं। वैरागिनी हूं, मुझमें कपट नहीं, मैं अपनी प्रतिज्ञामें दृढ़ हूं, बिना सोचे समझे कोई बात नहीं करती, मैं देखने आई थी कि तुझे मोक्ष हो गई है या नहीं, इस भावसे नहीं कि मेरी प्रशंसा और मान हो और तेरा अपयश। जिस प्रकार एक संन्यासी एक रातके लिये एक स्थानपर रहता है, इसी तरह तेरे शहरमें एक रात रहकर कल यहाँसे कूच कर जाऊंगी।

विदुला ।

कृष्णने युद्ध करनेसे पहले एक दफा स्वयं कौरवोंके पास जाना चाहा। उनको युधिष्ठिरने कहा कि वहाँ जानेसे कुछ लाभ नहीं, दुर्योधन कभी आपका कहा न मानेगा। कृष्ण बोले—मैं सब हाल जानता हूं, मुझे समस्त संसार भी मिलकर सदमा नहीं पहुंचा सकता। मैं क्रोधमें होऊँगा तो सबको नष्ट कर दूंगा। मेरा जाना व्यर्थ न होगा, मेरे जानेसे नित्यका कलंक तो दुर्योधनके ऊपर रहेगा। भगवान् गये। जाकर दरबारमें बैठे, भीष्म द्रोणाचार्य्यादिक सब वहां मौजूद थे। उन्होंने कहा, राजन्! मैं इस भावसे आया हूँ कि जन-विध्वंसकी नौबत न आये। दूसरोंको दुःखी देखकर सुखी होना अच्छा नहीं। आप अपने पुत्रोंको समझायें, मैं पाण्डवोंको समझा लूंगा। उनके साथ मुहब्बत करनेसे सबका भला है। इस समय सैंकड़ों हजारों राजे उनके साथ हैं। एकसे एक बढ़कर शूर योद्धा उनके लिये लड़नेको प्रस्तुत हैं। युधिष्ठिरने धर्मकी बातें कहकर सबको रोक रखा है। आप भी सुलहके लिये तैयार हो जाइये। आप जानते हैं कि युधिष्ठिरका व्यवहार आप वा आपके बच्चोंके साथ कैसा है? उनका राज्य छीना गया, द्रौपदीका अपमान किया गया, वह बन बन दुःख उठाते फिरे, फिर भी धर्म-पथसे नहीं हटे। आप भी धर्मका खयाल करके ऐसा काम करें, जिससे कि यह कुल नाश न होने पाये।

सबने इन वचनोंको पसन्द किया और उसके समर्थनमें किस्से कहानियाँ सुना, धृतराष्ट्रको धर्मपर चलनेकी प्रेरणा की। धृतराष्ट्र बोले, मैं भी यही चाहता हूं, मगर क्या करूँ, मेरा कुछ वश नहीं है, दुर्योधन किसी तरहसे नहीं मानता। जितना संभव

था यत्न किया गया। कृष्णने सारा वृत्तान्त कुन्तीको जा सुनाया, और पूछने लगे कि अब तेरी क्या सम्मति है? कुन्ती बोली, युधिष्ठिरसे जाकर कहो, तुम्हारा धर्म्म अब घट रहा है। तुम शायद धर्म्मके उलटे अर्थ समझते हो। वेदमें ऐसे धर्म्मकी महिमा नहीं है। धर्म्म वहाँ रहता है जहाँ बुद्धि और ज्ञानसे काम लिया जाता है। क्षत्रियोंको चाहिये, कि वह अपने भुज-बलपर भरोसा रखें। मैं विदुलाका किस्सा तुमको सुनाती हूँ। युधिष्ठिरको जाकर सुना दो। वह किस्सा इस प्रकार है:—विदुलाका जन्म क्षत्रियोंके शाश्वत वंशमें हुआ, उस कुलके क्षत्रियोंका प्रण था कि सिर जाये तो जाये पर रणभूमिसे बिना शत्रु-विजय किये न आवेंगे। विदुलामें अपने कुलके सब गुण, उत्साह, वीरता आदि कूट कूट कर भरे थे। उसकी शादी सुवीर राजाके साथ हुई जो मारवाड़से दक्षिणकी ओर राज्यका स्वामी था। उसके मर जानेके पश्चात् उसका पुत्र संजय नामका गद्दीपर बैठा। यह उत्साह हीन, अल्प बुद्धि और राजनीतिसे अनभिज्ञ था। सिन्धके राजाने यह देखकर उसपर चढ़ाई की। संजय परास्त होकर भाग गया और एक पर्वतके शिखरपर जाकर शरण ली। विदुलाको जब यह समाचार मिला उसके नेत्रोंमें खून भर आया, वह वहां चली गई, जहां संजय पड़ा था। उसने उसे बड़े अनिष्ट वचन कहे। जिन अग्निवत् तीव्र शब्दोंमें विदुलाने अपने पुत्रको आह्वान किया, वह सुनने योग्य हैं:—

ऐ शत्रुओंको खुशी देनेवाला! तू मेरा पुत्र नहीं है। इस कुक्षोसे अग्निको पैदा होना चाहिये था, जो शत्रुओंको जलाकर भस्म कर देती। तू किसकी विन्दुसे पैदा हुआ? न तू अपने पिताका है न माताका है। तुझमें अग्नि नहीं, तुझमें क्रोध नहीं, तेरी कौन पुरुषोंमें गणना करेगा? क्या तू नपुंसक है? जो

रणभूमिको छोड़ आया है? यह उदासीनता क्षत्रीके लिये अनुचित है। यदि अपना कल्याण चाहता हैं, तो अपने भारको खुद संभाल, अपनी आत्माको अपवित्र मत कर, अपमानका जीवन मृत्यु है, उठ अपने भयको त्याग दे, क्षत्री पुत्र सदैव ऐश्वर्य्यका आकांक्षी रहता है, वह किसीका अधीन बनना नहीं चाहता, शेरकी तरह वनमें विचरता हुआ सबको अपने बलाधीन रखना चाहता है। नीचे या मध्य भागमें रहना पसन्द नहीं करता। वह सदैव बड़ाई और मानके शिखरपर नजर आयेगा, उचित है कि तू एक बार फिर प्रज्वलित होकर अग्निकी भांति भड़क उठ, न कि सिसक सिसक कर तेरा दम निकले। यह क्या सोचता है? तेरे जैसा कायर नपुंसक क्या काम करेगा, तुझे चाहिये था कि हाथमें खड्ग लिये रण-भूमिमें विद्युत् की भांति कड़कता और चमकता हुआ नजर आता, मरता या मारता, परन्तु लोग प्रशंसा करते न थकते। जिसमें साहस नहीं, वह पुरुष नहीं, लज्जा नहीं, वह निर्लज्ज न पुरुष न स्त्री, न उससे मित्रोंको सहायता मिलेगी और न प्रजाको आश्रय मिलेगा। न वह पिताका नाम जीवित रखेगा, और न माताकी छाती ठण्डी होगी। यह देश निकाला, यह विपत्ति और सुख सम्पत्तिसे विहीनता किसको प्रिय है? संजय! तू पुरुष बन, स्त्रियोंका वेष मत धार। क्या तू मुझे स्त्रियोंमें लज्जित करेगा? उठ खड्ग हाथमें ले, और शत्रु दलमें अग्नि संचार कर दे। संजय माताके यह वचन सुनकर उठ खड़ा हुआ और यों बोला, "माता इस लोकमें तुझको क्या सुख मिलेगा, जब तेरा पुत्र संसारमें न होगा। जीवनके सब सामान फिर तेरे किस काम आयँगे।" विदुलाने उत्तर दिया, अल्पज्ञ लड़के, मरना जीना तो प्रति दिनका काम बना हुआ है, इसको कोई रोक नहीं सकता। जो रणभूमिमें मरता है, वह स्वर्ग प्राप्त करता है? जो

वहांसे भागता है, नरकका भागी बनता है, क्षत्री जबतक युद्धमें लड़कर अपने शौर्य्यका प्रकाश नहीं करता, वह माता पिताका ऋणी रहता है, तू दुर्बल पुरुषोंकी भांति व्यवहार मत कर, ऐसा हो कि ब्राह्मण भिक्षु तेरा आश्रय लें। तू क्यों किसीका भरोसा करे। जो भुज-बलपर घमण्ड रखता हुआ संसारमें काम करता है, वह लोक परलोकमें यश पाता है। माता मानसे कहती है, यह मेरा पुत्र है, जिसकी आँख सिंहके सामने भी नहीं झपकती।

यह माना कि सिंधके राजाके पास सेना बहुत है; परन्तु एक वीर क्षत्री अपने देशमें शत्रुको खेला खेलाकर मार सकता है। इसलिये तू कटिबद्ध होकर तलवारको हाथमें ले और अपनी सेनाको एकत्रित करके शत्रुका सामना कर, कायरोंकी भांति मृत्युसे न डर।

संजयने कहा,—"झगड़ालू माता! तुझे लड़ने भिड़नेको सूझती है, तेरा दिल पत्थरका बना हुआ है, तेरा हृदय लोहेकी भांति है, तू इस तरह बात करती है, जैसे मैं तेरा जाया पुत्र ही नहीं हूँ। और तू मेरी माता नहीं है। यदि मैं मारा गया, तो तू राज लेकर क्या करेगी?"

विदुलाने उत्तर दिया—"मुझे राज-पाटका खयाल नहीं, तू कुलका अपयश करानेकी राहपर चल रहा है। तेरे पिता, पितामह कभी इस राहपर नहीं चले। क्षत्री इसलिये पैदा होता है कि सबकी रक्षा करे। क्षत्री*की भुजा बलपर ब्राह्मण वैश्य तथा शूद्र तीनोंके जीवन आधार हैं। क्षत्री आग है जिसे देखकर वनके सिंह व्याघ्र तक पास आनेका साहस नहीं कर सकते। यदि यह अग्नि शांत हो जावे तो फिर देशका क्या हाल होगा? इसलिये तू जा

* क्षत्री शब्दका अर्थ ऋषियोंने यह किया है :—क्षत अर्थात् जो रक्षा करे उसको क्षत्री कहते हैं।

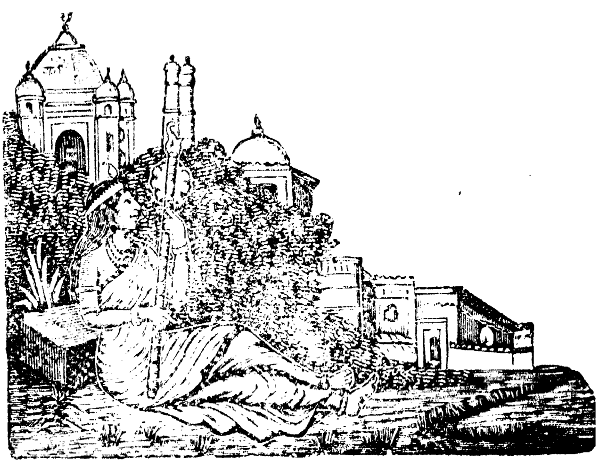
और रणभूमिकी शत्रु-दलकी सेनाको मारकर भगा दे, उनकी बहु संख्यताका खयाल न कर।"

संजयने कहा—"माता क्रोध न कर, कृपाकी दृष्टि कर, मैं तेरी आज्ञाको भंग न करूंगा।" जिस पर माताने फिर उत्तर दिया—"संजय! अब मेरे दिलको शांति आई है। मेरे तीव्र वचन इसी भावसे थे, कि तेरे अन्दर साहस पैदा हो। मैं तेरी मान प्रतिष्ठा करूंगी पर उस समय जिस समय तू राजा सिंधकी सेनाको पद-दलित कर देगा और लोकमें विख्यात होगा कि संजयने अपने पिताके पद-चिन्हपर चलकर अपने धर्म्मको स्थिर रखा।" संजयने पुनः पूछा—"माता! न मेरे पास धन है न सेना। ऐसी अवस्थामें विजय कैसे प्राप्त होगी? अपनी अवस्थाका विचार करके मैंने राज्यका चिन्तन छोड़ दिया है। तू ही कह, मैं क्या करूं और शत्रु पर विजय कैसे प्राप्त करूं?"—माताने पुनः पुत्रको इस प्रकार कहा—"क्रोध, भय और कायरता तीनोंके हेतुसे सर्व क्रिया निष्फल होती है, यदि कोई यह आशा रखे कि क्रोधसे काम बन जायेगा तो वह भी मूर्ख है। पुरुषको साहस और उद्योगसे सब काम करने चाहियें और फल उसका ईश्वरपर छोड़ना चाहिये। जिस प्रकार सूर्य्य, पूर्व, पश्चिम, उत्तर दक्षिण सब ओर अपनी किरणें फैलाता है; तू भी उसी प्रकार अपने बलका विस्तार कर। तेरे राज्यमें ऐसे पुरुष हैं, जिनमें देशका अभिमान है, वह शत्रुको अत्यन्त घृणा दृष्टिसे देखते हैं। उनको अपनी राज्य-पताकाके नीचे ला, धनकी लालसावालोंको धन-लोभ दे, और जो शत्रुओंसे परास्त हैं और जो ईर्षा और द्वेषकी अग्निमें जल रहे हैं, उनपर अपनी गूढ़ सहानुभूति प्रकट कर, वह सब तेरा साथ देंगे। जिस प्रकार मैंने तुझे अनिष्ट वचन कहकर रणभूमिके लिये तैयार किया है, उसी प्रकार तू भी राजपूतोंको

बुलाकर उत्तेजित कर। प्रत्येक पुरुषकी प्रकृति पहचान और उसी तरह उसके साथ व्यवहार करके उसे अपने अधीन रख। तेरे पास थोड़े ही दिनोंमें योद्धाओंकी पर्य्याप्त संख्या हो जायगी। जहां तूने संकल्प किया, तेरे चारों ओर तेरी अनुकूल प्रकृति, स्वभाव और उत्तेजनावाले पुरुष इकट्ठे हो जायँगे, जब शत्रु दल सुनेगा कि तू इस प्रकार तैयार है तो वह स्वयमेव ही विगत शौर्य्य हो जायगा। विपत्तिके समय राजा कभी नहीं घबराता। प्रजा सैन मन्त्री सब ही डर जाते हैं। परन्तु राजा उनको ढाड़स देता है। कतिपय घबरा जाते हैं। कई एक शत्रुसे जा मिलते हैं? परन्तु सबका प्रबन्ध राजाके हाथमें है, कई तेरी जातिके ख़यालसे तेरे मित्र बन जायँगे, उनपर पूरा विश्वास रख, परन्तु इतना अधिकार मत दे कि वह तुझे धोखा दे सकें। भयभीत और चकित मत हो। अपने दुःखसे दूसरोंको उद्विग्न मत कर। पर्वतके समान मनको दृढ़ रख और वह कभी तेरा साथ न छोड़ेंगे। उठ, धीरज धर। मेरे पास निधि है, मैं सब कुछ तुझे दूंगी, मेरी सब दौलत तू है, हीरे पन्नेकी तरह देदीप्यमान होकर शत्रु सेनाका संहार करके अपने माता पिताके नामको उज्वल कर।"

यह बातें सुनकर संजयको ढाढ़स बन्ध गई। उसने कहा— "माता! तू मेरी सच्ची मन्त्रिणी है। मैं अबतक भयभीत था। तेरी बातोंने मेरे सोये दिलको जगा दिया। मैं जाता हूं, लोहेसे लोहा बजाता हूं। या तो शत्रु-दलका संहार कर दूंगा या स्वयम् प्राण दे दूंगा।" यह कहकर संजयने उस पर्वत शिखरपर अपनी राज-ध्वजा खड़ी की, सहस्रों पुरुष एकत्रित हो गये। उसने कहा मित्रो! अपमान और दासताके जीवनसे मृत्यु श्रेष्ठ है। जीते जी अपने सम्बन्धियोंको दुःखमें छोड़ना और अपने देशको रिपुसेनासे पददलित कराना, कायरोंका काम है। मैं तुम्हारे

लिये प्राण त्यागने चला हूं, यह जान तुम्हारी और तुम्हारे देशकी है और इसीपर बलिदान होनेको तैयार है। देश-सेवामें मैं सबसे पहिला तुम्हारा अग्रगामी हूं। कहो, तुम्हारी क्या सम्मति है? सबने एक स्वर होकर कहा "हम सब युद्ध करनेको उद्यत हैं। हममें एक भी ऐसा नहीं जो रणभूमिसे मुंह मोड़े।" राजाने कहा—"शाबाश! जहां हिम्मत है वहां अवश्य जय होती है। आओ, अपने देशको दस्यु और तस्करोंसे साफ़ रखें।" इसके बाद वे जल प्रवाहके समान शत्रुपर जा पड़े। दुशमनोंके पैर उखड़ गये और संजयने शत्रुके माल असबाब और अपने देशपर अधिकार कर लिया। विदुला स्वयंम् रणक्षेत्रमें आई, पुत्रका माथा चूमकर कहने लगी; "पुत्र! अपने बापका सच्चा पुत्र! विदुलाकी आँखका तारा और राज करनेका सच्चा अधिकारी तू है।"



दमयन्ती ।

बनके अन्दर वृद्धास ऋषि युधिष्ठिरको सुनाता है, कि निषाद देशका राजा वीरसेन था। उसका लड़का नल विद्या, बुद्धिमें निपुण, सत्यवादी और वीर था, उसे जूआ खेलनेका दुर्व्यसन था, विदर्भ देशके राजा भीमके घर तीन पुत्रियोंके बाद एक पुत्री पैदा हुई जिसका नाम दमयन्ती था। दोनों यौवनावस्थाको प्राप्त हुए। दोनोंने एक दूसरेके सौन्दर्यकी प्रशंसा सुनी और एक दूसरेपर मोहित हो गये। दमयन्तीका स्वयंवर हुआ। उसने उसमें राजा नलको अपना पति स्वीकार किया। उनका विवाह हुआ और उनके दो अति सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुए। नल जूआ खेलता था, वह कई दिनतक अपने भाईके साथ खेलता रहा। दमयन्ती उसे समझाती रही, परन्तु उसने एक न सुनी। आखिर वह राज पाट सब हार गया और पुश्कर उसके राज्यपर आरूढ़ हो गया। दमयन्तीने अपने लड़की लड़केको विदर्भ भेज दिया, और स्वयं पतिके सङ्ग चल पड़ी। दोनोंने क्रोध और दुःखसे व्याकुल हो अपना देश त्याग दिया। राजाको अत्यन्त क्षुधा लगी, उसे उड़ते हुए पक्षी दिखलाई दिये। उसने उनको पकड़नेके लिये अपनी धोती उनपर डाल दी। पक्षी धोतीको लेकर उड़ गये। वह दमयन्तीसे कहने लगा, तू दक्षिणकी ओर जा और विदर्भ देशमें जाकर विश्रामकर। दमयन्तीने कहा, मैं आपका अभिप्राय समझती हूँ। मैं आपकी स्त्री हूँ, आपको भूखा प्यासा और नङ्गा छोड़कर कहां जाऊँ? मैं अपने शरीर और प्राणोंका त्याग कर सकती हूँ, परन्तु आपका सङ्ग नहीं छोड़ सकती। दोनों भूख प्याससे व्याकुल एक वृक्षके नीचे बैठ गये, दमयन्ती थक गई थी; उसे नींद आ गई, वह सो गई। विपत्तिके समय मनुष्यकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। नलने

समझा, यदि वह अकेला बनमें चला गया तो दमयन्ती घबड़ाकर खुद ही अपने पिताके घर चली जायेगी और वहां आरामसे रहेगी। उसने सोती हुई दमयन्तीकी आधी धोती फाड़ ली और पहन कर चला गया। दमयन्ती नींदसे उठी। नल पास न था घबरा गई, भय और दुःखसे चिल्लाने लगी,—"तुम क्यों वृक्षके पीछे छिप गये हो, दमयन्ती आपके बिना जीवित नहीं रह सकती, उसकी परीक्षा मत करो।" नल कहां था जो उत्तर देता। वह जोर जोरसे चिल्लाने लगी। सारा बन उसकी आवाज़से गूंज उठा, एक अजगर आया, और उसके शरीरसे लिपट गया। दैव-योगसे उस समय एक व्याध पीछे आ रहा था। उसने सर्पका सिर काट लिया, और उसकी जान बचाई; परन्तु उसके मनमें विकार पैदा हो गया। उसने कहा—मेरे घर चलके रह। दमयन्ती बोली—मैं राजा नलके अतिरिक्त किसी दूसरे पुरुषको नहीं जानती। व्याध पीछे पड़ गया, दमयन्तीने तलवार उठाई और उसे वहां ही समाप्त किया। बन पर्वत सब जगह फिरती रही, सब तालाब सरोवर देखें, हर जगह नलकी तलाश करती थी। मत-वाली बनकर नलका नाम ले लेकर पुकारती थी, और पर्वतोंसे पूछती थी। आखिर एक सौदागरोंका समूह आ रहा था। उनके साथ हो ली, कुछ दिन इसी तरह गुजर गये। सौदागरोंपर जङ्गली हाथियोंने हमला किया, बहुतसे मारे गये। दमयन्ती जान बचाकर भाग निकली, बाल खुले मुँहपर मैल जमी हुई; आधी नङ्गी एक शहरमें जा पहुँची। लड़के बावली समझ कर पीछे पड़ गये। शहरकी रानीने देख लिया और अपनी दासीको भेजा कि उसे बुला ला। दमयन्तीसे हाल पूछा; उसने कहा मैं अपने पतिकी खोजमें फिर रही हूं, फल मूल खाती हूं। उसे जूएकी आदत थी, उससे दुःखी होकर वह कहीं चला गया है। रानीने उससे

कहा, तुम यहाँ ही रहो, हम तुम्हारे पतिकी तलाश करेंगे; दमयन्तीने कहा,—अच्छा मैं इस शर्तपर रहूंगी, किसीका जूठा न खाऊँगी, किसी अन्य पुरुषसे बात न करूँगी, किसीके पैर न धोऊँगी और जो पुरुष मुझे बुरी दृष्टिसे देखेगा; उसे सजा देनी होगी। रानीने स्वीकार किया। दमयन्ती रानीकी लडकोके सङ्ग रहने लगी। विदर्भ नगरके राजाने नल और दमयन्तीकी तलाशमें जगह जगह आदमी भेज दिये; इधर नल जङ्गलोंमें घूमता हुआ अयोध्या जा पहुँचा। वहांके राजाका नाम ऋतुपर्ण था; उसने नलको अश्व-विद्यामें निपुण जान अपनी अश्वशालाका अध्यक्ष नियत किया। नल वहाँ रहता था पर प्रति दिन रातके समय रोया करता था;—"शोक! उसे कहां खाना मिलता होगा; उसका कौन साथी होगा।" विदर्भ नगरके एक शख्स सुदेवने दमयन्तीका जा पता लगाया। जब रानीकी लड़कीने दमयन्तीको रोते देखा; उसने माताको जाकर खबर दे दी। रानी दौड़ी आई और उसे सारी वास्तविकता मालूम हुई और वह यह मालूम करके हैरान हुई कि दमयन्तीकी माता उसकी बहन थी। दमयन्ती वहांसे विदा होकर विदर्भ नगर आई; उसकी मा बहुत खुश हुई। दमयन्तीने कहा अगर तू मुझे सुखी करना चाहती है तो नलकी तलाश कर। उसके दूत गली कूचोंमें एक खास गीत गाते हुए फिरते थे। एक दूतने आकर खबर दी कि राजा ऋतुपर्णका कोचवान् इस गीतको सुनकर रो पड़ा था। दमयन्ती समझ गई। उसने राजा ऋतुपर्णको खबर भिजवाई कि दमयन्ती दूसरा स्वयंवर करेगी। मगर यह बहुत थोड़े दिनोंमें होगा। राजाने अपने रथ-वाहकको बुलाकर पूछा कि क्या तुम इतने समयमें वहाँ पहुँचा सकते हो? उसने कहा-हां। उसने रथपर राजाको बैठाकर घोड़ोंको हवाकी तरह दौड़ाया, और विदर्भ नगरमें जा पहुँचा दिया। वहां

कोई स्वयंवर न था। वह एक जगहपर ठहरा दिये गये। दमयन्तीने एक दासीको नलके पास भेजा। उसने दमयन्तीको आकर उसका सब हाल बताया, कि वह ऐसा है, इस प्रकारका जबत रखता है, बड़ा अच्छा रसोईया है। उसने ऐसे ढङ्गसे शीशा सूर्य्यको दिखाया कि स्वयं ही आग जल पड़ी। दमयन्तीको निश्चय हो गया, कि वह नल ही है, उसके पास दोनों बच्चे भेज दिये। नलने उनको गोदीमें उठा लिया और रोने लगा। यह कहते हुए, कि मेरे भी दो ऐसे ही बच्चे थे। इसके पश्चात् दमयन्ती स्वयम् उसे देखने गई। दोनोंको आँखोंमें शोकके आंसू शुरू हो गये। दमयन्तीने पूछा—"बाहुक! क्या तुमने कोई ऐसा पुरुष देखा है जो सोती हुई अपनी स्त्रीको छोड़कर चला गया हो? नलके अतिरिक्त यह काम आजतक किसीने नहीं किया, वह मुझे छोड़कर क्यों भाग गया, वह शायद भूल गया, कि मैंने स्वयंवरके समय उससे कहा था कि मैं तेरी हूं।" नलने रोते हुए उत्तर दिया—"कर्म गतिने उसे धर्म-पथसे गिरा दिया था, परन्तु भीमको पुत्रीका दूसरा वर तालाश करना किस धर्मानुकूल है?" दमयन्तीने कहा—महाराज! यह दोष न दें। मैंने स्वयंवरमें आपको अपना वर चुना था। उस समयसे आजतक आपकी तलाशमें थी, जब पता लगा, कि तुम अयोध्यामें हो, तो इस ढङ्गसे तुमको बुलाना चाहा। बिना आपके इतनी जल्दी यहां कौन पहुंच सकता था।"

महारानी सीता।

सीता मिथला नरेश राजा जनककी पुत्री थी। राजा अपनी प्रजाको प्राणसे बढ़कर प्रिय समझता था और हर समय उनकी उन्नतिकी चिन्तामें रहता था। कथा आती है कि राजा स्वयं जमीनमें हल जोता करता था। एक बार उसे एक नवजात लड़की मिली। राजाने लड़कीको बताया कि तुम्हारा सीता नाम इसीलिये रखा गया था, कि तुम्हारी माता पृथ्वी है। सीताकी पालना बड़े लाड़ प्यारसे की गई। ज्यों ज्यों वह आयुमें बढ़ती गई, उसका रूप यौवन और सदाचार संसार विस्तृत होने लगा। युवावस्था प्राप्त होनेपर राजाको उसके विवाहका विचार हुआ, उसने निश्चय किया कि सीताका विवाह उस पुरुषसे हो जो कि पुरुषत्व आदि गुणोंसे संपन्न और शूरवीरोंमें अद्वितीय हो। राजाके यहां कई पीढ़ियोंसे एक धनुष चला आता था। किसी योद्धाको उसे चढ़ानेका साहस आजतक न हुआ था। इस लिये जब राजाके दूत स्वयंवरका सन्देसा लेकर गये, तब साथ ही इस प्रतिज्ञाकी घोषणा की गई कि जो पुरुष उस धनुषको तोड़ेगा, सीताकी शादी उसके साथ ही होगी। अनेक राजे महाराजे सेना लेकर मिथिला पहुंचे। दो दिन पहले दो राजकुमार राम लक्ष्मण जो अयोध्या नगरीके राजा दशरथके पुत्र थे और जो बनमें एक ऋषिके आश्रममें धनुर्विद्या सीख रहे थे और ऋषि आश्रमको दस्युओंके आक्रमणसे बचानेका काम भी करते थे, स्वयंवरकी खबर पाकर वहां आगये।

स्वयंवरका सब प्रबन्ध किया गया। सब लोग एकत्र हुए, प्रतिज्ञा फिर सबको सुना दी गई। एकके पश्चात् दूसरा इस प्रकार कई शूरवीर मैदानमें आये और धनुषके साथ जोर आजमा कर

वापस बैठ गये। कोई धनुषको उठा न सका। राजा जनकने ऊंचे स्वरसे कहा। क्या बहादुरीका खातमा हो गया? क्या सीता सदैवके लिये अविवाहिता रहेगी? यदि मुझे यह ज्ञात होता तो मैं यह प्रण न करता। अब इस समय तो मुझे अपना वचन तोड़ना असम्भव है। इस वचनने सब वीर योद्धाओंको, जो कि आगे ही बड़े लज्जित हो रहे थे, अति व्याकुल कर दिया। ऐसी अवस्था देख, राम अपने गुरुकी आज्ञा लेकर क्षेत्रमें निकले और धनुषको उठाकर क्षणभरमें उसके दो टुकड़े कर दिये। सब ओरसे जयजयकारकी ध्वनि निकली। तमाम निराशा खुशीमें बदल गई। तमाम आँखें रामपर लग गईं। सीताने जयमाल रामके गलेमें डाल दी। जब दशरथको यह खबर मिली, वह अपने राजकर्मचारियों सहित मिथिला पहुंचे। नियत समय पर विवाह संस्कार कराया गया। राजा जनकने उस समय रामसे यह वचन कहे—"हे राम! सीता पवित्र और धर्मवती है, उसने कभी मन, वचन या कर्मसे किसी प्राणीको कष्ट नहीं दिया। जिस प्रकार तुम शौर्य्य आदिक गुण संपन्न पुरुषोत्तम हो, उसी प्रकार सीता समस्त गुणसम्पन्ना है। दुःख सुखमें यह सदैव तुम्हारे संग रहेगी और छायाके समान तुम्हारा साथ देगी।" सीता अपने पैत्रिक गृह और देशसे विदा होकर अयोध्या आई, राजा दशरथकी तीन रानियाँ थीं और चार पुत्र थे, जिनमें राम सबसे बड़े थे। इनके अतिरिक्त लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न थे। राम सौन्दर्य्य, बुद्धिमत्ता, शील, स्वभाव, विद्या, ज्ञान और वीरतामें अपने समयमें अद्वितीय थे। विवाहके पश्चात् कुछ काल आनन्दसे व्यतीत हुआ। राजा दशरथ वृद्ध हो गया था। उसे यह चिन्ता हुई कि अपने जीते जी रामचन्द्रको युवराज बना दिया जावे ताकि राजकार्य्यमें उसकी रुचि लग जावे। ज्योंही यह निश्चय हो

गया त्योंही मन्थरा नाम्नी एक दासीने दूसरी रानी केकयीको जो भरतकी माता थी जा बहकाया और उसको ईर्षाग्निको प्रज्वलित कर दिया। उसे यह शिक्षा दी कि इस समय तुम सब रानियोंसे सुन्दर हो, राजा तुमको बड़ा प्यार करते हैं; परन्तु थोड़े दिनोंमें जब राम युवराज हो जायगा, तो फिर वही राजा बनेगा और तुम्हारी कोई मान प्रतिष्ठा न रहेगी। इस दुःखका इस समय ही उपाय हो सकता है और वह इस तरह कि तुम राजा दशरथको बाध्य करो कि वह भरतको राज तिलक दें और रामको १४ सालका बनवास मिले। केकयीको दासीकी यह कुमन्त्रणा पसन्द आ गई। जब राजा महलमें आये तो केकयीने छल करके राजाको अपने फन्देमें फँसा लिया और कहा कि आपने जो एक समय मुझे दो वर दिये थे, उन्हें अब पूरा करनेकी प्रतिज्ञा करो। राजाने मान लिया तो केकयीने कहा कि भरतको राज तिलक होना चाहिये और रामचन्द्रको १४ वर्षका बनवास। राजा अपनी जबानसे वचन दे चुका था। रघुकुलकी रीति यही चली आती थी कि प्राण चला जाये पर वचन न जाये। इतना वचन सुनकर राजाको अत्यन्त खेद हुआ। जिसके कारण वह मूर्च्छित हो गया। जब रामचन्द्र आये, उन्होंने राजाकी यह अवस्था देखी, विस्मित होकर माता केकयीसे पूछा कि क्या कारण है जो राजा ऐसी दुःखी अवस्थामें है? रानीने सब कथा कह दी। रामचन्द्रने कहा—मैं भाग्यवान् हूंगा, यदि मेरे कारण पिता अपनी प्रतिज्ञा पालन कर सकें। जिस प्रकार सूर्य्यकी भांति चमकते मुखसे वह युवराज बननेके लिये गये थे, उसी भांति आह्लादित देदीप्यमान मुखसे वह वनमें चलनेके लिये उद्यत हो गये। उन्होंने आकर सीताको यह खबर सुनाई, जिसके उत्तरमें उसने अत्यन्त उत्साह तथा धैर्य्यसे रामको तसल्ली दी और स्वयं साथ जानेकी

इच्छा प्रकट की। रामचन्द्रने कहा कि वनमें कांटे हैं, वनचर हैं, चोर डाकू होते हैं। तुम फूलोंकी शैय्यापर सोनेवाली हो, वनमें न जाओ। जबतक मैं वनसे लौट नहीं आता हूं, तुम मेरे माता पिताकी सेवा करो। सीताने यह सुनकर उत्तर दिया—आपके बिना मेरा यहां रहना असम्भव है—मुझे आपके संग रहते हुए किसी डाकू वा चोरका डर नहीं हो सकता। जहां आप चलेंगे, मैं आगे आगे चलकर आपके मार्गके कांटे साफ़ किया करूंगी ताकि आपको कष्ट न हों। मेरे लिये फूलोंको शैय्या वही जगह होगी जहां आपके पवित्र चरण कमल होंगे। इस प्रकार सीताकी अनन्य भक्ति देखकर रामने उसे साथ चलनेकी आज्ञा दे दी। लक्ष्मण बाल्यावस्थासे ही रामसे कभी पृथक न हुए थे। वह भी उनके साथ हो लिये। उनके जानेपर अयोध्या नगरी श्मशानाकार प्रतीत होने लगी। चित्रकूट पहुंच कर उन्होंने रथ, वाहनको लौटा दिया। जब राजाने यह सब वृतान्त सुना तो अचेत होकर ज़मीन पर गिर पड़ा। महारानी कौशल्याने उसे गोदमें उठा लिया। होशमें आया। कैकयीसे अपनी भूलके लिये क्षमा मांगी। राजाने गोदमें ही शरीर त्याग दिया। सारे नगरमें हाहाकार मच गया। भरतने राज्य करनेसे सर्वथा इनकार कर दिया और रामके सहवासमें वनमें विचरनेका निश्चय किया। अतः स्वयमेव चित्रकूट पहुंच कर उनसे प्रार्थना की कि अयोध्या चलकर राज्य कीजिये। राम इसे कैसे पसन्द कर सकते थे, कि वापस लौट आवें। विवश भरत अकेला वापस आया और उनके स्थानमें एक सहायक, नायक अथवा माण्डलिकके रूपमें काम करने लगा। राम सीता और लक्ष्मण सहित दण्डक वनमें अत्रि ऋषिके आश्रममें गये। ऋषिकी धर्म-पत्नी भी वहीं थी और अत्यन्त वृद्धावस्थाको प्राप्त होनेपर भी योग साधन करती

हुई अपने शान्तिमय जीवनको व्यतीत करती थीं। सीताने उनके चरणोंमें मस्तक रक्खा। सौम्य स्वभाव बुढ़ियाने कुशासन बैठनेको दिया और कहा,—"तू अति रूपवती है। सुन्दरता बड़ा अच्छा गुण है। तेरा शरीर स्वस्थ है, यह और अच्छा है। तू अपने पतिके दुःख संकटमें सहकारिणी आज्ञानुगामिनी पत्नी है। यह सबसे अच्छी बात है। मैंने तेरे विषयमें सब वृत्तान्त सुन रक्खे हैं। जिस प्रकार तूने महल राजपाटके सुखोंका त्याग करके अपने पतिका साथ दिया है। बहुत लोग कहते हैं, कि तूने यहां बड़ा साहस और निर्भीकताका काम किया है। मैं मुँह देखी नहीं कहती, केवल इतना कहती हूँ कि तूने अपने कर्त्तव्यका पालन किया है। एक पतिव्रता स्त्री अपने पतिका मानो प्रतिबिम्ब है। स्त्रीका मन एक दर्पण है, जिसमें पतिके विचार और भाव प्रतिबिम्बित (अकस) होते हैं। उसके कर्म पत्नीका जीवन ढालनेके लिये मानो साँचा है।" सीताने उत्तरमें कहा,—"मैं नहीं जानती कि मैं पतिकी आज्ञामें चलनेवाली और साथ देनेवाली हूं, कि नहीं। इतना जानती हूँ, कि राम मुझे अपने प्राणोंसे भी प्रिय हैं। जिस समय पवित्र अग्नि कुण्डके सामने खड़े होकर उन्होंने मुझे प्यार करनेका प्रण किया था। जब अग्निके प्रकाशकी छाया (अक्स) उनके मुखपर पड़ रही थी, उनकी आंखें मेरी आंखोंसे मिलीं। मुझपर जादूका सा प्रभाव हो गया। फिर मैंने दूसरी ओर दृष्टि पाततक नहीं किया। मेरी आत्मा उनके अन्दर घुस कर तदाकार हो गई। मैं नहीं जानती, यह अग्निका काम था या परमेश्वरका या उनकी आंखोंने मेरा दिल छीन लिया, इतना जानती हूँ। जब मैंने उधरसे नज़र फेरी तो मेरे दिलपर एक भारी बोझा प्रतीत हुआ। जहां पहले गर्व, अभिमान, अविनय और स्वार्थ था, उनके स्थानपर स्पष्ट रूपमें रामका मनमोहक चित्र

दिखाई देने लगा। जहां पहले खूबसूरती और खुशी होती थी, वहां अब रामकी तस्वीर बसती है।" उस वृद्ध स्त्रीने सीताकी बात सुन कर कहा,—"बेटी! तेरा सुहाग अचल रहेगा और तेरी कीर्त्ति सब संसारमें फैलेगी। वहाँसे चलकर सीता, राम, लक्ष्मण विन्ध्याचलके वनोंमें पहुंचे। इस जङ्गलमें ऐसे राक्षस मौजूद थे जो मनुष्योंको खा जाया करते थे। यहांपर लङ्काके राजा रावण-की बहिन एक स्त्री शूर्पनखा नामकी थी। वह रामको देख उनपर मोहित हो गई और रामके पास जाकर उसने अपना हार्दिक भाव प्रकट किया। रामने बहुतेरा समझाया, परन्तु उसकी समझमें कुछ न आया। उसने अब सीताको बुरा भला कहना आरम्भ किया। जिसपर लक्ष्मणने उसकी नाक काट ली। वह कोलाहल मचाती हुई अपने भाई रावणके पास पहुँची और उसे बदला लेनेके लिये जा भड़काया। रावण तय्यार हो गया। एक दिन सीता अकेली कुटीमें बैठी थी कि एक साधुने पूछा कि तू इतनी सुन्दर नारी इस निर्जन वनमें कैसे आ गई, जहां कि इतने भयानक जङ्गली जानवर वास करते हैं। सीताने सारा हाल कह सुनाया। रावण बोला कि तू क्यों वनमें दुःख उठा रही है। मैं तीन लोकके राज्यका स्वामी हूँ। मेरे ऊँचे सजे धजे महलोंमें चलकर रहो। सीताने घृणासे कहा—क्षमा करो। इन कमीनी नीच बातोंसे अलग हट। क्या तू रामकी सत्ता और तेजको नहीं जानता। वह जब कमान उठाते हैं, तो प्रलय (कयामत) का सा समय बन्ध जाता है। निकल जा यहांसे, अभी दोनों भाई आ जायंगे और तुझे जान बचानी कठिन हो जायगी। रावण भी बड़ा बली था, उसने सीताको पकड़कर उठा लिया और लङ्काकी ओर चल पड़ा।

राम लक्ष्मण वापस कुटीमें आए। मकान खाली पड़ा था। इधर उधर देख भाल आरम्भ की। सीताका कोई पता न लगा।

घबरा कर "सीता सीता" पुकारने लगे। जङ्गलमें कौन सहायता करता? दोनों भाई उदास निराश एक चट्टानपर बैठ गये। सोचते सोचते उनकी दृष्टि एक आदमीके पद चिह्नोंपर पडी! खयाल दौड़ाया, हो न हो यह सब रावणकी उद्दण्डता है। दोनों उठ खड़े हुए और सीताकी खोजमें दक्षिणको चल पड़े। चलते चलते उन्हें जटायु मिला जो कि लोहू लुहान हो रहा था। उसने उन्हें बताया कि रावण एक सुन्दर स्त्रीको ले जा रहा था, उसके चीखनेकी आवाज़ सुनकर मैं उसकी सहायताके लिए आया और छुड़ानेके प्रयत्नमें मेरा यह हाल हुआ। आगे जाकर उनकी राजा सुग्रीवसे भेंट हुई जो कि अपने भाईके अत्याचारसे तङ्ग था। रामचन्द्रने सुग्रीवका साथ देकर उसे उसका राज्य दिलाया और उसके पश्चात् एक गुप्तचर लङ्काको भेजकर सीताका पता लेना चाहा। यह गुप्तचर (जासूस) हनुमान था जो कि सुग्रीवकी सेनाका अध्यक्ष (जेनरल) था। हनुमान लङ्कामें गया और देखा कि नदीके तटपर एक वृक्षके नीचे सीता बैठी है। कई स्त्रियां उसकी चारों ओर बैठी हुई उसकी देख रेख और रक्षाका काम कर रही थीं। उसका चेहरा उदास, बाल बिखरे हुए और हर बार ठण्डी आह निकलती थी। इतनेमें रावणकी सवारी वहां आई। सीता भयभीत होकर उठ खड़ी हुई और घृणाकी दृष्टिसे उसकी ओर देखने लगी। रावण बोला,—"तू मेरा क्यों इतना तिरस्कार करती है। मेरा दोष केवल इतना ही है, कि मैं तुझसे प्यार करता हूँ। मेरी समस्त सम्पत्ति, राज्य सब तेरे चरणोंपर न्योछावर है। इत्यादि। सीताने आकाशकी ओर हाथ उठाया और कहा—"हा राम! हा राम! तुम कहां हो? क्या तुम सीताको भूल गये। यह पापी सीताके समीप आकर ऐसे घमण्डकी बातें करता है। क्या तुम मेरी सुधि न लोगे, और इस पापीको उचित दण्ड

न होगे।" रावण उत्तेजित हो, क्रोधमें आ गया और सीताको धमकी देने लगा। मैं अब तुम्हारे साथ कठोरताका बर्ताव करूँगा। रावण चला गया। हनुमान चुपचाप सीताके पास पहुँचा और उसने रामकी अंगूठी देकर बताया कि मैं रामका भेजा हुआ दूत हूँ। मैं इस समय तुम्हें अपने साथ ले चलता हूँ। सीताने उत्तर दिया, प्रथम तो वर्त्तमान परिस्थितिमें यहाँसे निकल जाना अति कठिन है। दूसरे मेरी इच्छा है कि राम स्वयमेव आकर मुझे इस कैदसे छुटकारा दिलावें। क्या रामके लिये यह अपमानजनक बात नहीं कि कोई दूसरा आदमी उसकी पत्नीको कैदसे मुक्त करावे। हनुमान वापस आये और सारा वृत्तान्त कह सुनाया। राम और लक्ष्मणने सुग्रीवकी सेना लेकर लङ्कापर चढ़ाई की। रावणने सेनाके आनेकी बात सुनी और बड़ा घबराया। परन्तु सीताका मोह उसके दिलसे न गया। उसने कुछ जादूगरोंको बुलाया और एक तद्बीर बनाकर (योजना करके) सीताके पास गया और कहने लगा, देख अब समय आ गया है, तुमको अपनी मूर्खताका फल भोगना पड़ेगा। मैंने कितनी मुसीबत केवल तेरे लिये मोल ली। रामने तुम्हारे साथ क्या किया जो इतना उसके वास्ते दुःख सहन करती है और विलाप करती है। अब भी मेरा कथन स्वीकार कर ले। सीता जोरसे चिल्लाई,—"राम क्या आप मुझे इस पापीके बन्धनोंसे मुक्त नहीं कराओगे।" रावणने कहा-"यह विचार छोड़, राम तो मर गया।" सीता इस बातको सुनकर अभी व्याकुल चित्त हैरान हो रही थी कि रावणने कहा—राम सेना लेकर आया था मेरे सिपाहियोंने उसको घेर लिया और उसका घातकर दिया। देख यह उसका कटा हुआ सिर है जो सिपाही रणक्षेत्रसे उठाकर लाये हैं। यह एक झूठा बनावटी सिर था जो कि असली ही प्रतीत होता था। उसी समय एक अनुष

सीताके सन्मुख फेंक दिया गया जो कि रामके धनुषके समाना-कारवाला था। यह सब देखते ही सीताने एक चीख मारी और बेहोश होकर भूमिपर गिर पड़ी। रावण सीतासे सर्वथा हताश होकर वापस चला गया। रक्षक औरतोंमेंसे एक नेक स्वभाव-वाली थी। उसने सीताको उठा लिया। पानी छिड़का और कानमें कहा—यह सब धोखा था, राम अभी जीवित हैं और लङ्कामें आना चाहते हैं। यह शब्द कर्णगोचर होते ही सीता जाग उठी। इसके बाद राम और रावणमें कई दिनोंतक युद्ध होता रहा। रावण और उसकी सेना बड़े धैर्य और बलपूर्वक युद्ध करती रही, परन्तु सब लड़ते हुए रामके हाथों मारे गये। जिस दिन रावण भी मारा गया, उस दिन रामने लक्ष्मणको आज्ञा दी कि उसके भाई विभीषणको राजगद्दी दी जावे और नगर वासियोंको बता दिया कि यह चढ़ाई केवल पापी रावणको दण्ड देनेके लिये की गयी थी। तुम अपने आप नवप्राप्त स्वतन्त्रता (आजादी) की कदर करो और अपना रहन सहन वैसे ही स्वछन्दता पूर्वक करो, जैसा कि आगे किया करते थे। सीताको विमानपर बैठाकर राम अयोध्याकी ओर चले गये। भरत और सब रानियां उनको देख गद् गद् हो प्रसन्न हुईं और राम अयोध्याके सिंहासनपर विराज-मान हुए। सीता सुखसे अपना जीवन व्यतीत करने लगी। उनके दो बेटे लव और कुश उत्पन्न हुए जिनके शौर्य्यके काम आर्यावर्त्तके इतिहासमें प्रसिद्ध हैं।

द्रौपदी।

स्वयम्वर—"मैं सूतके लड़केके साथ विवाह न करूंगी।" अर्जुनके गलेमें हार डाल दिया गया। दुर्योधनादिको बुरा लगा। दुर्योधनने शीशेको तालाब जाना, कपड़े ऊपर किये। फिर पानी-को शीशा समझकर बीचमें गिर पड़ा। द्रौपदीने हँसी की। जूआ खेलना, युधिष्ठिरका जाना, सब कुछ हार देना, द्रौपदीका भी हार देना, दुःशासनका द्रौपदीको लाना। दूतसे द्रौपदीने पूछा, खोज करो। युधिष्ठिरने पहले किसको हारा है? अपने आपको या मुझको, युधिष्ठिर चुप था। दुर्योधनने कहला भेजा—उसे कहो सभामें आकर प्रश्न करे। दूत फिर गया। द्रौपदीने कहा,—जो परमात्मा चाहता है वही होगा। सुख, दुःख, विद्वान् और मूर्ख दोनोंको आते हैं। धर्म संसारमें बड़ी वस्तु है। धर्मसे आनन्द होता है। इस प्रकार सभामें जाकर कहो, फिर जैसा कहेंगे मैं वैसा ही करूँगी। दुःशासन उसको केश खींचता हुआ लाया, वह हा कृष्ण! हा कृष्ण!! करती थी। कहने लगी—"इस सभामें कोई धर्मात्मा नहीं, क्या हवन यज्ञ करनेवाले सब नष्ट और लुप्त हो गये हैं।" सब क्षत्री धर्मसे च्युत हो गये हैं? अन्यथा कौरव इस प्रकार भरी सभामें मेरा तिरस्कार न करते। भीष्म और द्रोण दोनों भीरु बन गये। धृतराष्ट्र नीच हो गया। उनके चुप्पी साधनेपर उनके सामने इतना अधर्म हो रहा है। दुर्योधन और उसके साथी हँसते थे। भीष्मने केवल इतना कहा,—"धर्म समझना अति दुष्कर है। युधिष्ठिर तुमको हार गया।" विकर्णने कहा, युधिष्ठिरने पापके वश होकर द्रौपदीको दांवपर लगाया। वह स्वयं पहले हर चुका था। मैं समझता हूँ, द्रौपदी स्वतन्त्र है। दुःशासन उसे पकड़कर खींच रहा था। द्रौपदी बोली—स्वयम्वरके समय मैं

सभामें आई, अब यह दूसरा अवसर है, कि लोगोंकी दृष्टि मेरे ऊपर पड़ रही है। समय बड़ा संकटमय खराब है। मेरी कोई नहीं सुनता। सब लोगोंसे प्रार्थना की। धृतराष्ट्र बोला,—"यदि युधिष्ठिर या कोई और कह दे कि तू स्वतन्त्र है, तो तुझे मुक्तकर दिया जावेगा।" युधिष्ठिर लज्जाके मारे चुप अधोमुख था। दुर्योधनने अपनी जाङ्घको नङ्गा करके कहा,—यदि भीम इसे न तोड़े तो वह पतित है। यह वाद प्रतिवाद चल रहा था, कि धृतराष्ट्रके हवन-कुण्डमें गीदड़ बड़े ज़ोरसे बोले। धृतराष्ट्र घबरा गया और द्रौपदीको सन्तुष्ट करने लगा। उससे पूछा—क्या चाहती है? द्रौपदीने उत्तर दिया—युधिष्ठिर आदि सबको बन्धनोंसे रहित कर दिया जावे। फिर धृतराष्ट्रने कहा, कुछ और मांग। द्रौपदीने उत्तर दिया—लोभ करना पाप है, मैं और कुछ नहीं मांगती। वह घरको रवाना हुए, अभी मार्गमें ही थे कि वापस बुला लिये गये, फिर जूआ खेले, फिर हार हुई और वनवासको गये। बनमें कृष्ण मिलने गये। द्रौपदीने कहा, मेरा कैसा अपमान किया गया है। सभामें मेरे केश पकड़ कर घसीटा। पाण्डव कुछ न कर सके। धिक्कार है, भीमकी शूरतापर, अर्जुनके धनुषपर कि कष्टके समय मेरी लज्जा और पतकी रक्षा न कर सके। संसारमें औरतसे बढ़कर किसी औरकी इज्जत ज्यादा कीमती नहीं है। दुर्योधनने उस इज्जतका सत्यानाश कर दिया। कृष्ण बोले, द्रौपदी मत रो। समय निकट आ रहा है, जब तेरे शत्रुओंकी विधवाएं इसी प्रकारका रुदन करेंगी। तू फिर अपनी अवस्थाको प्राप्त करेगी। मैं तुझे विश्वास दिलाता हूँ, कि तेरे दिन फिर लौटेंगे और पाण्डव अपना राज्य फिर स्थापित करेंगे।

द्वैत वनमें युधिष्ठिरसे बातें। दुष्ट, दुराचारी, दुर्योधनको किञ्चिन्मात्र भी हमारे कष्टोंका विचार नहीं, वह इस

समय आनन्दसे अपना समय व्यतीत करता होगा और दूसरी ओर आपकी ऐसी शोचनीय अवस्था है। न तनपर रेशमी वस्त्र ही है, न माथेपर चन्दन, फटे पुराने चीथड़े लपेटे हुए हैं। महलोंके निवास करनेवाले वृक्षोंके तले आश्रय ढूंढ़ रहे हैं। आपकी यह दशा है! मेरे चित्तको कैसे शान्ति हो? आप कष्टमें हैं, भीम असन्तुष्ट हैं। अर्जुनको तीर चलाना भूल गया। नकुल सहदेव विह्वल हैं। क्या कारण है जो आपको क्रोध नहीं आता? लोग कहते हैं कि जिसमें क्रोध है वह क्षत्री है। जो क्षत्री क्रोधसे काम नहीं लेना जानता, उसकी कोई परवाह नहीं करता। * और वरबाद हो जाता है। शत्रुको क्षमा करना भारी भूल है। जिसने कभी कोई उपकारका काम किया है उसकी भूल तो क्षमा की जा सकती है, परन्तु जो सदैव दुष्टता और दुराचार करता है वह क्षमाके योग्य नहीं। उस समय युधिष्ठिर क्रोधकी हानियोंपर कुछ बोले और क्षमाकी उपयोगिता बतलाई, जिसपर आचरण करनेवाला ब्रह्मको प्राप्त करता है। इसपर द्रौपदी कहती है, आप अपने पिता पितामहकी रीति नीतिके विरुद्ध कह रहे हैं। संसारमें जो विरोध दिखाई देता है, वह सब मनुष्यके कर्मोंका फल है। कर्मका परिणाम (फल) अवश्य प्रकट होता है। कहते हैं, जो मनुष्य धर्मकी रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है, परन्तु मैं देख रही हूँ, कि धर्म आपकी रक्षा नहीं करता। आपने सदैव धर्मानुसार आचरण किया, दान दिया किन्तु मन्दबुद्धिके प्रभावमें आकर अपना राज्य पाट सब खो दिया। आपका कष्ट आपत्ति देखकर मेरी बुद्धि तो विचलित हो गई है। परमात्मदेवकी लीला

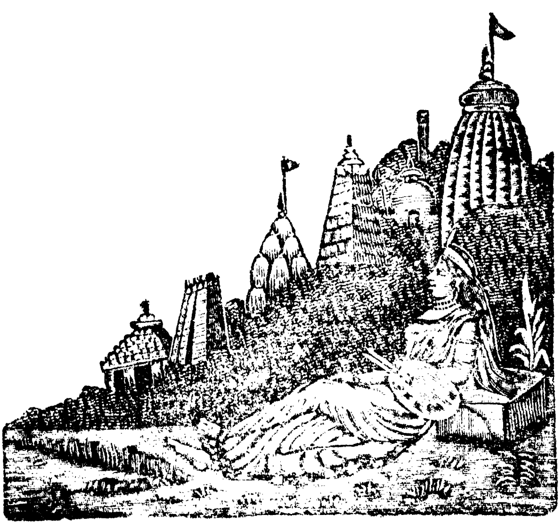
* जैसे शमीवृक्ष (जगड) के भीतर विद्यमान अग्निको प्रत्येक मनुष्य लांघ सकता है। किन्तु प्रज्वलित अग्निको उल्लंघन करनेकी किसीकी सामर्थ्य नहीं। यही दशा एक निस्तेज क्षत्रीकी है।

कुछ विचित्र ही है। दुर्योधनका आनन्दमय राज्य-भोग और आपका संकटमय बनवास देखकर मैं नहीं कह सकती हूँ, क्या अच्छा है और क्या बुरा है। युधिष्ठिरने कहा, मैं धर्म किसी फलकी इच्छासे नहीं करता। मैं यज्ञदानादि करता हूँ क्योंकि वह धर्म है। जो फलकी इच्छा रखता है वह अधम, नीच हैं। जो वेदमें लिखा है, वह माननने योग्य धर्म है। तुम कभी ईश्वरके विषयमें अन्याय, अत्याचारका दोषारोपण मुखपर मत लाना प्रत्युत ईश्वर-को जानकर अमृत प्राप्त करो।

द्रौपदी बोली विपत्तिके कारण मेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। इसलिये शिकायत कर रही हूँ। मेरा तात्पर्य्य केवल इतना है, कि आदमीको कर्म करना चाहिये। मनुष्यको वर्त्तमान अवस्था उसके कर्मोंका फल है। इस जन्मके कर्मोंका प्रभाव अगले जन्मपर पड़ेगा। तुमको भी कर्मके लिये उद्यत हो जाना चाहिये। यदि कर्म न होता तो सारी सृष्टि समाप्त हो गई होती। जो कर्म नहीं करता और भावीपर निर्भर रहता है, वह शीघ्र नष्ट हो जाता है। निश्चेष्ट और कर्मण्यता रहित सुस्त आदमी दरिद्रता (गरीबी) को मानो सदा बुलाता रहता है। अगर आप कर्म करेंगे तो आपकी हैरानी परेशानी दूर हो जायगी। आप राज्य प्राप्त करेंगे। संसारमें सदा कर्म करनेवाले ही सफल होते हैं। सफलताकी कुञ्जी कर्म हैं। सत्यभामा कृष्णकी रानी द्रौपदीसे मिलकर बड़ी प्रसन्न हुई और चकित हो पूछने लगी—क्या कारण है कि पाण्डव तुम्हारा इतना मान करते हैं? द्रौपदी बोली—तू ऐसी बात पूछती है, जिसे नेक औरतें बताना पसन्द नहीं करतीं। मूर्ख स्त्रियाँ अपने मर्दोंको अपने वशमें करनेकी चिन्ता करती रहती हैं। परन्तु जब वशमें रखनेकी चिन्ता स्त्रीके मनमें होती है तो पति घृणा करने लग जाता है। मैं पाण्डवोंकी

दूसरी पत्नियोंको प्रसन्न रखनेका प्रयत्न किया करती हूँ। न मुझमें ईर्ष्या है, न द्वेष। मैं खाना पीछे खाती हूँ। मकान साफ सुथरा और विधि पूर्वक रखती हूँ। मुझको कभी कोप नहीं आता, न कभी कटु-भाषण करती हूँ। मैं स्वयं घरका सारा काम काज करती हूँ। मैं कुन्तीकी सेवामें रत रहती हुई जव भर भी पीछे नहीं हटती हूँ। अपनी सम्मतिको उसकी सम्मतिके अनुकूल रखती हूँ। युधिष्ठिरके महलोंमें अस्सी अस्सी हजार अनाथोंको भोजन खिलाया करती थी। यह सब ब्राह्मण वेदवेत्ता थे। मैं सब नौकरों और नौकरानियोंका नाम जानती थी, और लाखों घोड़े हाथी अपने निरीक्षणमें रखती थी। पत्नीके लिये पतिसे उत्तम कुछ और नहीं, इसीसे उसको पुत्र, पौत्र, भूषण और आनन्द प्राप्त होता है। जब मर्द यह समझ लेता है कि यह पत्नी मुझे प्यार करती है, वह उसका हो जाता है। तू भी कृष्णको ऐसी ही प्रिय हो जा। कोई बात उससे गुप्त न रख। जब पति समीप हो, लड़कोंसे भी बातचीत करना उचित नहीं है। उनके मानका खयाल रखना आवश्यक है। तेरा सङ्ग उन औरतोंसे हो, जो नेक और सच्ची हों। युद्धका अन्त होता है। अश्वत्थामाका पिता सुप्रसिद्ध द्रोणाचार्य धोखा देकर मारा गया था। उसके मनमें क्रोधकी प्रचण्ड अग्नि प्रज्वलित हो रही थी। उसने रात्रिको छापा मारकर सब पाण्डवोंको नाश कर देनेकी ठानी। अतः उस रात्रिके आक्रमणमें उसने धृष्टपुत्र और द्रौपदीके सब पुत्रोंको मार दिया। जब यह कुसमाचार प्रातःकालको द्रौपदीके कर्णगोचर हुआ, तो शोकसे व्याकुल और दुःखसे कांपती हुई बेहोश होकर गिर पड़ी। भीमको अश्वत्थामाके इस कृत्यपर बड़ा क्रोध आया, और उसने उसके हननका निश्चय किया। द्रौपदीने केवल इतना कहा,—"मैंने सुना है कि

अश्वत्थामाके मुकुटमें एक गजमुक्ता (मोती) है। उसके घातके पश्चात् वह जवाहर (मोती) महाराज युधिष्ठिरके सिरपर सजेगा। केवल यह खयाल मुझे जीवित रखेगा। वह जवाहिर भीमने लाकर द्रौपदीको दिया। उसने उसे युधिष्ठिरके सिरपर अपने हाथसे रक्खा। सर्वसाधारणमें यह प्रसिद्ध है कि वही हीरा आजकल "कोहेनूर" के नामसे विख्यात है जिसका इतिहास बड़ा ही मनोरञ्जक हुआ। राजपूतोंके पास दीर्घकाल तक रहा। लोधी बादशाहसे मुगलोंको मिला। मुगलोंसे नादिरशाहने लिया। उसकी सन्तान तथा उत्तराधिकारियोंसे रणजीत सिंहने वापस लिया। जिसे दिलीपसिंहको गद्दीसे उतारनेके बाद अँग्रेजी सरकारने अपने अधिकार और स्वामित्वमें लिया। अब वह आंगल देशके राजाके ताजमें अपनी शोभा देता है।



बौद्धोंका काल।

वैदिक कालका समाज—वैदिक युगका इतिहास केवल उस समयका चित्र ही दिखाता है। उस समय सोसायटी (सामाजिक जीवन) अभी बन ही रही थी। मनुष्योंके समाजमें कोई शक्तिशाली Political force (राजनैतिक बल) नहीं उत्पन्न हुआ था कि उसको तरङ्गित करके आगे पीछे करता। प्रत्येक मनुष्यका बड़ा आदर्श व्यक्तिगत उन्नति था। जिसके लिये राजा और प्रजा, पुरुष और स्त्री अपने अपने स्थानपर प्रयत्न करते थे। उसके लिये ध्यान बड़ा साधन था, और ज्ञानकी चर्चा जीवनके लिये परम लाभकारी जानी जाती थी। ब्राह्मणोंकी तो जाने दो, क्षत्रिय लोग भी अपना राज्य प्रवन्ध करते हुए भी ज्ञान ध्यानमें ही लगे रहा करते थे। जितने उदाहरण पहिले दिये जा चुके हैं, उनसे यही विदित होता है, कि तात्कालिक समाज संस्थामें स्त्रियोंका भी पुरुषोंके समान ही भाग था।

ज्यों ज्यों देशकी जन-संख्या बढ़ती गई। प्रजा फैलनी आरम्भ हुई। सब लोग इस कारण ज्ञान ध्यानमें समय नहीं दे सकते थे। लोगोंके लिये सांसारिक आवश्यकतायें बढ़ गईं। अध्यात्म वादसे हटकर मनःप्रवृत्ति लौकिक धन्धोंमें अपेक्षाकृत अधिक होने लगी। उस समय समाज नियंत्रणके लिये नियम बनाये गये। और कर्म काण्डपर अधिक बल दिया गया ताकि साधारण लोग अपने धर्म और कर्त्तव्यसे च्युत न हो जायें और अपना काम विधि पूर्वक करते जायें और सब कर्मोंको यज्ञ ही का रूप दिया गया। इन कर्मोंका उद्देश्य समाजका भला करना था। हरएक आवश्यक कामको यज्ञका नाम दिया गया। काल बीतनेपर यज्ञोंपर अत्यधिक बल दिया गया। शनैः शनैः पशु हिंसा भी यज्ञका

एक भाग हो गया। एक समय आया जब सब कर्मोंके साथ पशुहिंसा एक आवश्यक अङ्ग बन गया।

वस्तुतः यज्ञका अर्थ आत्मामें पाशविक भावोंका मर्दन था और आरम्भमें पशुको, उन अमानुषिक विषय वासनाओंके चिह्नमात्र पशुको, यज्ञ-वेदीपर रक्खा जाता था। यह पशु आँटा आदिका बनाया जाता था। कुछ कालके बाद जीवित पशु ला कर रक्खे जाने लगे और अन्ततः मारे जाने लगे। उनका मारा जाना बड़ा धर्म समझा जाने लगा।

सारा समाज बिगड़ता गया। जनोत्पत्तिकी अधिकताके कारण सार्वजनिक शिक्षाका प्रबन्ध किया गया। यद्यपि आचार्योंके आश्रम विद्यमान थे; जिनमें विद्यार्थी जाकर रह सकते थे और गुरु चरणोंमें विद्या प्राप्ति कर सकते थे, पर उस कालमें छापा न था, पुस्तकें अधिक न थीं। इस कारण विद्या सर्वसाधारणमें नहीं फैली हुई थी और न पढ़ानेवाले आचार्य ही पर्याप्त थे। लोक संख्याका बढ़ना मानो अविद्याका बढ़ना था। इस अविद्यासे अन्धकार बढ़ता गया और यज्ञादि कर्म बिगड़ते गये। ऐसी पतितावस्थामें बौद्ध धर्मका प्रचार देशमें हुआ। शाक्यमुनि गौतम कपिलवस्तुके राजाके घर उत्पन्न हुआ। वह बाल्यावस्थामें ही एक बार अपने बच्चेके साथ शिकारको गया। एक पक्षीको मरते देख उसके अश्रुपात होने लगा। उसपर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि यह आवश्यक जाना गया, कि उसकी शिक्षाका प्रबन्ध नगरसे दूर एक विशेष मकानमें किया जाये। जहां बाहरका कोई रोगी दुःखित तथा पीड़ित आदमी न जा सकता था। अन्ततः गौतमके ब्रह्मचर्य कालकी समाप्तिपर उसका विवाह हो गया। वह एक दिन नगरमें घूमनेके लिये गया। क्या देखता है कि एक बूढ़ा अन्धा बाल बिखरे हुए भिक्षा मांग रहा था।

बुद्धने अपने साथियोंसे पूछा, यह कौन है। उसे बताया गया, कि वह एक मनुष्य है, जिसकी रोगके कारण आंखें खोई गईं। आगे चलते हुए एक कुबड़ा आदमी दृष्टिगत हुआ, जो कि लकड़ीके सहारे चल रहा था। फिर एक लाश नजर आई। जिसके साथ बहुतसे स्त्री पुरुष रोते जा रहे थे। बुद्धने पूछा कि यह दृश्य क्या है? उसे बताया गया कि कोई आदमी मर गया है और यह सब रोनेवाले उसके सम्बन्धी हैं। यह बुढ़ापा, बीमारी और रोगका देखकर बुद्धके हृदयपर बड़ा प्रभाव पड़ा। उसने कहा, यह संसार तो दुःखका सागर है। इससे दुःखको किस प्रकार दूर करना चाहिये। उस दिन उसके घर बच्चा पैदा हुआ था, जिस दिन गौतमने संसार त्यागनेका निश्चय कर लिया। वह रातके वक्त उठा। उसने बाहरसे बच्चेके दर्शन किये, और घोड़ेको साथ लेकर जङ्गलको चल पड़ा। यह घटना "महा-त्याग" कहलाती है। थोड़ी दूर जाकर घोड़ा और अपने कपड़े नौकरके हाथ वापस कर दिये और आप अकेला जङ्गलोंमें फिरने लगा। उसनेबनारसमें बहुत कालतक विद्या प्राप्त की। फिर वर्षों-तक योग करता रहा। अन्तको उसे एक दिन ज्ञान हुआ, कि इस ब्रह्माण्डमें कर्मका नियम काम करता है। यज्ञादि करने निरर्थक हैं। वेदोंके केवल पढ़ने पढ़ानेमें बहुत लाभ नहीं है। ख़ाली अच्छा कर्म ही कर्मोंके नियमोंसे स्वतन्त्र कर सकता है। हृदयके अन्दर इच्छाका त्याग देना ही निर्वाणका एक साधन है। उसने अपना एक मत निकालकर कुछ शिष्य अपने साथ इकट्ठे किये और उनको लेकर जैसा कि उस समय दूसरे मत मतान्तरोंवाले आचार्य किया करते थे, स्थान स्थान घूमना और प्रचार करना शुरू कर दिया। उसने अपना नाम बुद्ध रखा अर्थात् जिसे ज्ञान अथवा बोध प्राप्त हो गया हो। उसके प्रत्येक चेलेके

लिये निर्वाण प्राप्त करना, जीवनका आदर्श था। इसके लिये संसारका त्याग बड़ा आवश्यक था। जो लोग इस मार्गपर चल पड़ते थे, वे भिक्षु और स्त्रियां भिक्षुकियां कहलाती थीं। जब प्रचार करते करते बुद्ध अपने नगरको वापस आया तो हरएक घरानेने एक नौजवान लड़का या लड़की उसके अर्पण की। यह भिक्षु जगह जगह बुद्धका धर्म प्रचार करते थे। बात केवल स्मरण रखने योग्य इतनी है कि बौद्ध धर्मके प्रचारमें स्त्री जातिका भी बहुत भाग था। जब बुद्ध अपने नगरको आया तो उसने स्त्रियोंका एक मण्डल बनाया, जो उसके धर्मका प्रचार करें। उसकी अपनी पत्नी "यशोधरा" इस मण्डलमें सम्मिलित हुई।

जब बौद्ध धर्म देशमें फैल रहा था, उस समय सिकन्दर पहिला विदेशी यूनानसे अपनी फौज लेकर रवाना हुआ। ईरान देशको विजय करके वह पञ्जाबपर चढ़ आया। तक्षशिलाकी राजधानीसे होता हुआ, झेलम नदीपर पहुंचा। यहांके राजा पुरूने उसका सामना किया। राजा पुरूके हाथी डरकर वापस भाग पड़े और राजाकी सेना पराजित हुई। सिकन्दर पुरु राजाकी बहादुरीपर बड़ा प्रसन्न हुआ, और उससे पूछा कि तुम्हारे साथ कैसा बर्ताव किया जाय? पुरूने उत्तर दिया जो राजाओंके प्रति करना चाहिये। सिकन्दर उसका राज्य उसे देकर आगे बढ़ा। चन्द्रभागा नदीके समीप दो कुलोंने (फिरके) (Tribes) ने आपसमें सहयोग करके सिकन्दरसे भिड़ना चाहा। पर कौन जरनैल बने, इसपर झगड़ा हो गया और सामना न कर सके। ब्यासके पास सिकन्दरकी सेना थक गई, और उन्होंने आगे बढ़नेसे इनकार कर दिया। यहांपर सिकन्दरने कुछ संन्यासियोंको देखा जो उसके बुलानेपर उसके पास न आये, और बिलकुल निरक्षेप, बेपर्वाह रहे। सिकन्दर उनके आत्मबलसे

इतना प्रभावित हुआ, कि उसे यह इच्छा हुई कि वह किसी न किसी संन्यासीको अपने देशमें ले जावे। कोई साथ जानेपर राजी न होता था। बड़ी कठिनतासे उसने एक ब्राह्मणको साथ जानेके लिये तय्यार किया। वह मार्गमें ज्वरसे रोगी हो गया और उसने अपने शरीरको त्याग देनेका निश्चय कर लिया। चिता बनवाकर उसपर चढ़ गया और उसमें आग लगा दी। सिकन्दरके कुछ साथियोंने आर्यावर्त्तका कुछ वृत्तान्त लिखा है। जिसमें स्त्रियोंके रूप और पवित्रताकी भूरि भूरि प्रशंसा की है। सिकन्दरके एक जेनरलकी लड़कीसे चन्द्रगुप्तने विवाह किया और वह बड़ा राजा बन गया। उसका मन्त्री चाणक्य सुप्रसिद्ध नीतिज्ञ हो गुजरा है। उसका पोता अशोक हुआ। अशोकने एक ही लड़ाई की, जिसमें उसकी अनगिनती सेना मारी गई। उसके मनपर इसका इतना असर हुआ, कि उसने फिर कोई युद्ध न किया और अपना आदर्श यह बना लिया, कि धर्मकी विजय ही सच्ची विजय है। उसने बौद्ध धर्म ग्रहण किया और उसे दूर देशोंमें फैलानेके लिये बड़ा प्रयत्न किया। उसका अपना लड़का महेन्द्र लङ्काको और लड़की चारुमती नेपालमें धर्म-प्रचारिका बन कर गई। उसके राज्य-शासनमें बौद्ध धर्म सारे सीमा प्रान्त (सरहद) और उस प्रान्तमें जहां आजकल अफगानिस्तान है, फैल गया। तक्षशिलाके स्थानपर वर्त्तमान रावलपिण्डीसे कुछ दूरपर पुराने खण्डहर निकले हैं, जहां बौद्धोंका एक बड़ा विश्वविद्यालय था। यह खण्डहर पहाड़ियोंके नीचेसे खोदकर निकाले गये हैं। इसी प्रकार मालाकन्द और पेशावरमें भूमि खोदनेपर बौद्धोंके बड़े बड़े मन्दिर निकले हैं। काशमीर प्रान्तमें और श्रीनगरसे कुछ मीलकी दूरीपर और आवन्ती नगरके खण्डहर भी बौद्ध धर्मके फैलनेकी पुरानी यादगारें हैं, जो कि यह

बतलाती हैं कि समय कैसा परिवर्तन शील है। कुछका कुछ हो जाता है। इधर ब्रह्मदेशमें, तिब्बतमें, चीन और जापानमें बौद्ध धर्मका प्रचार हुआ। चीनके यात्री शताब्दियोंतक अत्यन्त दूरकी यात्राका कष्ट सहनकर बुद्ध गया दर्शनके लिये आते थे। जिनमें मेगास्थनीज, ह्यूनसांग और फाहियानने भारतवर्षका वृत्तान्त लिखा है। ह्यूनसांग कहता है, कि इस देशका नाम इन्तु नहीं प्रत्युत इन्दु है, जिसका अर्थ चन्द्र है। जैसे चान्द सारे ब्रह्माण्डको प्रकाशित कर देता है और तारे निष्प्रभ हो जाते हैं उसी तरह इस देशके प्रकाशने संसारको प्रकाशित कर दिया है।

जब यह धर्म देश देशान्तरमें फैल रहा था, तब इस देशमें ब्राह्मण लोग अपने धर्मको पुनः जागृत करनेके लिये सिर तोड़ कोशिशमें लगे थे। ह्यूनसांग हमें बताता है, कि जहां कहीं वह जाता था दोनों दल एक दूसरेके विरुद्ध बढ़नेके लिये चेष्टा कर रहे थे। शताब्दियों तक यह विरोध जारी रहा। ग्राममें नगर नगरमें राजस्थानोंमें सब जगह यह झगड़ा दिखाई देता था। जब प्रयागके विख्यात राजा शिलादित्यने "महात्यागकी" अपनी रसम की तो उसे बुद्धों और वेद धर्मावलम्बी ब्राह्मणों दोनों दलोंको बुलाना पड़ा। उनमें उसने सब शाही सामान बांट दिये।

जैन और बौद्ध धर्मके भारतवर्षसे बहिष्कृत कर देनेमें दो बड़े महापुरुषोंके कार्यका वर्णन है। एक कुमारिल भट्टाचार्य और दूसरे स्वामी शंकराचार्य। एक दिन कुमारिल भट्ट जा रहा था कि उसे राजाके महलसे आवाज़ सुनाई दी—कहां जाऊं क्या करूं, कोई वैदिक धर्मको रक्षा करेगा। ऊपर देखा राजाकी लड़की थी जो यह कह रही थी। कुमारिल भट्टने उत्तर दिया—मत रो, अरी राजकुमारी, कुमारिल भट्ट पृथिवीपर विद्यमान है। वह जैनों और बौद्धोंके विद्यालयमें जा प्रविष्ट हुआ। और विद्या समाप्त करके

उनका अच्छी प्रकार खण्डन किया। उसे हर घड़ी यह चिन्ता रहती थी कि उसने बौद्धोंको गुरु बनानेमें धोखेसे काम लिया है। अतः अपनी आत्माको प्रायश्चित्त करके शुद्ध करना चाहिये। इसी लिये उसने चावलोंके छिलकेके ढेरमें बैठकर शरीरको जला दिया। जब स्वामी शङ्कराचार्यने बुद्ध और जैन धर्मके विरुद्ध प्रचार आरम्भ किया तो उसका बल केवल विद्या और युक्ति था। इसके लिये उसे वैदिक धर्म माननेवाले ब्राह्मणोंके साथ भी मुकाबला करना पड़ा। ऐसा एक पुरुष मण्डन मिश्र नामी प्रसिद्ध विद्वान् था। शङ्करने उसके साथ शास्त्रार्थ करना चाहा। कोई मध्यस्थ न मिलता था। मण्डन मिश्रकी पत्नी विद्याधरीको मध्यस्थ बनाया गया। शास्त्रार्थ समाप्त होनेपर उसने अपने पतिके विरुद्ध फैसला दिया कि वह हार गया। किन्तु वह आधा हारा है क्योंकि उसका आधा अङ्ग मैं हूं और मैं अभी शास्त्रार्थके लिये उद्यत हूं। शङ्करने कहा कि मैं स्त्रीके साथ शास्त्रार्थ नहीं करूँगा। इसपर विद्याधरीने कहा—इसमें स्त्रीपुरुषका कोई प्रश्न नहीं। तुम अपना मत मण्डन करो, मैं दूसरा मत मण्डन करूँगी। यह तो युक्तिकी बात है। सुलभासे जनकने शास्त्र पर वाद विवाद किया। गार्गीने याज्ञवल्क्यसे शास्त्रार्थ किया। तुम क्यों पीछे हटते हो? अनन्तर शङ्करको मानना पड़ा और विद्याधरी भी हार खाकर उसके मतमें आ गयी। मण्डन मिश्र सोमेश्वराचार्यके नामसे प्रसिद्ध हुआ और उसने शङ्करके कामको बड़ी सफलतासे पूर्ण किया।

आर्य धर्मकी विजय।

जहांपर दूसरे देशोंके इतिहासोंमें हमें राजाओंकी लड़ाइयोंके वृत्तान्तोंको पढ़ना पड़ता है, आर्यावर्त्तका सहस्रों वर्षों का इतिहास केवल दो मतोंकी परस्पर मुठभेड़का दृश्य है। बौद्ध धर्मके हकमें यह बड़ी बात थी कि उसने सोसायटीकी पुरानी वर्ण व्यवस्थापर आक्रमण किया। उसका मौलिक सिद्धान्त यह था कि सब मनुष्य एक समान हैं। विशेष विशेष श्रेणियाँ (Classes) के लिये विशेष अधिकारोंका होना निरर्थक है। पुरानी वैदिक सोसायटी मनुष्योंमें असमता है, इस पर आश्रित थी। यह असमता प्रकृतिने उत्पन्न की थी। सब मनुष्य बुद्धि बल शारीरिक बलमें बराबर न थे। इसलिये ब्राह्मण धर्मके अनुकूल विशेष मेधाशील होनेके कारण समाजमें अधिक अधिकार भोग करते थे। उनका काम केवल ज्ञानोन्नति करना और साधारण जनतामें उच्च विचारोंका प्रचार करना था। उनका आनन्द रुपया कमानेमें न था प्रत्युत ज्ञान प्राप्तिमें। वह जन समाजका मस्तिष्क और सरकी जगह थे। बाकीके तीन गण उनके सत्कार और पूजाके लिये थे और उनके लिये अपने भी विशेष काम थे।

इन्हीं लोगोंको बौद्ध धर्मकी नवजात शक्तिसे सामना करना पड़ा। बौद्ध धर्मकी निर्बलता यह थी कि उनके पास कोई नई फिलासफी (विचार तरङ्ग) न थी। उनके समस्त सिद्धान्त ब्राह्मणाचार्यों के भिन्न भिन्न दर्शन ग्रन्थोंमें पाये जाते थे। जिनकी सख्या पचासके ऊपर थी। ब्राह्मण लोग सब प्राचीन सभ्यताके स्वामी थे। उन्होंने इस सभ्यताको उसकालमें जन्म दिया

था जब कि पुस्तकोंका मिलना बड़ा कठिन था। जब कि अक्षर विज्ञानका भी आविर्भाव न हुआ था। उनलोगोंने अपने मस्तिष्कोंको किताबें और पुस्तकालय बनाकर सभ्यताको पैदा किया और फैलाया और जीवित रक्खा। इन ब्राह्मणोंके महत्वका तिरस्कार करके उनसे मुख मोड़ लेना मानो जातिके सारे उज्वल भूतको विनष्ट करना था। इन ब्राह्मणोंका सिक्का अभी लोगोंके दिमागोंपर जमा हुआ था और बुद्ध धर्म इतनी उत्तम शिक्षा देनेपर भी उस पुरातन आर्य धर्मको उखाड़ न सका।

बौद्ध धर्मके सार्वजनिक प्रचारसे संस्कृत भाषाको एक धक्का लगा। अभीतक आर्य जातिके सुशिक्षित मण्डलकी भाषा संस्कृत ही थी। यद्यपि दूसरी छोटी श्रेणियाँ उसकी बहुत बिगड़ी हुई बोली (प्राकृत) बोलती थीं। इस समय मध्यम एशियासे कई वंश नये आये थे। वह अपनी भाषाको यहांकी प्रचलित भाषासे मिलाते गये। जब बुद्ध धर्मके प्रचारसे साधारण लोगोंका दरजा ब्राह्मणोंके बराबर हो गया तो संस्कृतकी जगह प्राकृत अर्थात् बिगड़ी हुई आर्य भाषाका दर्जा भी बढ़ गया और देशभरमें प्राकृत ही पढ़ी और लिखी जाने लगी। इसकी एक शाखावली बुद्ध धर्मावलम्बियोंकी पवित्र भाषा थी। अर्थात् वह प्राकृत जो मगध देशमें बोली जाती थी। ब्राह्म देश आदि स्थानोंमें यही पाली अभी तक उसी सम्मानकी दृष्टिसे देखी जाती है। यद्यपि ब्राह्मण धर्मने देशमें फिर विजय प्राप्त कर ली, तथापि उनके लिये शताब्दियोंके पश्चात फिर संस्कृत भाषाका एक जीवित जागृत भाषाके रूपमें प्रचार करना असम्भव सा हो गया। इस प्राकृतका कई रूपान्तर बंगालने बंगाली, मरहठी, गुजराती, आदि शनैः शनैः बन गये।

ब्राह्मण, सभ्यता और संस्कृत भाषाको छोड़कर तीसरा बड़ा

प्रभाव बौद्ध धर्मका क्षत्रिय वर्णस्थ लोगोंपर हुआ। वर्णव्यवस्थाके अनुसार क्षत्रिय दलमें वह लोग प्रविष्ट होते थे, जो कि असाधारण शारीरिक बल और दृढ़ हृदय रखते थे। उनका काम राज्य प्रबन्ध करना था, ताकि निर्बल असहाय लोगोंपर कोई अन्याय वा दुराचार न हो सके। बौद्ध धर्मके फावड़ेने इस श्रेणीको भी दूसरोंके निर्विशेष कर दिया। बौद्धमतके उदयकालमें विदेशी लोग बहुसंख्यामें इस देशमें आने लगे। बहुतेरे लोग तो आकर यहां बस गये और बहुतेरोंने कई प्रान्त विजय करके अपनी राज्य-स्थापना की। लेकिन साथ ही उन्होंने बौद्धमतको ग्रहण कर लिया। इन आक्रमण करनेवालोंका "शक" नाम दिया जाता है। पुराने क्षत्रियोंमें एक प्रसिद्ध वंश रह गया जो कि उज्जैनमें राज्य किया करता था। इस वंशका विख्यात राजा विक्रमादित्य हुआ है। उस राजाके दरबारमें संस्कृत भाषा और विद्याका अपेक्षाकृत अधिक सम्मान था। यही एक सुविख्यात राजा था, जिसने वैदिक सभ्यताकी हर प्रकारसे रक्षा की। यह इतना दानशील और धर्मात्मा था कि उसकी शुभ स्मृतिमें उसके नामपर नया संवत् जारी किया गया है, जो समस्त उत्तरीय भारतमें प्रचलित है। उसके समकालीन या उसके लगभग दक्षिणमें शालिवाहन एक प्रसिद्ध राजा था। उसके नामपर सम्वत दक्षिणमें पाया जाता है। विक्रमादित्यने "शक" लोगोंके आक्रमणोंसे देशकी रक्षा की। जब देश इस प्रकार बाहरके आक्रमणोंसे और आन्तरिक संघर्षणसे एक गड़बड़ अवस्थामें पड़ गया तो उस समय आवश्यकता हुई कि इसको नियमबद्ध प्रबन्धमें लानेके लिये क्षत्रिय उत्पन्न हों। इस सम्बन्धमें पुराणमें कथा पाई जाती है कि आबू पर्वतपर बड़ा भारी यज्ञ किया गया और उस यज्ञकुण्डमेंसे नई

राजपूत जाति पैदा हुई। जिससे अग्निकुल राजपूत पैदा हुए। यह इन राजपूतोंका ही प्रभाव था कि आर्य्यावर्तके भिन्न भिन्न देशोंमें पुनः एकबार आर्य क्षत्रियोंका राज्य हो गया। इस सारे परिवर्त्तनका सविस्तर वृत्तान्तका मिलना तो अति दुष्कर है। इतना प्रतीत होता है कि जब आर्य धर्म्मने देशमें अपनी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली तो राजपूत वंशोंके राजाओंको रियासतें कन्नौज, दिल्ली, अजमेर आदि बड़ी बड़ी राजधानियोंमें पाई जाती थीं। कई स्थानोंपर ब्राह्मण भी राज्य करते थे। उदाहरणतः लाहौरका राज्य ब्राह्मण वंशके अधिकारमें था। इसी प्रकार सिन्धका राजा भी ब्राह्मण था। लगभग एक सहस्र वर्ष तक आर्य सभ्यताको बौद्धोंकी सभ्यताका सामना करना पड़ा। इस संघर्षमें सफलता प्राप्त करके आर्य लोग अपने आन्तरिक प्रबन्ध स्थापनामें सन्नद्ध थे कि उनको एक और बड़े शक्तिशाली आक्रमकोंसे सामना करना पड़ा और वह इसलामकी लहर थी। विक्रमादित्यकी सातवीं शताब्दीसे आरम्भ होकर एक सहस्र वर्ष और नई मुठभेड़में (Strugle) गुज़रा जो कि दस हज़ार वर्षका भारतवर्षका इतिहास बनाता है।

इस्लामके साथ मुठभेड़।

पहला अध्याय

इस्लाम धर्म्म अरब देशमें शुरू हुआ। इस धर्म्मका प्रवर्त्तक हज़रत महम्मत हुआ है। अरबके रहनेवाले आज़ाद जाति के (tribe) थे, जो कि इधर उधर फिरते रहते थे और आपसमें लड़भिड़कर काल व्यतीत करते थे। हज़रत महम्मदने उन बद्दू-कबीलोंके परस्पर ईर्षा द्वेशका अग्निमें जलाकर एक प्रभावशाली शक्ति बना दिया। इस्लाम धर्म्मके साथ अन्य देशोंमें राज्य करनेका भाव पहले हीसे मिला हुआ था। महम्मद साहबने एक युद्धशील शक्ति बनकर ही बद्दू कबीलोंको एक किया था। अब इस धर्मके दो वेग दो दिशाओंमें रवाना हुए। एकने तो अफ़रीकाके किनारे मिश्र आदि मुल्क होते हुए यूरूप पर आक्रमण किया। स्पेनको जीतकर इसलाम सात सौ वर्ष वहां राज्य करता रहा। यदि पैरिसके बचानेके लिये यूरूपकी सेनाएँ एकत्रित न होतीं और यदि मुसलमानोंमें फूट न पड़ जाती तो आश्चर्य नहीं, कि आज समस्त यूरूप मुसलमान होता। इस धर्मका दूसरा वेग ईरान अफ़ग़ानिस्तान आदिको मुसलमान बनाता हुआ भारतपर चढ़ आया, परन्तु इससे पूर्व ही एक आक्रमण सिंधपर समुद्रके रास्ते किया गया, जिस कारण मुसलमानी राज्य चिरकाल तक सिंधमें रहा। ख़लीफ़ाकी

तरफ़से अबुलकासिमने सेना लेकर सिंधपर आक्रमण किया। सिंधका प्रसिद्ध राजा दाहर था। राजा दाहरने बड़े शौर्यसे मुसलमानी सेनाकी प्रतिद्वन्द्विता (मुकाबला) की। मुसलमानी सेनामें ताज़ा जोश और नवजीवन था। राजाकी सेना हारने लगी। राजाकी रानी और अन्य स्त्रियोंने पुरुषोंका वेष विन्यास किया और तलवारें हाथमें लेकर रक्षाके लिये उपस्थित हुईं। अति शौर्य होनेपर भी अबुलकासिम दुर्गका मालिक बन गया और उसने राजाकी दो लड़कियां खलीफ़ाकी ओर उपहारके रूपमें भेजीं। खलीफ़ाके पास जाकर दोनों ज़ार ज़ार रोने लगीं। ख़लीफ़ाने कारण पूछा, जिसपर उत्तर मिला कि अबुलकासिमने उनके सतीत्वको खराब किया है। ख़लीफ़ा इतना क्रुद्ध हुआ, कि उसने आज्ञा दी कि अबुलकासिमको कतल करके उसकी खलड़ीमें भूसा भरकर वापिस भेजा जावे। जब उन्होंने अपनी आँखोंके सामने अपने पिता और वंशके रिपुके मृत शरीरको देखा तो यह कहकर कि हमारा जो ठंडा हो गया है अपने आपको मौतके हवाले कर दिया। कोई डेढ़ सौ साल और गुज़र गया कि अफ़गानिस्तानकी ओरसे भारतवर्षमें आक्रमण होने आरम्भ हुए। अफ़गानिस्तानपर ग़ज़नी खानदानका राज्य जम गया था और उन आक्रमणोंका आरम्भ पहले पहल लाहौरके राजा जयपालकी ओरसे हुआ। उसने अफ़गानिस्तानपर हमला किया, उधरसे सुबक्तगीन रक्षाके लिये आया। पंजाबी सेना हिमकी सहनसे परिचित न थीं, शरद् ऋतु आगया, सर्दी और बरफ़ पड़ने लगी। जिस पर राजाको कुछ दण्ड (जुर्माना) देनेकी प्रतिज्ञा करके वापिस लौटना पड़ा। यह तावान राजाकी ओरसे न भेजा गया, जिससे लाहौर पर सुबुक्तगीनने आक्रमण किया। इस युद्धमें उसे प्रतीत

हुआ कि अफ़गानिस्तानके लोग युद्धमें अधिक निपुण हैं। हार जानेके अनन्तर जयपालने अपने आपको राज्य करनेके योग्य न समझा, राज्य अपने पुत्रको समर्पण करके चिता पर बैठ मृत्युको प्राप्त हुआ।

सुबुक्तगीनके बाद उसका पुत्र महमूद राज्य पदको प्राप्त हुआ, खलीफ़ाने उसे भारतपर आक्रमण और धर्मका विस्तार करनेका उपदेश दिया। उसे स्वयं भी आक्रमणोंका शौक था। उसने भारतवर्षके प्रसिद्ध और पवित्र स्थानोंपर १७ आक्रमण किये। एक आक्रमण लाहौरपर था। इस युद्धमें स्त्रियोंने अपने भूषणोंसे अपनी सेनाओंकी सहायताकी और चरखे कात कात कर देशकी रक्षाके लिये सेवा की।

बाकीके आक्रमण काशमीर, काँगड़ा, मथुरा, सोमनाथ आदि नगरोंपर हुए जिनसे इतना ज्ञात होता है कि देशकी रक्षाका उपाय नहीं था और नहीं कोई साझी जातीय भावकी तरङ्ग थी। आक्रमण करनेवाला सैंकड़ों हजारों कोश बिना रोक टोकके चला जाता था और मार्गमें मनुष्यों और घोड़ोंके लिये रसद्का सामान प्राप्त करता जाता था और जब एक शहर पर आक्रमण होता तो साथके हमसाया शहर इतना समझ कर भी सहायता नहीं करते थे कि अगली दफ़ा उनकी बारी भी आ जायगी।

इन आक्रमणोंमें महमूद और उसकी सेनाओंने शहरोंकी बड़ी तबाही की। मन्दिरोंको बरबाद करके मूर्त्तियोंको तोड़ा। स्त्रियों और बालकोंको दास बना लिया और बहुतेरे लोगोंको मुसलमान बनाया। ब्राह्मण लोग अपनी अपनी पुस्तकें साथ लिये दूरके स्थानोंमें जा निकले ताकि उनको किसी प्रकार बचा सकें। इन सब घटनाओंकी (साक्षी) अलबेरूनीकी

सुप्रसिद्ध पुस्तक "इण्डिया" में मिलती है। यह मनुष्य महमूदके साथ दासके तौरपर रहता था। उसने तत्कालीन भारतकी दशाका बड़ा सुन्दर चित्र खैंचा है। उन लोगोंके साथ जो निज धर्म्म त्याग कर विरोधियोंमें जा मिलते थे, सामाजिक बहिष्कार आरम्भ हुआ। जिस कारण किसी मुसलमानके साथ विवाह भोजन, स्पर्श आदि यहाँ तक कि उनके छायाके पाससे भी गुज़रना पाप समझा गया। क्योंकि आक्रमणकारी कुमारी युवती लड़कियोंको ले जाना नेकी समझते थे। आर्य्योंमें बाल्यावस्थामें विवाहकी रीति प्रचलित हुई ताकि विवाहित होकर वह विरोधियोंके हाथसे बच सकेंगी। यह घृणित प्रथा जो कि बलात्कार देशको प्रचलित करनी पड़ी, अभी तक असंख्य विधवाओंकी शारीरिक दुर्दशाका फल उत्पन्न कर रही हैं। इस अशान्तिमय और भयानक अवस्थामें ही पर्दाकी रीति जारीकी गई, क्योंकि जीवन और मालका डर था। इसलिये एक स्थानसे दूसरे स्थानको अधिक सुरक्षित जानकर चले जाते थे और अपने पुराने स्थानों और पूर्वजोंको स्मरण रखनेके लिये अपने आपको पृथक पृथक नामोंसे अपना परिचय देने लगे, जिससे देशके अन्दर उपजातियोंका रिवाज पड़ा, जिसकी संख्या इन अशान्तिके दिनोंमें बढ़ती बढ़ती अब लाखोंतक पहुंच गई है। पारस्परिक रक्षाके लिये एकत्रित होकर नई उपजातियां कई लोगोंने बनाईं। भिन्न भिन्न व्यवसायवालोंने अपने लिये पृथक् पृथक् उपजातियां नियत कर लीं।

इस्लामसे संघर्षण।

दूसरा अध्याय।

लगभग दोसौ वर्ष और व्यतीत हो गये। उधर गजनीके राज्यमें परिवर्त्तन हो गये, गोरके सरदारोंने गजनीपर अधिकार स्थापन कर लिया। इधर भारतवर्षमें यह शताब्दियां जैसीकी तैसी ही व्यतीत हो गईं। यहांके राज्याधिकारियों और नीतिज्ञोंने पिछले आक्रमणोंकी आपत्तियोंसे न तो कोई शिक्षा प्राप्त की और न कोई ऐसा प्रयत्न ही किया कि यदि देशपर ऐसी आपत्तियां फिर आईं तो कैसे आत्म रक्षा करेंगे। आपत्तिके पड़नेपर उससे बचनेका उपाय सोचना नीच कोटिकी नीति है। एक सुनीतिमानका कर्त्तव्य है कि वह होनेवाली घटनाओंको देखें और हर प्रकारकी आपत्तियोंका सामना करनेके लिये अपने आपको उद्यत रखें। इस कालमें दुर्दैवसे कोई ऐसा नीतिज्ञ भारतमें न था और जब दोसौ वर्षके पश्चात् फिर आक्रमण होते हैं, तोभी देश वैसोही दीनताकी दशामें पड़ा हुआ प्रतीत होता है। कैसी विचित्र गति है। इस समय देहलीका राजा अनङ्गपाल हुआ। उसकी दो लड़कियां, एक कनौज और दूसरी अजमेरमें ब्याही थीं। अजमेरका राजा पृथ्वीराज चौहान था, और कनौजका राजा जयचन्द्र राठौर। अनङ्गपालने देहलीके राज्यका अधिकार पृथ्वीराजको दिया। जयचन्द्र उसके साथ वैरभाव रखने लग गया। इसके साथ एक और कारण भी था। राजा जयचन्द्रकी लड़कीके लिये स्वयम्वर किया गया। भारतके इतिहासमें प्रायः स्वयम्वरोंके अवसरपर पुरानी

ईर्षा द्वेषकी अग्नि प्रज्वलित होती आई है। राजाकी लड़की पृथिवी-राजको दिलसे चाहती थी। पृथिवीराज कुछ दूरपर ठहरा हुआ था। पृथिवीराजकी एक पार्थिव मूर्ति स्वयम्वरमें खड़ीकी गई थी। लड़कीने जयमाला उस मूर्तिके गलेमें डाल दी, इसपर पृथिवीराज वहां आ उपस्थित हुआ और लड़कीको निकालकर ले गया।

जयचन्द इसे अपनी अवज्ञा और तिरस्कार मानकर और भी अधिक जलने लगा और उसने गोरी बादशाहको बुलवा भेजा। बादशाहका भ्राता शहाबुद्दीन फौज लेकर देहलीकी ओर चल पड़ा। पृथ्वीराजने उसे लड़ाईमें पूर्ण पराजित किया। सरदार गोविन्द रायकी चोटने ऐसा काम किया, कि यदि उसका सरदार उसे सम्भालकर अपने घोड़ेपर उठाकर रणक्षेत्रसे न लेकर भाग जाता तो वह वहीं मर जाता। शहाबुद्दीनने अपने सरदारोंको लज्जित करनेके लिये चनेके थैले उनके मुंहके साथ बंधवाये, जिससे यह तात्पर्य था कि वह मनुष्य नहीं हैं, गधे हैं जो इस प्रकार मैदानसे भाग आये थे।

उसने फिर आक्रमण किया, पृथिवीराजके झंडेके नीचे पानी-पतके मैदानमें एक सौसे अधिक राजे एकत्रित हुए। उन्होंने शहाबुद्दीनसे कहा कि अगर इस बार पराजित हो जाओगे तो बचकर न जाओगे। अब शहाबुद्दीनने एक चालाकी की, उसने पृथिवीराजसे कहा, कि मैं अपने भाई बादशाहको लिखता हूँ। अगर वह आज्ञा देगा तो मैं वापस चला जाऊँगा। राजपूत लोग बेपरवाह होकर सुस्तीमें पड़ गये। उसने एक रात अकस्मात् उनपर छापा मारकर उनको हनन करना आरम्भ किया। राजपूतोंमे हलचल मच गई और पृथिवीराज पकड़ा गया।

अपने एक गुलाम कुतबुद्दीनको देहलीका अधिकार देकर शहाबुद्दीन वापस चला गया और देहलीमें मुसलमानोंका राज्य

आरम्भ हो गया। पहले खानदानका नाम, जो कि देहलीपर अधिकारी हुआ, गुलामोंका वंश कहा जाता है। इसके बाद कई, एक दूसरेके पश्चात् तीन सौ वर्ष पर्यन्त देहलीपर अधिकारी रहे। खिलजी, तुगलक, सादात, लोधी इत्यादि कई नाम हैं। एक एक कुलके कई कई बादशाह हुए। जब कभी कोई सेनाध्यक्ष या सूबेका अधिकारी अधिक बलवान् हो जाता था, तो वह देहलीके तख्तपर अधिकार कर लेता और अपने खानदानकी नींव डाल देता था। यद्यपि यह सब बादशाह भारतवर्षके अधिकारी कहे जाते हैं तथापि इनका राज्य देहली नगरसे थोड़ी दूर पर्यन्त ही होता था। इसके आगे लोग स्वतन्त्रतासे अपना जीवन व्यतीत करते थे।

अफरीकाका यात्री इबनबतूता तुगलकके खानदानके समय देहलीमें आया। कई वर्ष यहां रहा। वह लिखता है, कि बादशाहके शासनकी अवधि अत्यन्त परिमित थी। जब कभी इन बादशाहोंको धनकी आवश्यकता पड़ती थी, तब अन्य रियासतों पर आक्रमण करते थे, और धन इत्यादि लेकर वापस चले आते थे। कई बार अन्य नगरोंको विजय करके वहां अपना नायक नियुक्त कर देते थे। पञ्जाब, गुजरात और बङ्गाल इनके समयमें इसी प्रकार इनके राज्यमें आ गये थे। कभी कभी किसी स्त्रीकी सौन्दर्य्यकी धाक सुनकर आक्रमणके लिये उद्यत हो जाते थे।

आर्य रियासतोंके राजाओंको प्रायः रुपयोंकी लूट मारसे बचने अथवा स्त्रियोंके सतीत्वकी रक्षाके हेतु उनका सामना करना पड़ता था। यही इस कालका इतिहास कहा जाता है। अन्यथा इन खानदानोंके वृत्तान्तका वर्णन देशके इतिहाससे इतना ही सम्बन्ध रखता है, जितना पानीके ऊपर तेल।

यद्यपि आर्यों की रानियोंमें कोई कोई ऐसे पतित और घृणित

उदाहरण मिलते हैं, जैसे देवल देवी, जिन्होंने कि अपने पति और वंशके शत्रुओंके साथ रहना और कुछ कालके अनन्तर विवाह करना भी स्वीकार कर लिया। परन्तु जो राजपूत नारियां इस समय भी देशमें पूजी जाती हैं, उनका उल्लेख करते समय पद्मिनीका नाम शिखरपर आता है और उन प्रातः स्मरणीया देवियोंने सहस्रों सहेलियों सहित जलती चितापर चढ़ जाना स्वीकृत किया पर अपने कुल, जाति और देशके नामको कलङ्कित नहीं किया। विक्रमादित्यकी तेरहवीं शताब्दीके आरम्भमें चित्तौड़-की गद्दीपर लक्ष्मण बालक (Minor) था। उसका चाचा भीमसेन उसके नामपर शासन कार्य करता था। अलाउद्दीन खिलजी वंशका दिल्लीमें हाकिम था। भीमसेनकी पत्नी पद्मिनीके सौन्दर्यके विषयमें ऐसा प्रसिद्ध था, कि वह रूप लावण्यमें अद्वि-तीय है। अलाउद्दीनने भी उसके सौन्दर्यकी बातें सुनीं और ऐसी योजनाएं करने लगा, जिससे वह उसे अपने अन्तःपुरमें प्रविष्ट करे। अन्तको फौज लेकर चित्तौड़पर चढ़ आया। भीमसेनने बड़े धैर्य और शौर्यका परिचय दिया। तब अलाउद्दीनने एक चाल चली। संदेश भेजा कि यदि एक बार पद्मिनीका मुख उसे दिखा दिया जायगा तो फौज लौट जायगी। भीमसेनने केवल उसके मुख का प्रतिबिम्ब दर्पणमें दिखाना स्वीकार किया। इसपर भी राजपूत अपना अपमान समझते रहे। अस्तु, अलाउद्दीन किलेके अन्दर गया और दर्पणमें उसकी छाया देखकर वापस चला आया। भीमसेन उसके साथ चला गया। नीचे उतरते ही भीमसेनको पकड़ लिया गया और राजपूतोंको सन्देशा भेजा गया कि जबतक पद्मिनी बादशाहके खीमेमें न आवेगी तबतक उसका छुटकारा असम्भव है। बहुत सोच विचारके अनन्तर राजपूत राजी हो गये। परन्तु पद्मिनीकी सहेलियोंके स्थानमें राजपूत सिपाही पालकियोंमें

बैठे। सिपाही ही पालकियोंको कन्धोंपर उठाकर अलाउद्दीनके शिविरमें जा पहुंचे। वहां जाते ही बादशाहसे कहा गया, कि भीमसेनको पद्मिनीके साथ बातचीत करनेकी आज्ञा दी जावे। बड़ी कठिनतासे भीमसेनको आज्ञा मिली और राजपूत सिपाही वेष उतारकर बादशाहके मुकाबलेपर जा डटे। भीमसेन घोड़ेपर सवार किलेमें जा पहुंचा और पांच हज़ार राजपूत लड़कर ढेर हो गये। उनका सरदार गोरासिंह था। गोरासिंहकी पत्नी अपने पुत्रको कहने लगी कि अपने पिताका अनुकरण करना और मेरी आत्माको शान्ति देना। यह कहकर सती हो गयी अर्थात् जीतेजी चितामें जलकर मर गई।

अलाउद्दीन निराश और खिन्न चित्तसे दिल्ली वापस चला गया, परन्तु उसने फिर और सेना एकत्रित करके चित्तौड़को आ घेरा। राजपूतोंने बड़ी ओजस्वितासे सामना किया और राजाके ११ पुत्र एकके पीछे दूसरा अपने शौर्यका परिचय देता हुआ रणक्षेत्रमें चल बसा। अब राजाने "जौहर" की आज्ञा दी। राजपूत केसरी बाना पहन कर मरनेके लिये उद्यत हो गये। एक बड़ी ऊंची और सुसज्जित चिता तय्यार की गई। जिसपर सहस्रों देवियाँ बैठ गयीं। सुन्दर पद्मिनी हंसती हंसती उनके मध्यमें जा बैठी। दोनों ओरसे द्वार बन्द थे। अग्नि लगा दी गई। इधर जलती हुई अग्नि उन कोमल अङ्गोंवाली देवियोंकी अस्थियोंको जलाकर चित्तौड़की भूमिको पवित्र कर रही थी, उधर राजपूत क्रोधके दावानल ज्वालासे भड़के हुए तलवारें हाथोंमें लिये शत्रुदल पर जा पड़े। सहस्रोंको मारा और स्वयं भी एक एक करके चित्तौड़ की मान-रक्षाके हेतु बलिदान हो गये। अलाउद्दीन चित्तौड़के किलेके अन्दर गया, पर सिवा लज्जित होनेके उसे कुछ न प्राप्त हुआ और निराशामें दिल्ली वापस चला गया।

तीसरा अध्याय।

दिल्लीमें राज्य करनेवाले खानदानोंमेंसे अन्तिम खानदान लोधी था। उसका आखिरी बादशाह इब्राहीम लोधी था। यह अत्यन्त निर्ब्बल, निस्तेज और निकम्मा था। दैवयोगसे ऐसा हुआ कि इस समय चित्तौड़की गद्दीपर एक ऐसा वीर पुरुष शासन करता था कि जो अपनी शूरतामें अद्वितीय था। उसका नाम संग्रामसिंह था। जिसे प्राय: राणा सांगा कहा जाता है। उसके दो और भाई थे। भाइयोंकी ईर्षा और द्वेषसे इसका बाल्यकाल देश-निष्कासन और संकटमय अवस्थामें गुज़रा। अपने भाई पृथिवीके साथ लड़ाईमें उसकी एक आंख फूट गई। इब्राहीम लोधीके साथ लड़ाईमें एक हाथ निकम्मा हो गया और तोपके गोलेसे एक टांग भी टूट गई। उसके शरीर पर ८० से अधिक गोलियों और तलवारोंके क्षतके चिन्ह मौजूद थे। उसने गुजरातके शासक मुज़फ्फरको कैद कर लिया था। उसने राजपूतानेकी सब रियासतोंको वशमें किया हुआ था। उसके मनमें आशा थी कि वह एक बार पुन: दिल्लीका राज्य राजपूतोंके शासन तले ले आयगा। परन्तु अफगानिस्तानकी बागडोर बाबरके हाथमें आ गई। बाबर तैमूरकी सन्ततिमेंसे था, जिसने कि तेरहवीं शताब्दिमें दिल्लीपर आक्रमणकर बड़ी लूट मार मचाई थी। बाबरके दिलमें भी आर्यावर्त्तपर चढ़ाई करनेकी इच्छा थी। राणा सांगाने उसे आक्रमण करनेके लिये प्रेरित किया। उसका ख्याल था कि दो शत्रुओंके युद्धके समय वह दिल्ली पर अपनी सत्ता जमा लेगा। पर बाबर सेना लेकर आया और इब्राहीम लोधीको पराजित कर चुका था कि राणा सांगा उसके

प्रतिपक्षमें आ खड़ा हुआ। कुछ काल तो बाबर घबरा गया। शराबके प्याले तोड़ दिये और सुरापान न करनेकी शपथ खाई। वह उस काफ़िर सांगाके धोखेसे बड़ा चकित था पर उसकी हिम्मत और राजपूत सरदारोंके विश्वासघातने उसके भाग्यका उदय कर दिया। राणा सांगाके हरयावल सरदारको उसने अपने साथ मिलाया, लड़ाईके मैदानमें उतरा, पर फिर वहांसे भाग निकला। राजपूत सेना पीछे हट गई। यदि वह जीवित रहता तो फिर एकबार प्रतियोगितापर आता, परन्तु अपने सरदारों द्वारा दिये गये विषसे उसका प्राणान्त हो गया।

इसी प्रकारसे पन्द्रहवीं शताब्दी विक्रमीके अन्तमें वह "कोहिनूर" हीरा जो पृथ्वीराजसे मुसलमान खान्दानके राजाओंके हाथमें चला गया था, अब इब्राहीम लोधीसे बाबरके हाथ आया और वह दिल्लीका बादशाह बन गया। थोड़े ही साल जीकर बाबर मर गया और उसका पुत्र हुमायूं सिंहासनपर बैठा। उधर राणाकी मृत्यु पर उसके सरदारोंमें झगड़ा पड़ गया। उसके पुत्र-रत्न और विक्रमाजितके दो परस्पर विरोधी दल थे। रानी कर्णावतीका पुत्र उदयसिंह अभी छः वर्षका बच्चा था। इस आन्तरिक द्वेष और दुर्बलताकी दशा जान, गुजरातके हाकिम बहादुरने अपने पिताका बदला लेनेके लिये चित्तौड़पर चढ़ाई की। उस समय रानी कर्णावतीने किलेकी रक्षाका भार अपने ऊपर लिया। राजपूत रानीका साहस देखकर लज्जा और अपमानके भयसे सहस्रों राजपूत इकट्ठे हो गये। कई मास तक चित्तौड़की चारों ओर गुजरातकी सेनाने घेरा डाले रक्खा। एक सुरङ्ग (भूमिके नीचेका रास्ता) से किलेकी दीवार उड़ गई। लोगोंने पराजय स्वीकार करनेका विचार किया। कर्णावती की आँखें लाल हो गईं, 'राजपूतनियोंकी छातीसे दूध पीनेवाले

ऐसी बातें नहीं किया करते'। किलेके पराजित होनेमें कोई विलम्ब न था कि राखी (रक्षा बन्धन वा रखड़ी) का त्योहार आ गया। रानीने हुमायूं को अपना भाई जान और कह कर उसे एक रखड़ी भेजी। हुमायूं बङ्गालमें था। वह उससे कब इन्कार कर सकता था। रक्षा स्वीकार की और शेरशाहके साथ लड़ाई छोड़कर चित्तौड़को चल पड़ा, पर शोक कि समय पर न पहुँच सका। जब उधरसे रानी निराश हो गई तो उसने सब सरदारोंको बुलाया और कहा—"सिंहपुत्रो और शूरवीरो राजपूतोंके नामको कलङ्कित न करो। खड्ग हाथमें लो और शत्रुओंका नाश करते हुए प्राण त्याग दो। उन्होंने रोते हुए बच्चे उदयसिंहको छीनकर बूंदी भिजवा दिया ताकि गद्दीका उत्तराधिकारी बचा रहे। बहादुर राजपूत केसरी बाना धारण कर रणक्षेत्रमें उस कार्यकी पूर्त्तिके लिये निकले, जिसके लिये उन्हें माता ने जन्म दिया था। एक ओर तेरह हज़ार राजपूत देवियां अपनी रानीका उत्साहजनक उपदेश सुनती हुई एक विशाल चिता पर चढ़ गईं। फिर रानी स्वयंम् उस अत्यन्त स्तब्ध और शान्त अवस्थामें जा चढ़ीं जैसे सितारोंके बीचमें चन्द्रमा दिखाई देता है। इतनेमें धूआं सुलगने लगा और थोड़ी देरमें अग्नि-ज्वाला आकाश तक जाने लगी। बहादुर सुलतान दाखिल हुआ। वहांकी दशा देखकर दङ्ग रह गया और हताश लौट गया।

चौथा अध्याय।

हुमायूं यों तो नेक था, पर बड़ा आलसी, निष्क्रिय और आराम-पसन्द था। उसके सरदार उससे विमुख ही रहते थे। बङ्गालका सरदार शेरशाह उससे लड़ाई कर रहा था, जब हुमायूं को चित्तौड़की ओर आना पड़ा। उधर शेरशाहका बल और बढ़ गया। जब हुमायूं फिर शेरशाहकी ओर गया तो इधर गुजरातका सुलतान बहादुर और बहुत सा प्रदेश दबा बैठा। हुमायूंको विवश शेरशाहसे समझौता करना पड़ा। रात्रिके समय शेरशाहने शाही फौजको मरवा डाला। हुमायूंको वहांसे भागना पड़ा, और भागते हुए, उसने अपना घोड़ा गङ्गामें डाल दिया। नदीके प्रवाहसे एक भिश्तीने उसे बचा लिया। हुमायूं सिन्धके रेतले स्थलोंसे गुज़रकर भागता हुआ ईरान पहुँचा। मार्गमें अमरकोटके किलेमें उसके पुत्रोत्पत्ति हुई। हुमायूं १५ वर्षके अन्तर ईरानी फौजकी सहायता लेकर आया। इतनेमें शेरशाह मर चुका था। उसके पुत्र और पौत्र राज्य सँभालनेके अयोग्य थे। हुमायूंने फिर अपना दिल्लीका राज्य वापस ले लिया। थोड़े ही दिन पश्चात् हुमायूं मकानसे गिरकर मर गया और उसका पुत्र अकबर सिंहासनपर बैठा। तीन वर्षके भीतर ही अकबरने अपनी योग्यता और स्वतन्त्र प्रकृतिका पूरा परिचय दे दिया।

अकबरने मालवाके शासकपर चढ़ाई की। उसने आकर चित्तौड़में प्राणत्राण किया। जिससे क्रोधित होकर अकबरने चित्तौड़पर धावा बोल दिया। चित्तौड़की अवस्था बड़ी शोचनीय थी। उसका राणा उदयसिंह था, जो कि शूरमाता पिताके होनेपर भी कायर, भीरु और अयोग्य था। वह बाल्यावस्थामें ही

चित्तौड़का राजा बनाया गया था। उसके एक चाचा बनवीरने उसे मरवा देनेका षड़यन्त्र रचा। उस समय उसके प्राणोत्सर्गमें भी न सङ्कोच करनेवाली धाय "पन्ना" ने अपने एकमात्र पुत्रको उसके स्थान चारपाईपर सुलाकर कुमार उदयसिंहकी जान बचाई, और अपने पुत्रकी मृत्युको लेशमात्र भी चिन्ता न की। परि-स्थितिके परिवर्त्तन होनेपर उदयसिंह फिर राणा बना किन्तु उसमें कोई विशेष गुण न था। अकबरकी सेना सिरपर आ पहुँची। वह अपने आनन्द भोग विलासमें पड़ा रहा। उसकी रखी हुई एक औरत जवाहर बाई थी। उसने लड़ाईके हथियार पहन लिये और बड़ी वीरता और साहससे लड़ती रही। राणाने उसकी प्रशंसा की और राजपूतोंने ईर्ष्यासे उसे मरवा डाला।

अन्तत: अकबरकी सेना दुर्गकी खाईतक बढ़ आई। राणा वहां नहीं था। उसकी जगह दो बड़े सरदार निकले। जिन्होंने सेनाके नेतृत्वका भार अपने ऊपर लिया था। पहले तो सरदार जयमल आगे बढ़ा और तोपसे मारा गया। लेकिन स्थान न छोड़ा। उसके अनन्तर चन्द्रावत सरदारके मर जानेपर फतेहसिंह (फत्तो) की बारी आई, कि वह महलकी रक्षा करे। फत्तोकी आयु अभी १६ वर्षकी थी। फत्तोने अपना स्थान लिया। उसकी माता नगरमें थी। उसे चिन्ता थी कि फत्तो अपनी नव-विवा-हिता वधूके प्रेममें कहीं अपने क्षात्र धर्मको न भूल जावे। उसकी माता और वधूने युद्धका कवचादि पहन लिया और हाथमें नेज़े लिये दोनों रणक्षेत्रमें आ घुसीं और अपने शौर्यका प्रकाश किया। दूसरी रानियों और राजकुमारियोंने अपना पुराना जौहर दिखाया। चितापर चढ़कर भस्म हो गईं। १६२५ विक्रमीमें अकबर चित्तौड़में प्रविष्ट हुआ। सारे राजस्थानकी महारानी रूप "चित्तोड़" मानो उस समय अपने स्वामीको खोकर "विधवा" हो

गई थी। उदयसिंह वहांसे भाग गया और नया शहर उदयपुर बसाया।

मुसलमान राजाओंमें अकबर पहला था, जिसने आप अनपढ़ होनेपर भी आर्यावर्त्तमें राज्यका नवयुग आरम्भ किया। उसके दिलमें न विदेशीय होनेका भाव था और न साम्प्रदायिक पक्षपात। एक भारतीय होनेके कारण उसने राज्य-शासनकी एक नई विधि निकाली, जो कि सम्प्रदायों और मतमतान्तरोंके झगड़ोंसे पृथक् थी। उसके महलमें आर्य (हिन्दू) शैलीपर ईश्वर पूजा अथवा मूर्त्ति पूजाकी आज्ञा थी। वह स्वयम् एक नये ही धर्म्मका माननेवाला था। आर्य राजाओंसे वह विवाहका सम्बन्ध स्थापित करना चाहता था और अजमेरके राजाओंने उसमें पग उठाकर उसके अभिप्रायको पूरा किया। गौको आर्थिक दृष्टिसे बड़ा उपकारी और लाभकारी जानकर उसने गो-वधको राज्य-नियम द्वारा स्थगित कर दिया। राजपूत तेज और शूरताका तथा आर्य राजनीतिज्ञोंके मस्तिष्कका उसने मान और सत्कार किया। सबसे बड़ा लाभ उसको टोडरमलकी मेधा-शक्तिके अनुपम प्रकाशसे हुआ। जो कि अपने समयमें प्राप्त विभाग (मालका महकमा) सम्बन्धी अद्वितीय योग्यताका विद्वान् था। उससे पूर्व कोई शासन दीर्घ कालतक देशमें स्थिर रूपेण प्रतिष्ठित नहीं हुआ था। कोषमें कोई स्थिर आयका साधन न था, और इसलिये कोई योग्य और अधिक संख्यामें सेना भी न रक्खी जा सकती थी। टोडरमलने जो कि चूनियाके एक क्षत्रिय वंशमेंसे था भूमिकर (मालगुजारी) का ढङ्ग निकला। सारी भूमिका माप करके उसपर लगान (महसूल) लगाया गया। हर ग्राममें नियत पुरुष उस लगानको वसूल करके सरकारी कोषमें दाखिल करते थे और प्रतिशत कुछ धन उसमेंसे उन अधिकारियोंको मिलता

था। इस मालगुज़ारीके नियम (करप्राप्ति नियम) से राज्यका सिक्का ग्राम ग्राममें सुदृढ़तासे जम गया और सारेका सारा देश एक श्रृङ्खलामें बंधा जाकर राज्यकी नींव और भी पक्की हो गई। उस समय भारत देशका एक बड़ा विशाल भाग एक पोलीटिकल गवर्नमेण्टकी जञ्जीरोंसे जकड़ा गया। इससे पूर्व वह स्वच्छन्दता अर्थात् अनियन्त्रताकी अवस्था जिसमें कि एक सुनियमित और सुव्यवस्थित राज्य न था, इस देशकी दुर्बलताके कारण होकर विदेशियोंके आक्रमणोंके दबावसे सर्वनाशका कारण हुई, और उसके बाद यह जञ्जीरें दूसरोंके हाथोंमें होनेके कारण देशवासियोंको अनिवार्य्य और बलात्कार परतन्त्रतामें रहना पड़ा।

यद्यपि यह एक राजनीतिज्ञके रूपमें देशमें पहला योग्य राजा हुआ है। परन्तु एक आर्यकी दृष्टिसे इतिहासका अध्ययन करनेपर वह ऐसा दिखाई नहीं देता। एक बड़ा उच्च राजनैतिक आदर्श सामने रखता हुआ भी वह स्वभावतः यह चाहता था, कि सब प्राचीन शक्तियाँ उसके महत्वको अङ्गीकार कर लें। परन्तु आर्यों की ओरसे राजपूतोंका सरदार राणा था। जिसने कि उसके सामने अपना सिर न झुकाया। चित्तौड़ छोड़नेके चार वर्ष पश्चात् उदयसिंहकी मृत्यु हो गई। उसकी जगह उसका पुत्र राणा प्रतापसिंह उसका स्थानापन्न हुआ।

प्रताप कहा करता था। अच्छा होता, यदि मेरे और दादाके बीचमें मेरा पिता न होता। इस दौर्बल्यकी दशामें दूसरी राजपूत रियासतें अकबरकी सहायकारी बन गईं। प्रतापने शपथ खाई कि जबतक चित्तौड़ वापस न ले लूंगा, नक्कारे सेनाके पीछे बजा करेंगे। सोने चांदीके पात्रोंकी जगह खाना पत्तोंपर खाऊँगा और अपनी दाढ़ी उस समयतक नहीं मुड़वाऊँगा। जबतक चित्तौड़ फिर राजस्थानमें अपनी प्राचीन अवस्थाको

प्राप्त न कर ले और फिर राजस्थानकी मलका न बन जावे। अजमेरका राजा मानसिंह जिसने अकबरके साथ बहिन व्याहकर अपना सम्बन्ध बना लिया था, अकबरके लिये विजय करता करता मेवाड़के पाससे गुज़रा। उसे राणा प्रतापसे मिलनेकी रुचि हुई और इसलिये उदयपुर गया। प्रतापका बेटा और सरदार भी आतिथ्यके लिये उपस्थित थे। प्रतापने कहला भेजा, कि उसके सिरमें पीड़ा है, इस कारण वह सहभोजमें न आ सकेगा। मानसिंहने ताड़ लिया, कि उसकी शिरः पीड़ाका बहाना था। वह बिना भोजन किये उठ बैठा और उसके साथियोंने भी घोड़े कस लिये। इतनेमें प्रताप मैलासा वस्त्र पहने, पर चमकता मुख लेकर आ पहुँचा। मानकी कोपाग्नि भड़क उठी। और कहा "अगर मेरा नाम मान है तो मैं तुम्हारा अभिमान तोड़ डालूँगा।" प्रतापने कहा—मानसिंह मैं हर परिस्थितिमें मिलनेको तय्यार हूँ। साथ ही प्रतापके एक सरदारने कह दिया। दूसरी बार अपनी बहनोंको भी साथ लेते आना। जहां मानसिंह आदि बैठे हुए थे, उस स्थानको गङ्गाजल छिड़क कर पवित्र किया गया।

मानसिंहने सारा वृत्तान्त अकबरको जा बताया। परिणाम यह हुआ कि कई लाख शाही फौज जिसका सरदार अकबरका बड़ा पुत्र सलीम था * चित्तौड़पर चढ़ आई। प्रताप बड़ी कठिनतासे बाईस हज़ार वीर राजपूत इकट्ठे कर सका। शाही फौजने सब ओरसे घेरा डाल दिया! केवल हल्दी घाटी ही एक मार्ग पहाड़को जाता था। इसी स्थानपर १६३४ सम्वत् विक्रमीमें बड़ी भारी लड़ाई हुई। प्रताप इधर उधर मानसिंहके अन्वेषणमें फिरता

* यहांपर कई बड़े इतिहासज्ञोंका मतभेद है। उनका कहना है, कि उस समय सलीमकी अवस्था १० वर्षसे अधिक न थी। अतएव इतनी छोटी उम्रमें उसके लिये सेनापतित्व कदापि सम्भव नहीं था।

था, कि उसे राजकुमार सलीमका हाथी दृष्टिगत हुआ। उसने अपना घोड़ा बढ़ाकर हाथीपर आक्रमण कर दिया। महावत मारा गया। लोहेका हौदा होनेके कारण सलीमकी जान बच गई और हाथी वहांसे भाग निकला। इतनेमें शाही सेनाने प्रतापको आ घेरा। प्रतापको तलवार और भालेके कई घाव लगे। झालाके सरदारने प्रतापको संकटमें पाकर उसका छत्र अपने सिरपर ले लिया। शाही सिपाही उसको चारों ओर आ एकत्रित हुए और प्रताप अपने सुप्रसिद्ध घोड़े चेतकपर सवार होकर मैदानसे भाग निकला। दो मुसलमान सवार भी उसके पीछे हो गये। कोसों तक भागता ही गया। प्रतापका शक्तिसिंह (सकत) नामी भाई उससे निराश होकर अकबरके पास चला गया था। अपने भाई-की दुर्दशा देख वह भी पीछे हो लिया और मार्गमें दोनों सवारों को मारकर प्रतापको आवाज दी। "अब जीवन त्राणके लिये कहां भागते हो?" प्रताप चुप खड़ा हो गया, उसका घोड़ा थक कर उसके रानोंके तले भूमिपर गिर पड़ा और मर गया।

प्रताप पीछे देखने लगा। शक्तिने कहा—वह दोनों मरे पड़े हैं। यह घोड़ा लो और जीतेजी निकल जाओ। दोनों भाइयोंने एक दूसरेको आलिङ्गन किया और प्रताप उसे छोड़ आगे चल दिया। वर्षाऋतु आ गई। सलीम सेना लिये वापस चला गया। अगले वर्ष फिर चढ़ाई की। प्रताप जङ्गलोंमें, पर्वतोंकी गुफाओंमें छिपता हुआ लड़ाई करता था। शाही सेना एक प्रकारके शिकारमें लगी हुई थी। प्रताप जहां अवसर पाता था शाही, सिपाहियोंपर टूट पड़ता था।

प्रताप और उसके साथियोंका खाना फल-फूल और वृक्षोंके छाल, पत्तियां और घास था। प्रतापकी पत्नी और लड़के लड़-कियां भी साथ थे। उनको वृक्षोंके साथ लटका कर बचाना

पड़ता था। एक समय पांच बार खाना बनाया, और शत्रु आ जानेपर छोड़ कर भागना पड़ा। एक समय एक लड़कीने आधी रोटी खाई और वृक्षके साथ लटका दी। जङ्गली बिल्ली वह रोटी उड़ा ले गई, लड़की चिल्ला उठी।

उस सिंह-हृदय प्रतापका चित्त जो कि तलवारों और भालोंके सामने छाती रख सकता था, एक बार डांवाडोल हो गया और उसने अकबरको सुलहके लिये चिट्ठी लिख दी। अकबर उस चिट्ठीको पाते ही खुशीसे फूला न समाया। उसने वह पत्र बीकानेरके एक राजकुमार पृथिवीराजको दिखाया। पृथ्वीराज शक्तिसिंह (सकत) की लड़कीसे व्याहा हुआ था। यद्यपि वह अकबरके दरबारमें रहता था, परन्तु उसका हृदय प्रतापके साथ सहानुभूति रखता था। उसने वह पत्र क्रोधावेशमें अलग फेंक दिया और कहा कि प्रतापकी यह चिट्ठी नहीं हो सकती और इसे जांचनेके लिये उसने प्रतापको कवितामें एक पत्र लिखा। वह इस प्रकार है:—"एक आर्यकी आशा आर्यसे ही सम्बद्ध है। यदि प्रताप अकबरके हाथ आ गया तो सारी आर्य जाति अकबरकी दृष्टिमें एक जैसी हो जावेगी। हमारे मनुष्योंसे शौर्य्य, धैर्य्य, और स्त्रियोंसे लज्जा आदि गुण लुप्त प्राय: हो गये थे, अकबर हमारी जातिको मटिया मेट करता है। उसने सब कुछ खरीद लिया है। केवल प्रताप अकेलेकी कीमत वह नहीं दे सकता। यद्यपि प्रतापने अपना सर्वस्व हरण किया, तथापि राजपूती मान-मर्य्यादाका बहुमूल्य और अक्षय कोष उसके पास है। संसार पूछता है, प्रतापको कहांसे यह सहायता मिलती है। उसके पास सिवा मरदानगी और तलवारके और कुछ नहीं है। यह बाजारका सौदागर अकबर एक दिन समाप्त हो जावेगा। तब हमारी प्रार्थना प्रतापके पास आवेगी कि वह इस

वीरानेमें राजपूतीका बीज बोवे। उसके बचावके लिये सबकी आंखें प्रताप पर लगी हुई हैं।"

प्रतापने पत्र पढ़ते ही सुलहका विचार त्याग दिया और मेवाड़से निकल कर बहुत दूर देशमें एक राज्यसत्ता स्थापित करनेका संकल्प किया। उस समय उसके पैतृक मन्त्री भामाशाह-का दूत आया कि प्रताप क्यों जाता है। मेरी सारी धन सम्पत्ति प्रतापके अर्पण है। जिससे पच्चीस हज़ार सिपाही बारह वर्ष तक रक्खे जा सकते हैं। प्रतापने जानेका संकल्प स्थगित कर दिया, सेना इकट्ठी की और फिर सारा मेवाड़ अपने ही आधि-पत्यमें कर लिया और मानसिंहसे बदला लेनेके लिये अम्बर (जयपुर) को जा लूटा। ईंटसे ईंट बजा दी। इतनेमें अक-बरकी मृत्यु आ गई। इससे पूर्व ही उसका शत्रु प्रताप भी राजपूतोंके भविष्यपर निराशाके घोर बादल छाये हुए देखता हुआ इस लोकसे सिधार गया।

पृथिवीराजकी चिट्ठीने प्रतापके मान और राजपूतोंकी जीवन-मर्यादाकी रक्षा की। उसकी चिट्ठीको तहमें भी पृथिवीराजकी स्त्रीका हाथ था। इस घटनाके थोड़े दिन पूर्व ही उसने अक-बरको एक मज़ा चखाया था। अकबरने एक मीना बाजार बनाया था, जो कि महीनेमें एकबार लगा करता था। उसमें केवल स्त्रियोंको ही जानेकी आज्ञा थी। अकबर स्वयम् उसमें वेष बदल कर चला जाता था और यदि किसी स्त्रीको पसन्द कर लेता था तो उसके सतीत्वको भङ्ग करता था। पृथिवीराजकी स्त्री बड़ी सुन्दर थी। अकबरकी दृष्टि उसपर पड़ गई। वह अपना सौदा खरीदकर वापस आ रही थी। मार्ग बड़ा तङ्ग और अन्धकारमय, इसी मतलबके लिये बनाया गया था। वह जा रही थी कि अकस्मात् उसे एक आदमीसे सामना हुआ। वह

तत्काल ताड़ गई। इससे पूर्व उसने एक राजपूतानीको जवाहर आदि भूषणोंसे लदे हुए देखा था। उसने देवीका ध्यान किया और उससे रक्षाकी प्रार्थना की और कमरसे खड्ग निकाल कर बादशाहके गलेपर बैठ गयीं। वह घबरा गया। राजपूतनीने कहा—शपथ खाओ और प्रतिज्ञा करो कि यह मेला बन्द करोगे और आगे कभी ऐसा अनुचित कार्य न करोगे। तब तुम्हारा छुटकारा होगा। अकबरने शपथ पूर्वक प्रण किया और मेला भी बन्द हुआ।



पाँचवाँ अध्याय।

प्रतापका पुत्र पिताके गुणोंसे अलङ्कृत था। प्रतापने जीवनके २६ वर्ष बनोंमें भूख और कष्टमें व्यतीत किये, परन्तु उसका जीवन आदर्श जीवन था और वह बनोंमें घूमता हुआ भी मेवाड़का सच्चा राजा था। जहां वह था, मेवाड़का मुकुट भी वहीं था। वह मृत्युके समय भविष्यत्‌के लिये बड़ा निराश हुआ और उसने एक लम्बी आह भरी। मन्त्रियोंने जब पूछा कि आपको क्या हुआ है, तो उसने कहा कि मुझे भय है कि इन कुटियोंके स्थानपर महल बन जावेंगे। तुम सब भोग विलासी हो जाओगे और मेवाड़की स्वतन्त्रता, जिसके लिये इतना रुधिर बहाया जा चुका है, मिट्टीमें मिल जावेगी! हमारा देश तुर्कोंके हाथ चला जायगा। सबने शपथ खाई कि ऐसा नहीं होगा, जब तक चित्तौड़ हमारे हाथ न होगा, हम महल नहीं बनवावेंगे और जबतक हमारे शरीरमें एक भी लहूका बिन्दु है, तबतक मेवाड़की स्वतन्त्रता नहीं जाने देंगे। प्रतापने शान्ति पूर्वक देह त्याग किया, परन्तु अनन्तर इसके हुआ वही जिसका प्रतापको भय था। चित्तौड़का विचार त्याग कर लोग भोगोंमें रत हो गये।

अकबरकी मृत्युके अनन्तर उसके उत्तराधिकारी जहांगीर और उसका पुत्र शाहजहान अकबरके शासन शैलीके अनुसार राज्य करते रहे। जहांगीर अन्तिम दिनोंमें पिताके विरुद्ध हो गया। जहांगीर एक ईरानी व्यापारीकी लड़कीसे अधिक प्रेम रखता था। अकबरने उस लड़कीका विवाह शेर अफगानसे कराके उसे बंगालका हाकिम बना दिया। जहांगीरको उस

लड़कीकी याद न भूली थी। शासन प्राप्त होते ही उसने शेर अफगानको मरवा डाला और उसे अपने पास मंगवा लिया। चिरकाल तक उसने बादशाहके साथ रहना स्वीकार न किया, परन्तु अन्तमें उसकी बड़ी चाहती बीबी बन गई, जिसका नाम नूरजहान प्रसिद्ध हुआ। जहांगीरके जीवनकालमें नूरजहानका उसपर बड़ा प्रभाव रहा और राज्यशैलीमें उसका हाथ बहुत था। जहांगीरका बड़ा पुत्र शासनका अधिकारी था। नूरजहान उसके स्थानपर किसी औरको राज्याधिकारी बनाना चाहती थी। इस कारण शाहजहान पिताके विरुद्ध उच्छृङ्खल हो गया, और युद्धके लिये उद्यत रहा। राजपूतोंने उसे सहायता देना स्वीकार कर लिया। जहांगीरको इमारतें और बाग लगवानेका बड़ा शौक था। काश्मीरको प्रायः सैर करने जाया करता था। इधर ही उसकी मृत्यु हुई और लाहौरमें उसका मकबरा (Mausoleum) बनवाया गया, जो इस समय खण्डहरकी हालतमें है।

शाहजहान शासनका अधिकारी बना, वह भी जहांगीरकी भांति राजपूतनीके पेटसे उत्पन्न हुआ था। उसका बड़ा पुत्र दाराशिकोह भी राजपूतनीके उदरसे पैदा हुआ था। अकबरने केवल राजपूत लड़कियोंसे विवाह नहीं किया बल्कि उसकी इच्छा थी, कि राजपूत भी मुगल लड़कियोंसे विवाह करें। अकबर चाहता था, कि उसे आर्य्य धर्ममें ले लिया जाय। वह अपने वंशको देशके पुराने राज्याधिकारियोंसे मिला देना चाहता था। ब्राह्मणोंने बड़ी गलतीकी कि इस साहस पूर्ण कार्य्यसे चूक गये। यद्यपि अकबर आर्य्य न बन सका, परन्तु वैदिक सभ्यता उसके बेटे पोतेके अन्दर घुसती गई। दाराशिकोह तो खुले तौरपर आर्य्य था, वह गीता और उपनिषदोंको पढ़ा करता

था और उनको ही धर्म्मकी उत्तम पुस्तकें मानता था। यहांतक ही नहीं बल्कि उसने भूमिकामें यह लिखा है, कि अफलातूं जो यूनानी दर्शन शास्त्र और आयुर्वेदका जन्मदाता था, एक भारतीय विद्वान्का शिष्य था, जो कि व्यास ऋषिके अनुयायियोंमेंसे एक था। धीरे धीरे वैदिक सभ्यताने उनकी बुद्धियोंपर जय प्राप्त कर ली, परन्तु दीनदार मुसलमान इससे जलते थे और औरङ्ग-ज़ेब, शाहजहानके छोटे पुत्रने इसका लाभ उठाना चाहा। शाह-जहान दैवयोगसे रोगी हो गया, दाराशिकोहको उसने पास बुला लिया। इसपर औरङ्गज़ेबने दूसरे दो भाइयों मुराद और शुजासे पत्र व्यवहार करके उनको अपने पक्षमें कर लिया और सेना लेकर दक्षिणकी ओर रवाना हो गया।

यशवन्तसिंह मारवाड़का बड़ा प्रसिद्ध राजा था। उसकी रानी मेवाड़की राजकुमारी थी। उसका शौर्य और परमउत्साह और साहस पतिसे बढ़कर था। उसने राजाको सलाह दी कि इस समय दाराशिकोहको सहायता देनी चाहिये। यशवन्तसिंह बहुत सी सेना लेकर औरङ्गज़ेब और मुरादकी सेनाको उज्जैनके समीप मिला। उसके विरोधियोंकी संख्या अधिक थी, वह हार गया और सब राजपूत मारे गये। यशवन्तसिंह वापिस जोधपुर चले आये। रानीने किलेके द्वार बन्द करवा दिये। वह यशवन्त-सिंहका मुख देखना नहीं चाहती थीं। कभी कहती थी, कि ऐसा कायर जो युद्धसे भाग आया है, राजपूतनीका पति नहीं हो सकता। कभी चितापर जलनेको उद्यत हो जाती थी। अन्तमें क्रोध कुछ शान्त हुआ, और कहा जाता है, कि जब राजा खाना खाने बैठा तो रानीकी शिक्षाके अनुसार समस्त पात्र लोहेके उसके आगे रखे गये। राजा क्रुद्ध हो गया। रानी भी दासियोंपर अतिक्रुद्ध होकर बोली—देखती नहीं हो, राजा तो पूर्व ही लोहेसे

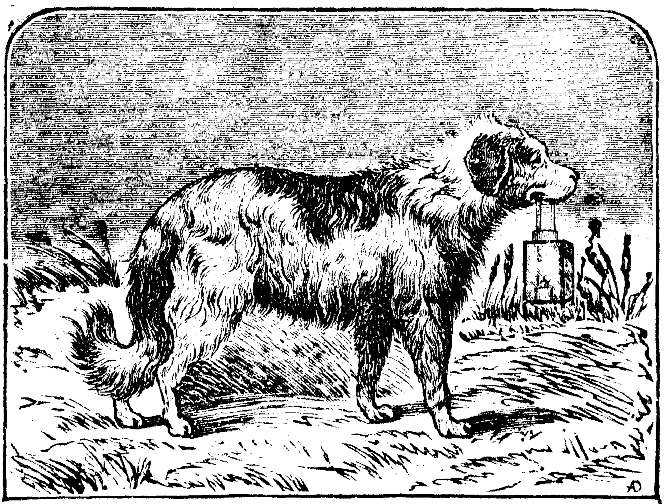
डरकर यहाँ भाग आये हैं। फिर लोहा ही उनके सामने ला रखा है। औरङ्गज़ेब दोनों भाइयोंकी सहायतासे दाराशिकोहके मरवानेमें कामयाब होगया। उसने अपने पिताको कारागारमें डलवा दिया और एक भाई शुजाके विरुद्ध युद्ध आरम्भ किया। वह यशवन्तसिंहसे डरता था और उसे संदेशा भेजा कि तुम्हारा अपराध क्षमा हो गया। सेना लेकर शुजाके विरुद्ध लड़ो। यशवन्तसिंहने स्वीकार कर लिया कि बदला लेनेका समय है। पहुँचनेपर उसने बादशाहकी सेनापर आक्रमण किया और सबको काट डाला और सब सामान लेकर जोधपुर पहुँचा। तब रानीको तसल्ली हुई। औरङ्गज़ेब शुजाके विरुद्ध भी सफल हो गया। उसने यशवन्तसिंहका दूसरा अपराध भी क्षमा करके उसे गुजरातका राज्याधिकार दे दिया। जब भाइयोंकी ओरसे डर जाता रहा तो यशवन्तसिंहसे छुटकारा पानेके लिये, अफगानोंके विरुद्ध उसे रवाना किया। रानी भी साथ गई। यशवन्तसिंहके दो पुत्र वहां मारे गये। यशवन्तसिंहका बड़ा पुत्र शाही खिलअत प्राप्त करके उसको पहनते ही मर गया। उधर यशवन्तसिंह भी जहरसे मार दिया गया। रानी सती हो जाती, परन्तु गर्भवती थी। उससे एक बच्चा पैदा हुआ जिसका नाम अजित हुआ। बड़ी मुसीबतोंके बाद वह देहली पहुँचे। औरंगजेबने हुक्म दिया, कि रानीको देहलीसे न निकाला जाय, जबतक वह नया बच्चा बादशाहके हवाले न कर दे। रानी मुकाबला करनेको तैयार हो गई। बच्चेको एक मुसलमानके हाथ बाहर रवाना कर दिया और फिर रानी और उसके राजपूत जिनका नेता दुर्गादास राठौर था, शाही सिपाहियोंका मुकाबला करके देहलीसे बाहर निकल आये और बच्चेको लेकर जोधपुर आ पहुँचे। औरंगजेब यशवन्तसिंहसे बड़ा डरता था। ज्यों ही उसने यशवन्तसिंहको मरवाया। त्योंही उसने

आर्य लोगों पर धार्मिक पक्षपातसे कष्ट देना शुरू किया। वह इससे मुसलमान दीनदारोंको खुश करना चाहता था और उनकी मददसे अपनी हुकूमत सुदृढ़ करना चाहता था। उसने अपने बड़ोंकी नीतिको नितान्त बदला और देशमें धार्म्मिक युद्धकी आग लगा दी। आर्योंके लिये निशाकी घटायें छा गईं। मन्दिरोंके घण्टे बन्द हो गये। ब्राम्हणोंने पूजा पाठ छोड़ दिये और हठात् मुसलमान बनाये जाने लगे। आर्य लोगोंपर जजिया लगाया गया। औरंगजेबने सुना कि यशवन्तसिंहका लड़का अजीतको आबू पहाड़पर गुप्त रीतिसे पाला जा रहा है तो उसने मारवाड़पर चढ़ाई कर दी। दुर्गादास मारवाड़का अध्यक्ष जोधपुरकी रक्षामें सन्नद्ध हुआ, परन्तु उसी समय एक और वाकया हुआ, जिससे मेवाड़का राणा राजसिंह भी औरंगजेबके प्रतिकूल मुकाबलेको तैयार हो गया। प्रतापके पश्चात् उसका लड़का उमराव सालोंतक शाही फौजका मुकाबला करता रहा। अब फिर थककर रह गया और शाहजहानसे मित्रता कर ली। इसका लड़का कर्ण भी ऐसे ही राज्य करता रहा। सोलहवीं शताब्दी विक्रमीके अन्तिम वर्षमें राजसिंह मेवाड़की गद्दीपर बैठा। कहते हैं कि राजपूतानामें एक छोटीसी रियासत सोंपागढ़की राजकुमारी रूपलावण्यमें अद्वितीय थी। औरङ्गज़ेबको दूतों द्वारा उसका वृत्तान्त सुनकर उसके साथ विवाह करनेका विचार उत्पन्न हुआ और सेनाका एक झुण्ड डोली देनेके लिये भेजा। राजकुमारीने यह समाचार पाते ही निश्चय किया, कि वह ऐसे क्रूर और अत्याचारीको पति रूपमें कदापि स्वीकार नहीं करेगी। उसने गुप्त रीतिसे एक पत्र राजसिंहके नाम लिख भेजा जिसमें लिखा था जिस प्रकार हंसनीके साथ एक बगला नहीं होता, उसी प्रकार एक राजपूतनी एक दुराचारी, दुराग्रही नृशंसकी संगिनी

न बनेगी। यदि आप मेरे सतीत्वकी रक्षा न करेंगे तो मैं मृत्युको स्वयमेव आलिङ्गन करूंगी।" राणाने पत्र पढ़ते ही उसे बचानेका संकल्प कर लिया और थोड़से सवार लेकर वहां जा पहुंचा। शाही दस्ताको टुकड़े २ कर दिये, और राजकुमारीको अपने साथ ले आया। राजकुमारीने राणाके मिलते समय इतना ही कहा,—"इस नेकीके बदलेमें मेरे पास कुछ नहीं, यदि मेरा हाथ किसी मूल्यका है तो यह सेवामें हैं, ग्रहण कीजिये।" राणाने हाथको चूमा और विधिपूर्वक उस राजपूत देवीसे विवाह कर लिया। तब राणा राजसिंहने औरङ्गज़ेबको इतिहासमें प्रसिद्ध पत्र लिखा, जिसमें अकबर आदि पहले बादशाहोंकी नीतिकी प्रशंसा करते हुए खुले शब्दोंमें औरङ्गज़ेबकी ताड़ना तर्जना की है। आपके राज्यकालमें कितने देश हाथसे निकल गये। सब जगह उत्क्रान्ति और राज-विप्लवका युग वर्त्तमान है। प्रजा कष्टसे पीड़ित है।

आप उन्हें पददलित कर रहे हैं। जो बादशाह स्वयम् अशान्त है, इसके सरदारोंकी तो क्या कथा! प्रजाको एकबार भी भोजन पेटभर नहीं मिलता। उस बादशाहका आधिपत्य और मान कैसे स्थिर रह सकता है जो दरिद्र वा क्षुधा पीड़ित प्रजासे इतना भारी कर प्राप्त करता हैं। पूर्वसे पश्चिम तक सुविदित है कि बादशाह आर्य जातिसे ईर्षा द्वेष करता है। इसलिये जज़िया ले रहा है। यदि आपको खुदाके कलामपर विश्वास है और निष्ठा, तो आपको विदित होना चाहिये कि परमात्मा सबके लिये—एक ही है। केवल मुसलमानोंका ही नहीं। क्या आर्य और क्या मुसलमान सब उसके पैदा किये बन्दे हैं। रङ्ग तथा रूपकी परीक्षा ठीक नहीं। धार्मिक पक्षपातसे तङ्ग करना अत्यन्त घृणित है। अगर जज़िया लेना हो तो सबसे पहिले मेरे जैसे आदमियोंसे जज़िया लेना चाहिये। इत्यादि

औरंगजेब कुपित हो बदला लेनेके लिये उद्यत हो गया और मेवाड़ पर भी धावा डाल दिया। शाहज़ादा अकबरको बँगालसे, मुअज़मको काबुलसे और कामबक्शको दक्खनसे मेवाड़पर चढ़ाई करनेकी आज्ञा दे भेजी। राणा राजसिंह और दुर्गादास आत्म रक्षामें लड़ते रहे और देशमें कई और परिवर्तन हुए।



आर्य्य जातीय जीवन।

इसलामके साथ झगड़े अब उस अवस्था पर आ पहुंचे, जब कि आर्य्य जातीय-जीवनके और कई अङ्गोंने इतिहासमें भाग लेना आरम्भ किया और साथ ही आर्य्यावर्तके इतिहासमें इसलामका जितना प्रभाव होना था, वह हो लिया। अब और शक्तियाँ उत्पन्न हो गईं, जिनका देशके इतिहासमें बड़ा भाग है। इस लिये हम इसलाम शक्तिके वर्णनको एक प्रकारसे अन्तपर समझ लेते हैं और दूसरी शक्तियोंका वर्णन आरम्भ करते हैं। अबतक हमने देखा कि राजनैतिक जगत्‌में इसलामकी लहरका आर्य्योंकी ओरसे किस प्रकारसे और कहां तक मुक़ाबिला किया गया। अब यह देखना रह गया कि धार्मिक जगतमें आर्य्यों पर क्या प्रभाव हुआ।

जैसे एक आहिरणपर हथोड़ेकी चोट पड़ती है तो तत्काल ही आहिरणकी ओरसे एक गति निकलती है जो कि हथौड़ेको ऊपर ले जाती है। ऐसी ही जब आर्य्य धर्मपर इसलामकी चोट पड़ी, उसके भीतरसे भी हरकत उत्पन्न हुई। उसका आरम्भ बनारसमें (काशी) रामानन्दने किया। रामानन्द रामानुज आचार्य्यके शिष्योंमेंसे था। रामानुजने भी नीच जातिके लोगोंको ईश्वरके सम्मुख एक सा ही अधिकारी समझनेकी शिक्षा दी थी। रामानन्दने इस प्रचारका केन्द्र काशी बनाया। उसके कई चेले नीच जातिके थे जिनमेंसे कबीरका नाम बहुत प्रसिद्ध है। कबीरने आर्य्यों में प्रचलित कुरीतियोंके विरुद्ध बड़े ज़ोरसे प्रचार किया। उसने मुसलमानोंमें प्रचलित कुरीतियोंकी ओर भी लोगोंका ध्यान दिलाया और ऊंची और नीची जातियोंके समान

अधिकारी होनेका प्रचार किया और कबीरके विचारोंका आर्य्यावर्तके भिन्न भिन्न प्रान्तोंमें बड़ा प्रभाव हुआ। इसी प्रकारके सिद्धान्तोंपर बङ्ग देशमें चैतन्यने विष्णु पूजाका प्रचार आरम्भ किया। इस प्रचारमें साधारण सुधारोंके अतिरिक्त कृष्णके लिये प्रेम बहुत ज़ोरसे भरा था। उन लोगोंने न केवल नीच जातिके लोगोंको मुसलमान होनेसे रोकनेका प्रयत्न किया अपितु कई मुसलमानोंको आर्य्य धर्ममें ले लिया।

इन्हीं सिद्धान्तोंपर बाबरके आर्य्यावर्तमें आनेके समय पञ्जाबमें गुरु नानकने अपना प्रचार आरम्भ किया। गुरु नानकके पश्चात् जितने गुरु उनके स्थानमें गद्दीपर बैठे, वह अद्वितीय पवित्रतावाले मनुष्य थे। परिणाम यह हुआ कि गुरु नानकका प्रचार दूसरोंके प्रचारसे कुछ विशेषता रखता है। उसके गुरुओंने उसके अन्दर अत्मिक जीवन विशेष रूपसे उत्पन्न कर दिया। किस कारण धीरे धीरे यह धार्मिक संस्थासे एक प्रबल राजनैतिक संस्था बन गई। इसका वर्णन एक पृथक् भागमें 'सिख ताक़त' के नामसे लिखा जावेगा।

इसके पश्चात् जैसे आर्य्यावर्तके अन्दर तुलसीदासने अपनी कवितासे रामकी भक्तिकी लहर उत्पन्न कर दी वैसे ही महाराष्ट्रमें तुकारामने आर्य लोगोंके अन्दर एक नया धार्मिक जीवन उत्पन्न किया। तुकारामके पश्चात् स्वामी रामदासने धर्मके साथ राजनीतिके विचारोंको मिलाकर प्रचार किया, जिसका परिणाम शिवाजी और उसका काम था। इसका वर्णन मरहटोंकी उन्नतिके साथ किया जायगा।

तत्कालीन आर्य्यावर्त्तकी राजनैतिक अवस्था।

भारतवर्षमें राजा स्वयम् राज्य किया करता था। उसकी राजधानी देहली वा आगरामें हुआ करती थी। यद्यपि पञ्जाब एक पृथक् प्रान्त था, परन्तु राजा अपने समयका कुछ भाग लाहौर आदि नगरोंमें रहा करता था। बङ्गाल एक बड़ा प्रान्त था। जिसमें मुसलमान सूबेदार राज्य करता था। गुजरात एक और प्रान्त था, जिसमें मुसलमान राज्य-पुरुष राज्य करता था। शेष दक्षिण प्रान्त था, उनकी अवस्था अधिक समस्या पूर्ण थी, प्राचीन-कालमें दक्षिणमें तीन बड़े वंश राज्य करते थे, चेरा, कोला, पाण्डा, इनके राज्य दक्षिणके भिन्न भिन्न भागोंमें फैले थे, इनके राज्योंमें बीजापुर राज्य बहुत बलवान् तथा प्रसिद्ध था। सहस्र वर्षसे अधिक तक यह राज्य स्थित रहा। इसने प्रत्येक प्रकारकी विद्या तथा कलाकौशलमें बहुत उन्नति की थी। माधवाचार्य्य, सायनाचार्य्य दो बहुत विद्वान् भ्राताओंके नाम प्रसिद्ध हैं, उस समय बीजापुर राज्यकी समाप्ति हो चुकी थी, उनके स्थानपर आर्य्योंका प्रसिद्ध मैसूर राज्य स्थापित हो चुका था। इसके अतिरिक्त बड़ा मुसलमान राज्य "हसनगङ्गू बहमनी" नामसे स्थापित हो गया। हसनखान एक मनुष्य गङ्गू नामक ब्राह्मणका भृत्य था, ब्राह्मणने उसके अन्दर ऐसे गुण देखे जिससे उसने यह भविष्य कथन किया कि यह मनुष्य एक राज्य स्थापित करेगा। हसनखानको सफलताके लिये यह भविष्य-कथन पर्य्याप्त था। उसने दिल चले युवक एकत्र किये और लूट मारकर धनादि पदार्थ एकत्रित करना और राज्य जीतना आरम्भ किया। राजा लोग दुर्बल तथा निकम्मे हो चुके थे, लोगोंमें कोई राजनैतिक विचार

तथा आचार न था, वह केवल ताकतके पुजारी हो चुके थे, जो मनुष्य, बुरा वा भला, हिन्दू वा मुसलमान, देशी वा विदेशी ताकत प्राप्त कर लेता था, वही उनका राजा हो जाता था और वह उसकी प्रजा बनना स्वीकार कर लेते थे। ऐसे लोगोंपर राज्य स्थापित करना कौनसा कठिन कार्य्य है, केवल मनमें दृढ़ सङ्कल्प होना और कुछ साथियोंका एकत्र करना आवश्यक है। एक ग्राम अधीन करके दूसरा, उसके पश्चात् तीसरा और इसी तरह आगे आगे बढ़ते जाना क्या कठिन कार्य्य है। जब आगेसे सामना करनेवाला न कोई राजा हो और न लोगोंमें बल हो, लोग मनुष्य न थे, भेड़ हो चुके थे, ऐसे लोगोंपर हसनखानने सफलता प्राप्त करते करते एक बड़ा राज्य स्थापित कर लिया और अपने स्वामीकी स्मृतिमें उसका नाम "हसनगङ्गू बहमनी सल्तनत" रखा। डेढ़ सौ वर्ष तक यह राज्य विद्यमान रहा, उसके पश्चात् छिन्न भिन्न होकर उसके स्थानपर पाँच बड़ी बड़ी रियासतें स्थापित हो गईं।

मुग़ल राजाओंने इनके साथ युद्ध करके इनमेंसे तीनको अपने साथ मिला लिया। बीजापुर और गोलकुण्डा शेष रह गए। दक्षिणका बहुत सा भाग देहली राज्यके साथ मिल गया और दक्षिणका एक सूबेदार भिन्न नियत हुआ। दक्षिण प्रान्तके नीचे एक छोटा इलाका एक भिन्न नव्वाबके अधीन था।

औरङ्गजेबकी यह उत्कट इच्छा थी, कि दक्षिणके अन्दर बीजापुर और गोलकुण्डाको स्वतन्त्र रियासतोंको भी अपने साथ मिलाकर सारे दक्षिणमें अपना राज्य स्थापित करे, वर्षों तक उसने इस इच्छाकी पूर्त्तिके लिये उनके साथ युद्ध जारी रखा।

यूरोपीय जातियोंका आर्य्यावर्त्तमें आना।

जिस समयमें खुश्कीके एक ही मार्गसे मुगल आर्य्यावर्तमें आये और एक नया राज्य स्थापित हुआ, उसी समय समुद्रके मार्गसे यूरोपीय जातियां यहां पर आईं। उनका प्रयोजन आक्रमण करके देश जीतनेका न था। वह केवल व्यापारके लिये यहां आये। उनका धर्म ईसाई मत था। रङ्गके श्वेत थे, उनके दिलोंमें स्वदेश-प्रेमका भाव बहुत था। उससे एक दो शताब्दियां पहिले उन्होंने चीनके देशसे प्रेस, कुतुबनुमा और बारूदके आविष्कारोंकी नकल करके बहुत उन्नति कर ली थी। कुतुबनुमासे जहाज़ चलानेमें बहुत लाभ उठाया।

टर्की और एशिया कोचक आदि देश तुर्कोंके अधिकारमें आजानेसे आर्य्यावर्तके साथ यूरोपके खुश्की व्यापारका मार्ग बन्द हो गया। एक मनुष्य कोलम्बस नामीने यह व्रत किया, कि वह आर्य्यावर्तकी ओर समुद्री मार्ग ढूंडेगा। इस इच्छासे जहाज़ लेकर वह चल पड़ा और जनूबी अमेरिकाके निकटके द्वीप 'गर्बुलहिन्द' का पता लगाया।

आर्य्यावर्तका मार्ग ढूंढ़नेका एक और उपाय निकला। स्पेन और पुर्तगालके देश कोई सात सौ वर्ष तक मुसलमानोंके राज्यके नीचे रहे। इस अरसेमें मुसलमान राजे बहुत गिर गये। केवल दो पहाड़में बची हुई स्वतन्त्र रियासतें गनेस्टेल और अरागान ईसाई थीं। इन दोनोंकी परस्पर विवाहके सम्बन्धसे प्रीति हो गई। जब यह एक हकूमतमें आ गईं तो उन्होंने मुसलमानोंको स्पेनसे निकालनेके उपाय सोचे और शेष यूरोपकी सहायतासे उनको इसमें सफलता हुई। उन्होंने मुसलमानोंको अपने देशसे

निकाल दिया। जो शेष रहे उनको या तो मार डाला या ईसाई बना डाला।

अपने देशको वापिस लेनेपर प्रसन्नताकी लहर बड़ी जोरदार थी। उन्होंने जहाज़ बनाकर जहांपर मुसलमान गये थे, उनका पीछा करना आरम्भ किया। अफ़रीकाके पाश्चात्य किनारेपर उनके साथ लड़ाई करते पुर्त्तगीज़ जहाज़ केप कालोनीपर जा पहुंचे। वहांसे एक जहाज़रां वास्कोडगामा दूसरे किनारेके साथ साथ हो लिया और जल्दी ही मोज़मबीक़ आ पहुंचा। अफरीकाके पूर्वीय किनारेपर आर्य्यावर्तके व्यापारी उस समय व्यापार करते थे। एक आर्य्यावर्तका जहाज़ चलानेवाला वास्कोडगामाको आर्य्यावर्तके किनारेपर कालीकटमें ले आया। इस प्रकार आर्य्यावर्तका समुद्री मार्ग १४९८ में आविष्कृत हो गया। एक सौ वर्ष तक आर्य्यावर्तका व्यापार स्पेनके हाथमें रहा और यूरोपमें स्पेन मालामाल हो गया। जब हालेण्डके लोग स्पेनसे स्वतन्त्र हो गये, तो उन्होंने स्पेनके अधिकारमें जो स्थान थे, उनपर हाथ बढ़ाया और कुछ समय तक आर्य्यावर्तके व्यापारका बहुतसा हिस्सा हालेण्डके नगरोंमें था। फ्रान्सवालोंने आर्य्यावर्त्तसे व्यापार करना आरम्भ किया। स्पेनके धनको देखकर अंग्रेज जातिके अन्दर भी आर्य्यावर्तके साथ व्यापार करनेकी इच्छा उत्पन्न हुई और उसके लिये राजेश्वरी एलीज़ाबेथके राज समयमें कई व्यापारसम्बन्धी कम्पनियां स्थापित की गईं, जिनके जहाज़ आर्य्यावर्तमें व्यापारके लिये आये। उनके व्यापारी १५७२ ईस्वीमें सूरतमें उतरे और वहां अपना कारखाना बनाया। इसके पश्चात् मद्रास और बङ्गालके अन्दर कलकत्तेमें अंग्रेज व्यापारियोंने अपना काम धन्धा आरम्भ किया। शाहजहांकी लड़कीका इलाज एक अंग्रेज डाक्टरने किया। उसने विशेष जमीन

अँग्रेजी कम्पनीको दी। इसके पश्चात् फर्रुखसियरकी बीमारीको डाक्टर हेमिल्टनने दूर किया, जिससे कि उसने अपने स्वार्थके लिये कुछ इनाम न मांगा। प्रत्युत अपनी कम्पनीके लिये बङ्गालमें बिना महसूल व्यापार करनेकी आज्ञा प्राप्त कर ली।



महाराष्ट्र राज्यकी स्थापना।

इस्लामके आगमनके पश्चात् Revival of Hinduism (आर्य्य धर्मका पुनरुत्थान) देशके भिन्न भिन्न विभागोंमें हुआ था, उनमें केवल दो भागोंमें इस धार्मिक पुनर्जीवनने राजनैतिक स्वरूप ग्रहण किया। एक महाराष्ट्र प्रान्तमें और दूसरा पञ्जाबमें। इन दो प्रान्तोंमें ही इतना आश्चर्य्यजनक परिवर्त्तन क्यों हुआ? इसका संक्षिप्त वृत्तान्त उस समय आवश्यक है, प्रथम तो दक्षिणमें महाराष्ट्रकी स्थापना है।

यह राज्य ऐसा स्थापित हुआ, कि चिरकाल तक देशमें इसकी अत्यन्त ख्याति रही, और औरङ्गज़ेबको इसने मरण पर्यन्त विश्राम न लेने दिया। इसकी आयुका बहुतसा भाग तो मरहटोंके साथ युद्धादि करते व्यतीत हुआ। मरहटे लोग बहुत परिश्रमी, सहनशील और योद्धा (लड़ाके) किसान थे। इनका देश पहाड़ी है, जिसमें जङ्गल गार और पहाड़ अधिकतर हैं, मरहटा लोग अहमद नगर, बीजापुरके मुसलमान राज्योंमें सिपाहीका कार्य्य करते थे। शाहजी मरहटाने बीजापुरकी रियासतकी नौकरीमें बड़ी बड़ी सेवायें कीं, और उसे पूना और सोपा जागीरके रूपमें प्राप्त हुआ था। १६८४ में इसके घर शिवाजीने जन्म लिया। इसकी छोटी आयुकी शिक्षा जङ्गी फनोंमें हुई। इसलिये तलवार नेज़ा चलानेका बहुत शौक था, बहुतसा समय शिकारमें व्यतीत करता था।

शिवाजीपर उसकी माताका, दादाजी पन्थ गुरुका, और सुप्रसिद्ध स्वामी रामदासकी शिक्षाका प्रभाव था। रामदास यद्यपि धार्मिक मनुष्य था, परन्तु देश देशान्तरोंमें भ्रमणकर

उसने देशकी अवस्था ठीक प्रकारसे देखी थी, और उसे जातिकी राजनैतिक अवस्थाको ठीक करनेका बहुत विचार था। वह जानता था, कि जबतक आर्य्य-जाति राजनैतिक शक्ति प्राप्त नहीं करती, तबतक उनके धर्म्मकी रक्षाकी कोई आशा न थी। उसके गुरु दादाजीने मरण समय शिवाजीको बुलाया और कहा,—"मैं उस महायात्राको जाता हूं जिसपर सबको जाना है। इस मार्गसे फिरनेका गुज़ारा नहीं, मुझे इस दरियासे पार उतरना है, बड़ी शक्तिको परास्त करना है, परन्तु मैं देखता हूँ, तू अकेला है, संसार देखा नहीं। कुछ बातें कहता हूँ, धर्म्म ज्ञानपर दृढ़ रहना, गौ ब्राह्मणोंका सत्कार करना, सहपाठीको प्राणोंसे भी प्रिय समझना, मन्दिरोंकी रक्षा करना, जिस मार्गमें पांव रखा है, पीछे न हटना।" शिवाजीकी माता साध्वी स्त्री थी, उसे अपने धर्म्मसे बहुत प्रेम था। कहते हैं, उसे देवीने शुभ समाचार दिया था, कि तुम्हारा लड़का शिवाजी धर्म्मकी रक्षा करेगा और मरहटा जातिकी उन्नति करेगा। माताके प्रभावसे शिवाजीने यह निश्चय मनमें सुदृढ़ कर लिया, कि देशसे मुसलमान राज्यको दूर कर दूँगा। यौवन चढ़ते ही उसने कुछ युवक इकट्ठे किये और तोरनिया, सिंहगढ़, पुरन्धर इत्यादि दुर्गों (किला) पर अधिकार जमा लिया। अपनी पहाड़ियोंमें उसकी अवस्था एक सिंहकी थी। जब कभी अवसर मिलता था, झपट्टा मारता था, और देश वा कोष छीन लेता था। यह अवस्था देख बीजापुरने शाहजीको कैद कर लिया। शिवाजीने शाहजहांसे अपील की, और उसकी सहायतासे शाहजीको छोड़ दिया गया। अब शिवाजी और बेधड़क हो गया और उसने मुगलोंकी भूमिपर आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। देहलीमें औरङ्गजेबका राज्य हो गया। वह भी बीजापुरको दुर्बल करना चाहता था। बीजा-

पुरके बादशाहने शिवाजीसे तंग आकर अपने सरदार अफ़ज़ल खांको बड़ी सेना देकर भेजा। शिवाजीने इस समय चतुराईसे काम लिया। उसने अफ़जल खांसे सन्धिकी इच्छा प्रकट की और अकेलेमें मुलाकातपर राज़ी कर लिया। मरहटा इतिहास लेखकोंका विचार है, कि दोनों मन ही मन एक दूसरेको मार डालना चाहते थे। शिवाजीने जल्दी की और अफजल खांको मार डाला। उसी समय बिगुलवालेने बिगुल बजा दिया। शिवाजीके सैनिक बीजापुरकी सेनापर जा पड़े और सारा माल घोड़े और कोष लूट लिया। उसका बल अब बढ़ गया और उसने मुगलोंकी भूमिपर फिर आक्रमण आरम्भ कर दिये। औरंगजेबने शाइस्ता खांको सेना देकर भेजा। शाइस्ता खां पूनेमें शिवाजीके मकानपर जा उतरा। शिवाजीने अब एक दूसरी ही चाल चली। अपनी सेनाको एक बारात बनाकर स्वयम् उनके साथ पूनेमें प्रविष्ट हो गया और रातको उसी मकानपर आक्रमण कर दिया। शाइस्ता खां कठिनतासे जीवन बचाकर भाग निकला। उसकी अंगुली कट गई। शिवाजीका साहस और बढ़ गया और सूरतको जा लूटा, जहांसे मुसलमान हजके लिये जहाज़पर सवार हुआ करते थे। औरंगज़ेब इससे बहुत क्रुद्ध हुआ और राजा यशवन्तसिंह और अपने पुत्र मोअज़्ज़मको उसके विरुद्ध भेजा। यशवन्तसिंहने शिवाजीसे सन्धि कर ली और शिवाजीने अधीनता स्वीकार कर ली। शिवाजीने मुग़ल सेनाकी सहायता बीजापुरके आक्रमणमें की। बादशाहने प्रसन्न होकर उसे देहली बुलाया, परन्तु शिवाजीने वहां पहुँचते ही अपने आपको कैदमें पाया। वह और उसके पुत्र दोनों एक चालसे देहलीसे भागकर राजगढ़ पहुँच गये। अब शिवाजीने खुल्लमखुल्ला बादशाहका सामना आरम्भ कर दिया और १७३१ सम्वत्में राजगद्दी

पर बैठकर महाराजाकी उपाधि ले ली और अपने नामका सिक्का जारी किया। इसके पश्चात् उसका बल बराबर बढ़ता गया।

उसने एक बार सूरतको फिर लूटा और शाही सेनाको बड़ी भारी शिकस्त (हार) दी। अगले वर्ष बीजापुरको फिर खान्देश, बरार, करनाटकको पराजित किया। औरंगजेबने बीजापुरपर आक्रमण किया। बीजापुरने तंग आकर शिवाजीसे सहायता मांगी और अन्तमें लिखा कि अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं। यदि आना है तो उस समयसे पूर्व काम आवो, जब कि तुम्हारा आना निष्फल न हो जावे। शिवाजीने जोशमें आकर सहायता की। शाही सेनाको मार हटाया। बीजापुरकी ओरसे बड़ी कृतज्ञता प्रकट की गई। अचानक ५३ वर्षकी आयुमें आपकी मृत्यु हो गई। उसका पुत्र सम्भाजी गद्दीपर बैठा। सम्भाजी मूर्ख और क्रूर स्वभावका था, परन्तु मरहटोंका बल जातीय बल था। इस लिये, वह बराबर स्थिर रहा। औरंज़ेबको एक ही चिन्ता रही, कि किसी प्रकारसे दक्षिणको अपने राज्यमें लावे। इसलिये वह बीजापुर और गोलकुण्डाका अस्तित्व मिटानेमें लगा हुआ था। उसने उन दोनोंको विजयकर नया दक्षिण प्रान्त बनाया, जिसकी राजधानी हैदराबाद बनाई। अब औरङ्ग़ज़ेबको अपनी त्रुटि प्रतीत हुई। इन राज्योंने मरहटोंको वशमें कर रखा था। इनके नाश होते हो सारे दक्षिणके मरहटे उठ खड़े हुए और मुगल सेनाके लिये उनका रोकना कठिन हो गया। दक्षिणके झमेले बड़े पेचीदा हैं। केवल इतना बता देना पर्याप्त है, कि औरङ्ग-ज़ेबकी आयुके शेष २५ वर्ष दक्षिणमें मरहटोंकी शक्तिके दमनमें बीते और उसमें भी उसको निराशाका मुँह देखना पड़ा और यही निराशा उसकी मृत्युका कारण हुई। इसका कारण यह था, कि मुग़ल सेना अति विषयासक्त हो गई थी, यहाँतक कि

सेनापति पालकियोंमें चढ़कर युद्धक्षेत्रमें जाते थे और साथ ही बेगमोंके तम्बू चला करते थे। प्रातःकालसे तैयारी आरम्भ होती थी और दिनभरमें शाही सेनाका दस्ता बड़ी कठिनतासे दो तीन मील चला करता था। मरहटी सेना अपनी पीठपर चमकीली ढालें लादे घोड़ेपर आरूढ़ प्रत्येक प्रकारके कष्ट सहनेको स्वभावसे ही तय्यार, एक तरफसे आकर शाही सेनापर आक्रमण करती थी और बहुतसे सामान, तथा भोज्य पदार्थ इत्यादि लूट ले जाती थी। शाही सेनाका मुख (रुख) उस ओर बदलता था, कि दूसरी ओरसे उनके साथी आ पड़ते थे और शाही सेना अब तीसरी ओर रवाना होना प्रारम्भ होती थी। यह गुरीला प्रकारका युद्ध कहाता है, जिसमें न केवल मरहटे सैनिक परन्तु मुग़ल सेना भी बादशाह-पर हँसा करती थी। सं० १९४६ में सम्भाजी पूनेके मध्यमें मस्त पकड़ा गया। इसे बादशाहके पास भेजा गया। बादशाहने उसे मुसलमान हो जानेके लिये कहा। कायर सम्भाजी इस समय दिलेर हो गया और उसने क्रोधसे भरा हुआ ऐसा उत्तर दिया, जिसको सुनकर औरङ्गजेबकी आँखें लाल हो गई और उसने सम्भाजीकी आँखोंमें तपी हुई सलाई डालकर अन्धा करके उसे मरवा डाला। एक मूर्ख दर्जेके प्रभावशाली बलिदानने मरहटा जातिमें नया जीवन उत्पन्न कर दिया। उसका छोटा भाई राजाराम राजा बन गया और मुग़ल सेनाकी प्रतियोगिता करता रहा। औरंगजेबको एक एक किला लेनेमें कई कई वर्ष लगे, और फिर भी मरहटे अवसर पाते ही लूट मार करते थे, और शाही सेनाका इतना नाकमें दमकर दिया, कि औरंगजेबको उनका विचार छोड़ कर लौटना पड़ा। इधर राजपूत राजद्रोही थे, उधर जाट उठ खड़े हुए। पञ्जाबमें सिक्खोंने सर उठाया। लौटते समय मरहटा सवारोंने शाही सेनाको इतना तंग किया, कि औरंग-

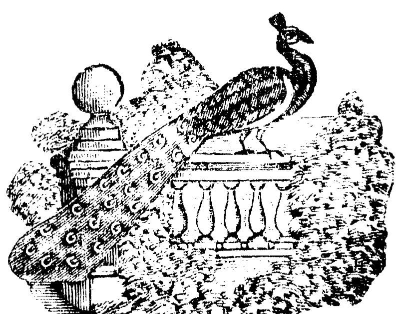
जेबको देहली पहुँचनेकी कोई आशा न रही। सं० १७६४ में अहमदनगर पहुँचकर उसकी मृत्यु हो गई। इससे सात वर्ष पूर्व राजाराम मर चुका था। इस समय महाराष्ट्रमें राजारामकी विधवा स्त्री ताराबाई राज्य करती थी, और बराबर मरहटोंको मुग़लोंके विरुद्ध लड़ाती थी। उसका पुत्र अभी छोटा था। औरंगजेबके पुत्र बहादुरशाहने यह चाल चली, कि सम्भाजीका पुत्र शिवाजी सानी जो कि उसके दर्बारमें बन्द था, उसे अपने आधीन राजा बनाकर मुक्त कर दिया ताकि वह ताराबाईसे अपना राज्य माँगे। उसकी वापसीपर कई मरहटे सरदार उसके साथ हो गये और उनकी सहायतासे वह सिताराका राजा बन गया। ताराबाई लगातार चार वर्षतक उसके विरुद्ध लड़ती रही। परन्तु सम्भवतः १७६६ में उसके पुत्रकी मृत्यु हो गई। अब अधिक लड़ाई करना निष्फल था। औरंगजेबके विरुद्ध बीस वर्षका युद्ध था, जिसने मरहटोंको बलवान बना दिया और इनके इतिहासके गौरवको बढ़ा दिया। शिवाजीने शाही सेनासे कभी मुकाबला नहीं किया था। इन लोगोंने बिना धन, 'बिना सामान शाही सेनाका इतने समय तक मुकाबला किया। इस स्वतन्त्रताके युद्धने मरहटोंको भारतके राज्यके योग्य बना दिया। इस कालमें इन्होंने कष्ट झेलकर सहनशीलता और वीरता तथा योग्यताकी शिक्षा प्राप्त की। यह गुण बिना इस संघर्षणके उत्पन्न न हो सके थे। साहू (शिवाजी द्वितीय) नाम मात्रका राजा था। मुग़ल दरबारमें रहकर उसके अन्दर कोई उत्तम गुण उत्पन्न नहीं हुआ। सब राज्यका बल उसके मन्त्री (पेशवा) बालाजी विश्वानाथके हाथमें आ गया और इसके बाद महाराष्ट्रका राज्य पेशवाओंके हाथमें रहा। सं० १७७७ में उसका पुत्र बाजीराव पेशवा नियुक्त हुआ। मरहटे घुड़सवार इस समय बिना कार्य्यके थे,

और उनको वशमें रखनेके लिये बाजीरावने यह सम्मति दी कि मुग़ल साम्राज्य अवनत दशामें है, इसपर आक्रमण करना चाहिये। दक्षिणके नवाब निजामुलमुल्कने इसके विरुद्ध एक दल खड़ा करके फूट डलवानेकी चेष्टा की। जिस कारणसे बाजीरावने जोरदार शब्दोंमें प्रार्थना की,-"मुग़ल साम्राज्यका वृक्ष अब सूख गया है। अब अवसर है, कि इस वृक्षको जड़से उखाड़ कर आर्य्य धर्मको इस देशमें स्थापित किया जाय।" साहूने मान लिया और बाजीरावने मालवा, गुजरात, बुन्देलखण्डसे चौथ मांगनी प्रारम्भ कर दी और उसके साथ देहलीपर आक्रमण कर दिया। निजामुलमुल्क दक्षिणसे बादशाहकी सहायताके लिये बढ़ा, परन्तु चम्बल नदीके तटपरसे फिर गया और मालवा और नदी नर्मदा और चम्बलका प्रान्त मरहटोंको देकर जीवन बचाया।

उस समय देहलीमें महम्मद शाह राज्य करता था। उसके आराम पसन्दी की कोई सीमा न थी। उसके समयमें सम्वत् १७६६ में नादिरशाहने भारतवर्षपर आक्रमण किया। यह एक साधारण कोटिका पुरुष था, उसने ईरानकी गद्दी प्राप्त कर ली और काबुल कन्धारपर अधिकार करके देहलीपर आक्रमण किया। कर्नालके युद्धक्षेत्रमें दोनों बादशाहोंका युद्ध हुआ। महम्मद शाहकी पराजय हुई। नादिरशाह देहलीमें घुसा। तीन दिनतक शिरच्छेदन (कतल आम) करवाया, फिर लूट आरम्भ हुई। अन्तमें दो मासके अनन्तर शाहजहांका बनाया हुआ तख्ते ताऊस और अगणित-जवाहरात और कोहेनूर भी लेकर लौट गया। बस मुगलिया राज्यका दीपक टिमटिमाने लगा। बङ्गाल और अवध नाम मात्रसे बादशाहके अधीन थे। दक्षिणमें मरहटोंका राज्य था। निज़ामुलमुल्क भी स्वाधीन था। मालवा और गुजरात मरहटोंके हाथमें थे।

बाजीराव बड़ा भारी प्रतिष्ठित और शक्तिशाली सेनापति था। उसका पुत्र बालाजी बाजीराव पेशवा निश्चित हुआ। इसके समयमें मरहटोंने बङ्गालपर आक्रमण किया। अलीवर्दी नामीने सामना किया; किन्तु फिर भी मुर्शिदाबादको इनके हाथोंसे न बचा सका।

नादिरशाह वापसीके कुछ वर्ष अनन्तर मारा गया। उसका एक सेनापति अहमदशाह काबुल वो कन्धारका स्वामी बन बैठा था। उसने दो बार आक्रमण करके पञ्जाब अपने साथ मिला लिया। देहलीमें गड़बड़ मच गई, जिसमें प्रति दिन मरहटोंका गौरव देहलीमें बढ़ता गया। मरहटोंकी सहायतासे राजा बैठते थे और उतारे जाते थे। मन्त्री बनाये जाते थे। मरहटे देहलीके स्वामी बन चुके थे कि अहमद शाह अबदालीने सम्वत् १८१७ में फिर आक्रमण किया और पानीपतके प्रसिद्ध युद्धमें मरहटा सेनाओंको पराजित किया। इस दुःखसे बालाजी बाजीरावने प्राण त्याग दिये।



सिक्खोंकी उन्नति।

दूसरी धार्मिक पुनरस्थापना जो कि बड़ी राजनैतिक शक्ति बन गई, उसके नेता पञ्जाबके क्षत्रियोंमेंसे निकले। इनका पहला नेता गुरु नानक हुआ, जिसने कि धर्मको व्यवस्थाका सुधार और ईश्वर भक्तिका प्रचार आरम्भ किया। पञ्जाबमें प्रत्येक स्थानपर उनके प्रचारका बड़ा प्रभाव पड़ा। गुरु नानकके पीछे गुरु अङ्गद और उनके पीछे गुरु अमरदास गद्दीपर बैठे। चौथा गुरु रामदास था जिसने अमृतसर नगरकी नींव डाली और सिक्खोंका केन्द्र स्थान स्थापन किया। गुरु रामदास लवपुर (लाहौर) नगरमें उत्पन्न हुआ और बाल्यावस्थामें चने बेचा करता था। जब सिक्ख सङ्गत जाते हुए लाहौरसे गुज़रे तब वह भी उनके सङ्ग हो लिया। गुरु अमरदासकी स्त्रीने बालकको देखकर गुरुसे कहा कि हमें पुत्रीके लिये इस प्रकार वर चाहिये। गुरुने कहा—अच्छा यही सही। उसका विवाह कन्यासे किया गया और तदनन्तर वह गद्दीपर बैठा। कहते हैं कि गुरु अमरदासकी पुत्री बड़ी सदाचारिणी थी और श्रद्धावाली थी। एक दिन गुरु चौकीपर बैठे स्नान कर रहे थे। चौकीका पावा टूट गया। लड़कीने अपना हाथ उसके स्थानमें दे दिया। स्नान समाप्त होनेपर गुरुने लहूको धारा बहती देखा। सारा वृतान्त सुनकर अत्यन्त प्रसन्न होकर वर दान देनेकी इच्छा प्रकट की। कन्याने कहा कि गुरुकी गद्दी मेरी सन्तानके अधिकारमें रहे। इसके पुत्र गुरु अर्जुन हुए जो कि बहुधा लाहौरमें ही रहते रहे। उन्होंने गुरु बनकर सिक्खोंकी पवित्र पुस्तक ग्रन्थ साहबको सम्पादित किया। जहांगीरको रिपोर्ट की गई, कि

वह पुस्तक इस्लामके विरुद्ध प्रचार करती है। जहांगीरके पूछने पर गुरु अर्जुनने कहा कि कहींसे खोलकर देख लिया जावे। एक स्थान निकाला गया। उसमें केवल परमात्माके गुणोंका वृत्तान्त था। फिर गुरू अर्जुनसे कहा गया कि वह उसमें कुछ ऐसे शब्द प्रतिष्ठित कर दे जिनमें हज़रत मुहम्मद और इस्लामकी प्रशंसा हो। यह अवसर परीक्षाका था। अया गुरु अर्जुन बादशाही दबावके नीचे रहते हैं या उनकी शक्ति विजयी रहती है। गुरुने उत्तर दिया कि इस पुस्तकमें जो कुछ लिखा गया है वह वाह गुरुकी प्रेरणासे मुखसे निकला है। किसीकी आज्ञासे बनाकर इसमें लिखा नहीं जा सकता। गुरु अर्जुनको मृत्यु बलिदान था। लाहौरमें बुलाकर उनको कई प्रकारके कष्ट दिये गये और फिर आज्ञा हुई कि गौका चर्म देहपर पहरें। उन्होंने रावी नदीमें स्नानके लिये जलमें प्रवेश किया और फिर बाहर न निकले। उनका पुत्र गुरु हरगोविन्द गद्दीपर बैठा। शारीरिक सौन्दर्यमें अद्वितीय, वीरता और साहसमें अतुल्य, आत्मिक शक्ति और ज्ञानमें असाधारण व्यक्ति थे। उनको मालूम था, कि उनके पिताकी मृत्यु कैसे हुई। उन्होंने निश्चय कर लिया कि एकमात्र धार्मिक सम्प्रदाय बनानेसे कार्य नहीं चलेगा। सिखोंको एक राजनैतिक शक्ति बनाना होगा। उन्होंने बैठनेके स्थानको तख्त अकालभङ्गका नाम दिया। जहां कि प्रति दिन "दरबार" लगाया करते थे और अपने आपको "सच्चा बादशाह" कहलाना आरम्भ किया और सब सिखोंसे नियमित रूपसे कर लेकर कोषमें एकत्र करना आरम्भ किया। दरबारसे सर्व प्रकारके मुकदमेंका न्याय करना आरम्भ कर दिया।

यह सब बातें रिपोर्ट की गईं। बादशाहकी आज्ञासे कई सहस्र सेना अमृतसरमें रखी जाने लगी ताकि उनकी उठती हुई

शक्तिका पता रहे। उसके पश्चात् लाहौरके नवाबका गुरुके साथ विरोध हुआ और कई वर्ष तक युद्ध होता रहा। दो बार अमृतसरपर आक्रमण हुआ और अमृतसर उजाड़ दिया गया। इन सब कष्टोंके होते हुए भी उनकी शक्ति बढ़ती गई। इस युद्धके समयमें गुरू स्वयंम् सबसे आगे बढ़कर लड़ते थे और उनकी वीरता चमत्कार समझी जाने लगी। उनकी उदारता तथा सर्वप्रियता अद्वितीय थी। एकबार बादशाहने गुरुको ग्वालियरके दुर्गमें कैद कर दिया। सैकड़ो सिख जाकर दुर्गकी दीवारोंको चूम चूम कर लौट आते थे। अकस्मात् बादशाह रोगग्रस्त हो गया। उसे भय हुआ, कि उसका रोग एक पवित्र आत्माको कैद करनेके कारण हुआ। उसने उनको मुक्त कर दिया। गुरु हरगोविन्दने स्वतन्त्र होना इस शर्तपर स्वीकार किया कि दुर्गके सब कैदी मुक्त कर दिये जावें। अतः ऐसा ही किया गया। इनमें राजपूत राजा भी थे जो कि गुरूके साथ ही चले आये। जब गुरुने प्राण त्याग किये तो वह उनकी चितामें साथ ही भस्म हो गये। उनका प्रेम और अनुराग गुरुपर इतना दृढ़ था।

गुरु हरगोविन्दका सौन्दर्य और ज्ञान-शक्ति इतनी प्रसिद्ध हो गई कि लाहौरके क़ाज़ीकी पुत्री उनकी शिष्य बन गई। घरसे वह तंग आकर फ़कीर मियां मीरके समीप गई। उसने उसे गुरुके पास पहुंचा दिया। गुरु उसको पास रखते रहे और ज्ञानकी शिक्षा देते रहे। उसकी स्मृतिके लिये अमृतसरमें कौलसर बना दिया। उनके पुत्र गुरु हरराय गद्दीपर बैठे। उनके समयमें उनके पुत्र रामराय देहलीमें औरङ्गजेबसे मिलने गये। औरङ्गजेबने उनसे प्रश्न किया कि ग्रन्थ साहबमें यह शब्द क्यों लिखा है—मिट्टी मुसलमानकी पेड़े पई कुम्हार। घड़ भाण्डे इ'टा

किया जल्दी करे पुकार। रामराय भयभीत हो गये और कहा कि वह "मिट्टी बेईमान की" है न कि 'मुसलमानको'। जब यह समाचार गुरुको मिला उन्होंने रामरायका मुख देखना अस्वीकार कर दिया। उसने भयभीत होकर वचनमें परिवर्त्तन क्यों कर दिया है? गुरु हर रायके पश्चात् उनके पुत्र गुरु हरिकृष्ण गद्दीपर बैठे। वह बाल्यावस्थामें ही संसारसे चल दिये। अब गद्दीके अधिकारके विषयमें विचार होने लगा। गुरु हरगोविन्दके एक पुत्र तेग़ बहादुर पटनामें रहा करते थे। उनको बुलाकर गुरु बनाया गया। औरङ्गजेबके अन्यायका राज्य चल चुका था। उसने हिन्दुओंपर जज़िया लगा दिया। काशीमें ब्राह्मणोंका वेदोंकी शिक्षा न देनेकी आज्ञा प्रचारित कर दी। प्रसिद्ध विश्वनाथजीके मन्दिरको गिराकर मस्जिद बना दी। हिन्दू मेले बन्द कर दिये गये। हिन्दू लोग एकत्र होकर बादशाहकी सेवामें उपस्थित हुए कि वह जज़िया न लगाया जाये। उसने किञ्चित् परवाह न की और आज्ञा दी कि हस्तीको चलने दिया जाये। कई मनुष्य कुचल कर मारे गये। सतनामी साधुओंका सम्प्रदाय बिगड़ गया और शाही सेनाके एक दस्तेको पराजय कर लिया। लोगोंने विचारा कि उनके पास कोई जादू है। औरङ्गजेबने अपनी सेनाके विश्वासके लिये अपने हाथसे तावीज़ तैयार किये और शाही पताकासे बाँध दिये और बड़ी कठिनाईसे यह विद्रोह दबाया गया। हिन्दुओंकी अब एक दीन अवस्था थी। उसके अन्यायसे तङ्ग आकर कहा है कि काश्मीरके ब्राह्मण चलकर गुरु तेग़बहादुरके समीप आये कि वह उनकी आपत्तिको दूर करनेका उपाय करें। गुरु तेग़ बहादुरकी रगोंमें गुरु अर्जुन और गुरु हरगोविन्दका लहू बहता था। उन्होंने कहा कि इस अत्याचारको रोकनेके लिये किसी

महात्माके बलिदानकी आवश्यकता है और साथ ही अपना शिर देनेका निश्चयकर लिया। अभिप्राय यह है, कि गुरु तेग़ बहादुरको देहली बुलाया गया और कहा गया कि वह कोई सिद्धि (करामात) दिखायें। उन्होंने एक पत्र गलेके साथ लपेट लिया कि खड्ग इसपर अपना प्रभाव न कर सकेगी। खड्ग चलाया गया। शिर शरीरसे पृथक् हो गया और पत्रपर यह लिखा निकला "सिर दिया पर सर न दिया" अर्थात् धर्मका त्याग न किया परन्तु अपना जीवन दे दिया। इसके बाद गुरु गोविन्दसिंहजी गद्दीपर बैठे।

गुरु गोविन्दसिंहने गद्दीपर बैठते ही तैयारी आरम्भ कर दी। सिखोंको "सिंह" बनानेके लिये उसने बड़ा यज्ञ किया जो कि एक वर्ष तक होता रहा। समाप्त होनेपर "देवी" के लिये शिरोंका बलिदान मांगा। सहस्रों सिख एकत्र थे। घबरा गये और कहने लगे कि गुरु उन्मत्त (पागल) हो गया है। पांच सिख निकले जिनको एक एक करके तम्बूमें बिन दिया गया और पांच बकरे मारे गये। यह खालसाका जन्म था, जिसने कि पञ्जाबके इतिहासमें बड़ा भाग लिया।

पञ्जाबके पहाड़ी राजे गुरु गोविन्दसिंहको सहायता देनेपर तैयार न थे। उनको मुग़ल शक्ति भयानक प्रतीत होती थी। गुरु गोविन्द अपने थोड़ेसे साथियोंको लेकर शाही सेनाके विरुद्ध कई वर्ष तक युद्ध करते रहे। उसके दो पुत्र युद्धमें मारे गये। दूसरे दो माता सहित पकड़े गये और बड़ा साहस तथा निर्भयता दिखाते हुए सरहिन्दके दुर्गकी दीवारोंमें चुनवा दिये गये। यह सब पुत्र बलिदान थे; जिन्होंने कायर हिन्दुओंको मृत्युसे निर्भय बनानेका काम किया। जैसे गुरु गोविन्द कहते थे "चिड़ियोंसे मैं बाज लड़ाऊं, तबही नाम गोविन्दसिंह कहाऊँ" उनके साथी

एकबार तङ्ग और निराश होकर घरोंमें जानेपर उद्यत हो गये। गुरुने उस समय अपना आत्मिक बल दिखाया। उनसे कहा, कि जब मैंने यह काम आरम्भ किया था तब क्या तुम मेरे साथ थे? उत्तर मिला "नहीं"। उसपर गुरुने कहा जिसके विश्वासपर मैंने यह कार्य आरम्भ किया, वह अब भी मेरे साथ है और सदा रहेगा।

येही सिक्ख जब घरोंको लौटकर आये तो उनकी स्त्रियोंने यह समाचार सुनकर घरोंके द्वार बन्द कर दिये और उनसे कहा कि हमें मुख मत दिखाओ, तुम गुरुसे विमुख होकर आये हो। ये सिक्ख वापस लौट गये और सबके सब युद्ध करते करते युद्धक्षेत्रमें मारे गये। जब गुरु गोविन्दसिंह वहां पहुंचे तो एक-का उनमेंसे जीवन शेष था। उसने गुरुसे प्रार्थना की कि उसके साथियोंका दोष क्षमाकर दिया जाये। गुरुने प्रसन्न होकर उस स्थानका नाम मुक्तसर रख दिया।

चमकौर दुर्गके युद्धमें जब इनका कोई साथी न रहा तो वे वेष बदलकर वहांसे निकल पड़े। भटिण्डेके समीप उनसे एक सिक्ख मिला और उसने आद गुरुका शब्द कहा। "नीले वस्त्र कपड़े पहने तुर्क पठानी अमल भया" गुरु गोविन्दने शीघ्र ही उसे बदल दिया और कहा नीले वस्त्र कपड़े फाडे तुर्क पठानी अमल गया। जिसपर सिक्खने गुरुका ध्यान राम रायकी बानीमें बदलनेकी ओर दिलाया। गुरु गोविन्दने कहा—वह और बात थी, वह बदलना बानीके भावमें भयके कारण किया गया था।

गुरु गोविन्दसिंह दक्षिणमें माधोदास वैरागीसे मिले जो कि पश्चात् बन्दा बहादुरके नामसे प्रसिद्ध हुआ। उसका पूणछके अन्दर जन्म हुआ। उसे मृगयासे बहुत प्रेम था। एक दिन मृगीका शिकार किया और घरमें आकर उसका उदर चीरा। उसमें से एक बच्चा निकला। बन्दाके मनपर इतना प्रभाव पड़ा कि घरबार

छोड़कर वह साधु हो गया। दक्षिणमें उसका बड़ा सम्मान था। जनता उसे बड़ा पवित्र सन्त मानती थी, जब गुरुने देशकी व्यवस्थाकी ओर उसका ध्यान दिलाया, तब उसका स्वभाव पिघल गया और वह पञ्जाबमें आकर युद्धमें लड़नेको तैयार हो गया। गुरुने अपने सहायकोंके पास चिट्ठियाँ लिख दीं। बन्देके नाममें जादू था। दैवयोगसे पहले पहल जो सरदार उसके विरोधपर आये, वे उसके बाणोंका लक्ष्य बने। अब प्रसिद्ध हो गया, कि बन्दा (स्वच्छात्मा) बली है। जादूकी शक्ति रखता है। यवन भी इन बातोंपर विश्वास रखते थे। कोई सरदार उसके विरुद्ध आना नहीं चाहता था। बन्दाने सरहिन्द विजय किया। किला गिराया, मस्जिदोंको नष्ट भ्रष्ट किया, वह ग्राम जला दिये, जहाँ कि गुरुके लाल पकड़े गये थे। जहाँ कहीं जाता था, विजय करता जाता था। उसकी सेनाकी संख्या लूट मारके लोभमें भी प्रति दिन बढ़ती गई। पहाड़ी राजे भी उसके सहायक हो गये, उसने गुरुदासपुरमें अपना दुर्ग (किला) बनाया और लाहौर-के अतिरिक्त पञ्जाबके बहुतसे प्रान्तपर अधिकार जमा लिया। औरंगजेबका पुत्र बहादुर शाह स्वयम् सेना लेकर आया, वहाँ उसकी मृत्यु हो गई। उस समय बन्दा उन्नतिके शिखरको प्राप्त हो रहा था।

माता सुन्दर कौर ।

देहलीमें शाही परिवारके शिरच्छेदन (कतल) के पश्चात् फ़र्रुखसियर बादशाह बना। यह अकेला रह गया था, उसने बन्दाको अन्य रीतिसे वशमें करना चाहा। गुरु गोविन्दकी रानी देहलीमें रहा करती थी। फ़र्रुखसियरने तोपें इत्यादि देकर माता सुन्दर कौरको अपनी ओर कर लिया और उससे बन्दाके विरुद्ध पत्र लिखवाये। बन्दाने भी सिक्खोंके समूहको जातीय समूह बनानेके लिये एक दो परिवर्त्तन किये। एक तो यह था कि युद्धके शब्दको बजाये "वाह गुरुकी फ़तेह" के धर्मकी जय कर दिया था। माता सुन्दर कौरने सिक्खोंको यह लिखाया, कि या तो बन्दा नियमानुसार सिक्ख बने नहीं तो उसका साथ छोड़ दिया जाय। बन्दाने ऐसा करनेसे अस्वीकार किया क्योंकि गुरुने स्वयम् उसे ऐसा ही नेता बनाकर भेजा था। इससे उसकी सेनाके दो दल हो गये। परिणाम यह हुआ, कि उनके मध्य इतनी शत्रुता हो गई कि कोई पाँच सहस्र सिक्ख लवपुरके नवाबकी सेनामें आठ आने मासिकपर नौकर हो गये। बन्दाने बहुत कहा, कि ऐसा करना अच्छा नहीं। उन्हें मिलकर एक बार लाहौर (लवपुर) ले लेना चाहिये। इसके पश्चात् वह परस्परमें निपटा लेंगे, परन्तु सिक्खोंने न मानी। जब बन्दाने शेष सेना लेकर लवपुर (लाहौर) पर आक्रमण किया तो बाग्वान पुरामें युद्ध हुआ, जिसमें युद्धके लिये नबावने सिक्खोंको युद्धक्षेत्रमें आगे कर दिया। अपने पुराने साथियोंको अपने विरुद्ध सजे हुए देखकर बन्दाके सिक्ख घबड़ा गये और लौट पड़े। बन्दा और उसके साथी गुरुदासपुरके दुर्गमें घेरे गये। वर्ष भर घेरा रहा।

जब उनके पास भोज्य पदार्थ न रहे तो उन्होंने घोड़े आदिको मारकर खा लिया। अन्त समयमें बन्दा सात आठ सौ साथियों सहित पकड़ा गया और देहली लाया गया।

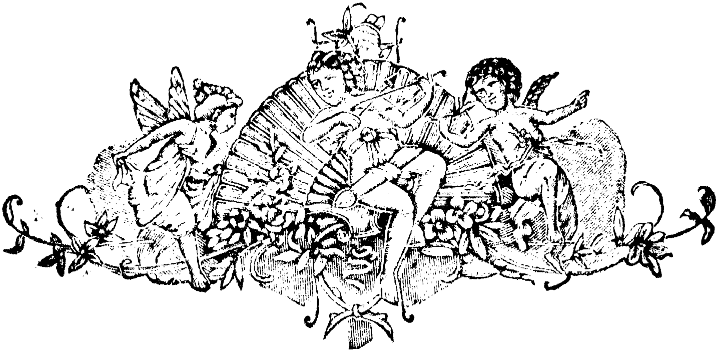
फरुखसियरने आज्ञा दी कि उनको भेंड़के चर्म पहनाकर ऊँटोंपर बिठला, देहली नगरमें फिराया जाय। इसके बाद शतघ्नी (तोप) से उड़ा दिया जावे। एक बालककी माताने बादशाहसे प्रार्थना की, कि उसका लड़का सिक्ख नहीं है। वह धोखेमें पकड़ा गया है। बालकसे पूछा गया। उसने कहा कि मेरी माता गलत कहती है और स्वयं दौड़कर शतघ्नीके सामने हो गया। बन्दा लोहेके पिञ्जड़ेमें कैद था। उसके पुत्रको काटकर उसके हृदयके टुकड़े बन्दाके मुखपर फेंके गये और उसके पश्चात् लोहेकी तपी हुई सीखोंसे बन्दाके प्राण ले लिये गये।

अब सिक्खोंको अपनी मूढ़ता प्रतीत हुई। फरुखसियरने आज्ञा दी कि हरएक सिक्खका शिर लानेपर १०) रु० पुरस्कार मिलेगा। सब सिक्ख अपनी मातृभूमि छोड़कर पर्वतों और बनोंमें जा छिपे। २५ वर्ष तक सिक्खोंने स्वनाम छिपाये रक्खा। जब नादिरशाहके आक्रमणने मुगल बादशाहीको फोड़ डाला तो उस समय सिक्खोंने दल बाँधकर लूट मार करनी प्रारम्भ कर दी। प्रत्येक पुरुष जो एक अश्व और खड्ग ले आता था, दलका सभासद हो जाता था। गुजरानवालेसे लेकर अम्बाले पर्यन्त इस प्रकारके १२ यूथ स्थापन हो गये। जिन्हें बारह मिसिलें कहा जाता है।

नादिरशाहने इन जवानोंको देखकर पूछा कि तुम्हारे घर कहां हैं? इन्होंने उत्तर दिया कि अश्वकी पीठपर। नादिरशाहने विचार किया कि ये बड़े भयावह हैं। कुछ ही वर्षों में पञ्जाबका बहुतसा प्रांत इनके अधिकारमें आ गया और जब अहमद शाह अबदाली-

ने आक्रमण किया तो सिक्खोंने कुरुक्षेत्र (पानीपत) पर उसका विरोध किया, जिसमें बहुत सेना मारी गई। जब मरहटी सेनाने पञ्जाबपर आक्रमण किया तो भी इन्होंने अच्छी प्रकारसे इनका विरोध किया, परन्तु रघुनाथरावने लवपुरको स्वाधिकारमें कर लिया। अहमदशाह अबदाली पञ्जाबको स्वाधिकारमें समझता था। इस समाचारको श्रवण करते ही वह काबुलसे चल पड़ा और प्रसिद्ध पानीपतकी लड़ाईमें मरहटी सेनाओंको पराजित किया। इस युद्धने भारतवर्षके इतिहासके कई अंशोंमें परिवर्त्तन कर दिया।

इसी समय ही अङ्गरेजोंने बङ्ग (बङ्गाल) प्रान्तपर अधिकार कर लिया और मरहटोंने देहलीपर अधिकार करके तैयारी प्रारम्भ की कि बङ्गालपर आक्रमण करें; परन्तु अबदालीने आक्रमण करके बङ्ग और भारतवर्षके इतिहासको और भी पलटा दिया।



अंगरेजोंका अभ्युदय।

यूरूपीय जातियोंमेंसे फ्रांसीसी और अङ्गरेजोंने स्वकार्य्यालय (कारखाने) भारतके समुद्री तटपर स्थापन किये। जैसी राजनैतिक अवस्था देशकी उस समय थी, उसे देखकर इन यूरूपीय जातियोंके लिये जो कि शताब्दियोंसे थोड़ी थोड़ी पृथ्वीके लिये पारस्परिक युद्धमें लगी रही थी, असम्भव था कि वह इस देशमें देशी विजयका विचार न करें। साधारण जनोंके अन्दर कोई राजनैतिक अधिकारोंका विचार न था। जो कोई बलसे या धोखेसे, किसी प्रकार गद्दीपर बैठ जाता था, उसे राजा या महाराजा मान लेते थे। उसका प्रभाव राज्य या गवर्नमेण्टपर बड़ा विषयुक्त पड़ा। जिस तरह धार्म्मिक संसारमें ब्राह्मणोंने साधारणजनोंको विद्यासे रहित रक्खा और इसका परिणाम यह हुआ कि विद्याको पहचाननेवाले न रहनेसे ब्राह्मणोंकी सन्तानोंने स्वयं विद्यासे मुख फेर लिया। क्योंकि विद्यारहित और विद्वान् ब्राह्मणोंका एकसा आदर होने लगा। इस कारण ब्राह्मणोंने विद्या दानका कष्ट अपने ऊपर लेना उचित न समझा।

नैतिक संसारमें जब जनता कि सम्मति सर्वथा न रही तो उसका परिणाम यह हुआ, कि गवर्नमेण्ट वा राज्य-प्रबन्ध मनमाने पुरुषोंके हाथका खिलौना बन गया। जैसे ऐन्द्रजालिक (मदारी) के हाथोंमें जादू होता है, वह मनुष्योंको नजरबन्द कर लेता है या उनकी बुद्धिको घबड़ा डालता है और जिस तरह चाहता है क्रिया (हथकण्डे) करता जाता है।

राजा बननेके लिये कुल क्रमागत राज्यका अधिकार (बरास्त का हक) भी दूर हो गया। आरम्भमें छोटे भ्राता या मन्त्री राज्य

लेनेका प्रयत्न करने लगे। इसके पश्चात् जो मनुष्य राज्यको स्वाधिकारमें समझता था; उसपर हस्तक्षेप करनेका प्रयत्न करता था। ये मनुष्य सदा राजाके विरुद्ध निज निज यूथ बन्दी करने लगे। इनके मनमें द्वेषकी अग्नि प्रज्वलित होती थी, ऐसी अवस्थामें किसको ज्ञात नहीं था, कि राज्य प्राप्त करनेका एक ही, और अति सुलभ उपाय यह है कि किसी एक दलके साथ मिलकर उसे राज्य-बल दिला दिया जाय और शनैः शनैः वह शक्ति अपने हस्तगत कर ली जाय।

यूरूपीय जातियोंको सबसे बड़ा लोभ यह था कि उनकी इच्छायें जातीय थीं। भारतवर्षके पुरुषोंकी स्वेच्छा और इन दोनोंमें भविष्यके लिये बड़ा अन्तर हो जाता था। एक आर्य्य या यवन केवल अपने ही लाभको देखता था। वह निज लाभके लिये राजाके साथ विरोध और षड्यन्त्र करनेपर तैयार हो जाता था और अपने आरामके लिये सब अधिकार जिस किसीके मनमें आया देनेको उद्यत था। परन्तु यूरूपीय जातियोंमें निजी लाभ अभीष्ट न था। एक पुरुष एक पथपर चलता था, वह यदि सफल न भी हुआ तो दूसरा उसके स्थान और उसी नीतिपर चलकर आगे बढ़ता था। इसके पश्चात् तीसरा और चौथा इसी तरह उनकी व्यवस्थामें एक नीति वहां सर्वथा आरम्भ रहती थी। दूसरे शब्दोंमें एक फ्रांसीसी या अङ्गरेज बल प्राप्त करके बहुत जीवनका स्वामी था। अतः उसका बल सर्वथा बढ़ता रहता था। स्वदेशी राजाओं या नवाबोंकी व्यवस्थामें उसका जीवन कुछ वर्षोंतक होता था। यह सम्मति सर्वथा निर्बल है कि अङ्गरेज कम्पनी केवल व्यापारही करना चाहती थी और दैवयोगसे देशका राज्य उनके हस्तगत हुआ। अङ्गरेज व्यापारियोंने आते ही देशको दुर्व्यवस्थाको ज्ञात कर लिया। उन्होंने देखा, कि भारत

वर्षका राजा इन्द्रप्रस्थमें (देहली) रहता था और बङ्ग, मद्रास इत्यादि समुद्री तटके सूबोंपर उसका कुछ अधिकार न था। उनकी व्यवस्था इतनी दुर्बल अवस्थामें हो गई थी कि किञ्चित् सेना लेकर भी उनपर अधिकार कर लिया जाता था और सम्बत् १६८६ या १६३२ में जब कि औरङ्गजेब दक्षिणकी लड़ाइयोंमें व्यग्र था, अङ्गरेज कम्पनीने कई जहाज सेनाके इङ्गलैण्डसे रवाना किये ताकि चट-गाँवके साथ सब प्रान्त या देश अधिकारमें कर लें। उनका बल पर्याप्त न था और औरङ्गजेब भी बड़ा बुद्धिमान् था। उसने उनको पराजित करनेका प्रयत्न कर लिया और सब अङ्गरेजोंको देशसे निकल जानेकी आज्ञा दी। इधर सूरतके अङ्गरेज औरङ्गजेबके निकट गये और बड़ी नम्रतासे क्षमा मांगी। इसके पश्चात् अर्द्ध शताब्दी और व्यतीत हो गई। अङ्गरेज व्यापारी और अवसरको प्रतीक्षा कर रहे थे और इधर मुगल बादशाहीके टुकड़े टुकड़े हो गए। अङ्गरेज शनैः शनैः अपने कारखानोंको दुर्ग बनाते गये और सेना आदि रखकरके सैनिक शक्ति स्थापन करनी प्रारम्भ कर दी। फर्रुख सियर जैसे बादशाह गद्दीपर बैठे, जिन्होंने एक रोग हटानेके बदले एक बड़ा प्रान्त कम्पनीको दिया। दूसरा अवसर मद्राससे प्रारम्भ हुआ। जहां अङ्गरेजों और फ्रांसीसियोंकी बस्तियाँ एक दूसरेके निकट थीं। सम्वत् १७४४ में शुरूपमें अङ्गरेजों और फ्रांसीसियोंमें युद्धारम्भ हुआ। मद्रासके अङ्गरेजोंने फ्रांसकी बस्ती पाण्डीचेरीपर आक्रमण करनेका निश्चय किया। पाण्डीचेरीके गवर्नरने कर-नाटकके नवाबको लिखा, कि अङ्गरेजोंको ऐसा करनेसे रोक दे। नवाब करनाटकने आज्ञा लिख भेजी और अङ्गरेज रुक गये। परन्तु कुछ कालके पश्चात् पाण्डीचेरीके गवर्नर डूपलेने फ्रांससे सेना मगा कर मद्रास ले लिया। अब अङ्गरेजोंने नवाबको लिखा। फ्रांसीसी सरदारने नवाबकी कुछ न सुनी तो

नवाबने दश सहस्त्र सेना देकर अपने पुत्रको भेजा। फ्रांसीसी सेना बहुत थोड़ी थी, परन्तु उनके पास तोपें बहुत बड़ी थीं। एक तोप चली तो नवाबकी सेना अपनी तोपोंकी गिनतीसे समझने लगी कि दूसरी बार की गोलाबारीमें आधा घण्टा व्यतीत होगा; परन्तु जब उन्होंने पांच पांच मिनटके पश्चात् तोपोंसे गोले पड़ते देखे तो वह सब भाग पड़े। इस पहली लड़ाईमें युरूपीय शस्त्रोंकी धाक बन्ध गई और देशीय नवाब और राजे उनसे भयभीत हो सहायताके लिये प्रार्थना करने लगे। फ्रांसीसी और अङ्गरेजोंका विरोध होता रहा और चार वर्षके पश्चात युरूपमें सन्धि हो जानेके कारण यहां भी युद्ध बन्द हो गया। पाण्डीचेरीका गवर्नर डोपले एक बड़ा राजनीतिज्ञ था। उसके मनमें यह इच्छा थी कि इस देशमें फ्रांसकी राजनैतिक शक्ति हो और अङ्गरेज यहांसे निकाल दिये जावें। उसे अपनी इच्छा पूर्ण करनेके लिये यह उपाय सूझा, कि नवाबोंके निजके झगड़ोंकी अग्निको भड़काकर अपना प्रयोजन सिद्ध करे। यह अवसर उसको हैदराबादके वृद्ध निज़ामकी मृत्युपर मिल गया। निज़ामउल मुल्ककी मृत्युके पश्चात् उसका बड़ा पुत्र नासिरजङ्ग गद्दीपर बैठा, परन्तु साथ ही उसके भतीजे मुनफ़रजंगने भी गद्दी लेनेके लिये यत्न करना आरम्भ किया और वह डोपलेके पास सहायताके लिये पहुँचा। ऐसे ही एक सरदार चन्दा साहब करनाटककी नवाबीके लिये डोपलेकी सहायताका इच्छुक हुआ। डोपले दोनोंकी सहायता पर तत्काल उद्यत हो गया और फ्राँसीसी सेना उनके साथ भेज दी। परिणाम यह हुआ, कि निज़ामकी पराजय हुई। मुज़फ़रजंग नया निज़ाम बना और उसने बहुतसा प्रान्त फ्रांसीसियोंको दिया। डोपले करनाटकका गवर्नर बनाया गया और चन्दा साहब उसके अधीन नवाब बना। नासरजंग और नवाब

करनाटक अनवरुद्दीन मारे गये और अनवरुद्दीनका पुत्र मुहम्मद अली त्रिचनापलीको भाग गया। चन्दा साहबने उसको वहां जा घेरा। तब उसने अङ्गरेजोंसे सहायता की प्रार्थना की। मद्रासमें उस समय एक नवयुवक अङ्गरेज विद्यमान था, जो कि बाल्यावस्थामें स्वतन्त्र सा था और कम्पनीके पास क्लार्क भर्ती होकर भारतमें आया था। फ्रांसीसियोंके साथ युद्धके समय वह सेनामें भरती हो गया और उसमें उसने विशेष योग्यता दिखाई। उसका नाम क्लाइव था। अब उसको यह सूझी कि चन्दा साहब त्रिचनापलीको सेना ले कर गया है। करनाटककी राजधानी अरकाट बिलकुल खाली है। यही अच्छा है कि अरकाटपर आक्रमण किया जावे और थोड़ीसी गोरा और देशीय सेना लेकर वहां जा पहुँचा। चन्दा साहबको वहां सेना भेजनी पड़ी। दो मास घेरा रहा, परन्तु क्लाइवकी बीरताके कारण उसे विजय हुई और मद्राससे सेना मंगाकर उसने त्रिचनापलीपर आक्रमण किया। चन्दा साहब भाग गया और मुहम्मद अली करनाटकका नवाब बनाया गया। उस समयसे अङ्गरेजोंकी उन्नति आरम्भ हुई।

इसके कुछ ही वर्ष पश्चात् बंगालमें कुछ परिवर्त्तन हुए। बंगालका नवाब अलीवर्दी खां सम्भवतः १८१३ में मर गया। उसका पुत्र कोई न था। उसका दोहता सिराजुद्दौला १६ वर्षका युवक था। अलीवर्दीने उसे बड़े प्रेमसे पाला था। उस बालकको न कुछ राज्य विषयक अनुभव था, न उसने कभी कष्टका सामना किया था। वह इतना सुन्दर था कि अलीवर्दी उसके सौन्दर्यपर श्लोक (शैर) लिखा करता था। अलीवर्दीको अंगरेजोंकी अवस्था भली भाँति मालूम थी। उसने मरते समय सिराजुद्दौलाको उनसे सचेत रहनेका उपदेश दे दिया

था। अलीवरदीकी मृत्युके पश्चात् अँग्रेज़ोंने कलकत्ताके दुर्गकी दीवारोंको सुदृढ़ करना आरम्भ किया, ताकि वह फ्रांसीसी इत्यादि शत्रुओंसे अधिक सुरक्षित रहे। इसीसे सिराजुद्दौलाको शङ्का हो गयी, और उसने दूत भेजा कि अँग्रेज़ोंको दुर्ग इत्यादि न बनाना चाहिये। दूतोंकी कुछ परवाह न की गई। सिराजु-द्दौला सेना लेकर कलकत्तापर चढ़ आया। सब अँग्रेज़ जो वहाँ थे भाग गये और सिराजुद्दौलाने कलकत्तेपर अधिकार कर लिया। उनमेंसे एक व्यक्ति हालवल नामीने भागनेका प्रयत्न किया, परन्तु उसे कोई नाव न मिल सकी और वह कुछ और मनुष्योंके साथ पकड़ा गया, परन्तु थोड़े दिनके पश्चात् छोड़ दिया गया। एक वर्षके पश्चात् वह विलायत गया। उसने अपना बड़प्पन जनताकी दृष्टिमें जमानेके लिये मनही मन एक कथा जहाज़में गढ़ ली* कि सिराजुद्दौलाने १४६ अँगरेज़ोंको एक तङ्ग कोठड़ीमें बन्द कर दिया, और रात्रिको पिपासासे वह सब मर गये। एक हाल-वल बच गया। उस कोठड़ीको ब्लेक होल (Black hole अर्थात् काली कोठड़ी) कलकत्ताके नामसे प्रसिद्ध किया गया। इसका किसी भी रिकार्ड (Record) अर्थात् राज्य पत्रोंमें वृत्तान्त नहीं है। इसके पश्चात् बंगाल बोर्डका एक Resolution प्रस्ताव मिलता है, जिसमें वृत्तान्त है, कि हालवलको मिथ्या भाषण व कल्पनाका स्वभाव था। कलकत्तासे जानेकी सूचना मद्रास पहुँची। वहाँसे क्लाईव सेना लेकर बंगालको चल पड़ा, और कलकत्ता आ पहुंचा। आते हुए उसने नवयुवक नवाबसे सन्धि की और उस सन्धिमें मनुष्यके मारे जानेका कोई वर्णन

---

* अंग्रेज लेखकोंने व्यर्थ ही सिराजुद्दौलाको राक्षसी स्वरूप देनेका दुस्साहस किया है। इस बातको आधुनिक बड़े इतिहास वेत्ताओंने मिथ्या सिद्ध कर दिया। वस्तुतः अंग्रेज किसी तंग कोठरीमें नहीं मरे।

न था। ऊपरसे सन्धि हो गई, परन्तु क्लाईवके मनमें और बात थी। नवाब लौट गया। मुर्शिदाबादमें एक अँग्रेज़ कारखानेमें नौकर था, जिसका नाम वारेन हेस्टिङ्ग था। वह मुर्शिदाबादके सब हालसे परिचित था। उसने पता दिया, कि नवयुवक नवाबके विरुद्ध एक दल है, उसका चाचा मीरजाफर था, जो कि गद्दीकी इच्छा रखता था। एक पुरुष अमीचन्दके द्वारा मीरजाफर और उसके सहायकोंके साथ एक अभियोग तय्यार किया गया। जिसका यह प्रयोजन था, कि सिराजुद्दौला-को उतारकर मीरजाफरको गद्दीपर बिठाया जाय। अमी-चन्दको बहुत धन देनेकी प्रतिज्ञा एक झूठे कागजपर लिखकर दिखाई गई। जैसा अमीचन्दको धोखा दिया गया वैसा ही मीरजाफरको उल्लू बनाया गया। क्लाइव सेना लेकर मुर्शि-दाबादको चल पड़ा। सिराजुद्दौला घबराया और डच लोगों और फ्रांसीसियोंसे सहायता मांगने लगा। प्लासीके युद्ध क्षेत्रमें दोनों सेनाएँ एकत्र हुईं। नवाबके मंत्री और सेनापति क्लाईवसे मिले थे। युद्धके समय नवाबने अपनी पगड़ी मीरजाफरके पैरोंपर रक्खी और कहा कि मेरी और ईमानकी लाज तुम्हारे हाथमें है। इधर मीरजाफरने छातीपर हाथ रखकर उससे प्रतिज्ञा की और उधर क्लाईवको आक्रमण करनेकी सूचना दी। उसने सिराजुद्दौलाको समझाया कि वह युद्ध-क्षेत्रसे चला जावे और ऐसा न हो कि कहीं पकड़ा जावे। वह बिचारा ऊँटपर सवार होकर युद्ध-क्षेत्रसे चल दिया और यद्यपि उसकी सेनाके एक राजभक्त भागने विरोध किया परन्तु युद्ध कौन करता? जून १७५७ ई० अर्थात् सम्वत् १८१४ में प्लासीके युद्धमें क्लाईवने विजय पाई और मीर-जाफर नवाब बनाया गया। सिराजुद्दौला पकड़ा गया। उसे मीरजाफरके पुत्रने मरवा डाला। क्लाईव आदिको करोड़ों रुपये

सहायताके बदले दिये गये, वो धन लेकर घर चले गये। दूसरे पुरुष कौंसलके सभासद आ बने। उनमें वो हलवल भी था जो इसी प्रकार बड़ी धन सम्पत्ति लेना चाहता था। मीरजाफर दे न सकता था। उन्होंने यह विचारा कि उसके स्थानमें किसी औरको नवाब बनाकर अपनी जेब भरनी चाहिये। इस प्रयोजनके लिये मीरजाफरका दामाद मीर कासिम उन्हें मिल गया और रुपये देकरके मीरजाफरके स्थानमें नवाब बननेपर प्रसन्न हो गया। इस प्रकार नवाबी इनके हाथसे निकलकर देनेवालोंके हाथमें चली गई।

इधर जब बङ्गालमें यह हाल हो रहा था तब मद्रास प्रान्तमें दूसरी बार अँगरेज़ों और फ्रांसीसियोंमें परस्पर युद्ध आरम्भ हो गया। कारण यह था कि युरूपमें इन जातियोंमें या परस्पर सप्त वर्षीय युद्ध आरंभ हो गया था। फ्रांसने फिर एक बार सेना भेजकर अंग्रेजोंको भारतसे निकालनेका यत्न किया। परन्तु इस युद्धमें कर्नल फोर्डने बड़ी वीरता दिखाकर उत्तरीय सरकारकी भूमिपर अधिकार जमा लिया और फ्रांसीसियोंका बल दक्षिणमें सर्वथा नष्ट हो गया।

इधर देहलीकी गद्दीपर शाह आलम द्वितीय बैठा था। उसने यह विचारा कि बङ्गालकी नवाबीमें परिवर्त्तन उसकी आज्ञाके विना कैसे किया गया। वह अवधके नवाब शुजाउद्दौलाकी सेनाकी सहायता लेकर बङ्गालकी ओर बढ़ा। शुजाउद्दौला तो घबराकर वापस चला गया और शाही सेना कुछ अनुरोध न कर सकी। मीरजाफरने चिनसराके डच जनोंसे अपनी सहायताके लिये सेना मंगवाई जो अंग्रेजोंका कुछ बिगाड़ न सकी। उसके पश्चात् मीरजाफरको उतारकर मीरकासिमको गद्दीपर बिठा दिया गया। मीरकासिम कुछ समय तक गुप्त रूपसे अपना बल बढ़ाता रहा।

उसकी इच्छा थी कि मैं वास्तवमें नवाब बनूं। उसने अपनी सेनाको अंग्रेजी सेनाकी भांति शस्त्र-विद्याकी शिक्षा देकर दृढ़ बनाना चाहा और अपनी राजधानी मुर्शिदाबादसे दूर मुंगेर ले जाकर अंग्रेजोंसे युद्धका बहाना ढूंढ़ने लगा। इस समय कम्पनीके नौकर सब व्यापारको अपने हाथोंमें लेकर लोगोंका धन लूटना चाहते थे। जबर्दस्ती सब पदार्थ सस्ते लेते थे और उसे अत्यन्त महंगे मोलपर बेचते थे। क्योंकि उनके मालपर कुछ महसूल न लगता था। मीरकासिमने सब व्यापारियोंके मालपर कर क्षमा कर दिया। अब कम्पनीके नौकर द्वेष करने लगे। मीर-कासिमने शाह आलम और शुजाउद्दौलासे सहायता मांगी। कलकत्ताकी अंग्रेजी कौंसलने मीरजाफरको कैदसे निकालकर फिर नवाब बना दिया और मीरकासिमसे युद्ध आरंभ कर दिया। यह सब युद्ध सुगम हो गये; क्योंकि बङ्गालमें धन बहुत था जिससे सेना तय्यार की जा सकती थी और मीरजाफर जैसे आदमी हर समय अगुआ बननेको तय्यार थे। अंग्रेजी सेना मुंगेरकी ओर बढ़ी और मीरकासिम पटनेकी ओर भाग गया। कुछ कालके अनन्तर १७६४ ई० में अर्थात् १८२१ सम्वत्में बक्सरमें युद्ध हुआ। इसमें अंग्रेजी सेनाको विजय प्राप्त हुई। शुजा-उद्दौला लौट गया। मीरकासिम कहीं भाग गया और शाह आलम-ने निजको अङ्गरेजोंकी दयालुता पर छोड़ दिया। इङ्गलैण्डसे क्लाईव भारतवर्षको चल पड़ा। उसके आनेपर युद्ध समाप्त हो चुका था। क्लाइव सीधा प्रयाग आ पहुँचा। यहां सबके बीच सन्धि हुई जिसमें बङ्गाल, बिहार, उड़ीसाकी दीवानी बादशाहकी ओरसे अङ्गरेजोंको दी गई। यद्यपि उड़ीसा उस समय मरहटोंके अधिकारमें था। गङ्गा और यमुनाके मध्यकी भूमि शाह आल-मको दी गई और शुजाउद्दौलाको युद्धका व्यय देना पड़ा। शाह

आलम पेन्शनके समान वहां रहने लगा। इसके कुछ काल अनन्तर मीरजाफर मृत्युका ग्रास हुआ और अङ्गरेज स्वतन्त्र रूपसे बङ्गालके स्वामी बन गये। क्लाईवने कम्पनीके प्रबन्धके सुधारके लिये बड़ा यत्न किया और फिर इङ्गलैण्ड वापस चला गया।

सम्वत् १८१७ से १८२८ तक बंगालमें घोर अकाल पड़ा। बहुतसी जनता मृत्युको प्राप्त हुई। कम्पनीको अपने प्रबन्धके सुधारकी बड़ी आवश्यकता हुई और उन्होंने वारेनहेस्टिंगको बङ्गालका पहिला गवर्नर बनाकर भेजा। वारेनहेस्टिंगने आते ही नवाबीके पुराने राज्यको समाप्त करके भिन्न भिन्न ज़िले स्थापन कर, अङ्गरेज कलक्टर रक्खे और साथ ही न्यायालय स्थापन करके पण्डित और मुल्ला नियम समझानेके लिये नौकर रक्खे। वारेनहेस्टिंगस बंगालका प्रबन्ध सुधार करके कम्पनीकी आयको बढ़ा रहा था, कि उसके सम्मुख एक वृत्तांत आया। वह यह था कि शाह आलम मरहटोंके बुलाने पर प्रयाग छोड़ कर देहली चला गया।

हम देख चुके हैं कि जब अहमदशाह अबदाली सरहद्से भूमि विजय करता आता था तो तीसरे पेशवा बालाजी बाजीरावने अपने भाई रघुनाथराव (रघुबा) को सेना देकर पँजाब भेजा। रघुबाने लाहौरपर आकर अधिकार जमा लिया। अहमदशाह समाचार पाते ही बड़ी सेना लेकर चढ़ आया और पानीपतपर बड़ा भारी युद्ध हुआ जिसमें राजपूत और जाट मरहटोंके पक्षमें थे और मुसलमान अबदालीको सहायता करते थे। पेशवाने सब आर्य राजाओंको पत्र लिखे थे कि एक मिलकर प्रयत्न करके अपने देशको पठानी आक्रमणोंसे स्वतन्त्र कर लें। मरहटी सेना पराजित हुई। उनके दो लाख सैनिक मारे गये। पेशवाको समाचार प्राप्त हुआ। दो रत्न टूट गये। दूसरे जवाहि-

रातोंकी हानिकी कोई सोमा नहीं रही। पेशवा इसको सुनते ही मृत्युको प्राप्त हुआ। परन्तु उसका पुत्र माधवराव बड़ा नीतिज्ञ और राज्याधिकारी था। दश वर्षके अन्दर उसने मरहटा शक्तिको फिर वैसा ही उन्नत किया और मरहटा सेनाओंने देहलीपर अधिकार कर लिया। अब उनको भय हुआ कि उन्होंने बड़ी कठिनतासे एक आपत्तिसे देशको बचाया है। अब दूसरी आ पड़ो है। इसलिये निर्जीव रुहेलेके साथ अभियोग करके उन्होंने शाह आलमको देहली बुलाकर अपने अधिकारमें लेना चाहा।



मरहटों और अङ्गरेजोंका पारस्परिक प्रतिरोध।

जब अङ्गरेज कम्पनीको बंगालमें राजनैतिक सत्ता प्राप्त हुई। उस समय मुगल राज्यका अन्त हो चुका था। मरहटोंने दूसरी बार देहलीको अपने अधिकारमें कर लिया और मरहट्टा सेनाएँ दूसरी बार उत्तरीय भारतमें फैल गईं। पानीपतके युद्ध क्षेत्रसे इतना बड़ा कष्ट और हानि सहन करके फिर मरहटा शक्तिका पुनर्जीवित हो जाना प्रकट करता है कि मरहटा शक्ति निसन्देह एक जातीय जीवनका परिणाम थी। यदि उसका बनना व्यक्तिगत होता तो पानीपत युद्धके पश्चात् कभी न उठती। तिसपर भी इस दूसरी बार जीवनका प्रकट होना नवयुवक माधवराव चौथे पेशवाकी योग्यता और प्रयत्नका परिणाम भी कहा जा सकता है। माधवराव मरहटा इतिहासमें एक बड़ा ही सौन्दर्य्य पूर्ण और दिलको लोभायमान करनेवाला पुरुष है। उसके सब गुण ब्राह्मणोंके से थे। वह ब्राह्मणोंकी भांति कर्म और विचार किया करता था। वह १८ या १९ वर्षकी आयुमें गद्दीपर बैठा। उसको योगाभ्यासकी बड़ी लगन थी और प्रातःकाल बड़ी देरतक समाधि लगाये बैठा रहता था। राम शास्त्री बड़ा प्रसिद्ध मरहटा मन्त्री था। एक दिन राम शास्त्रीको प्रातःकाल पेशवा विद्वान्से मिलनेके लिये बहुत समय तक प्रतीक्षा करनी पड़ी; जब माधवराव समाधिसे उठा तो राम शास्त्रीने कहा कि यदि तुमको योग साधन करना है तो अच्छा होगा कि राज्य कार्य छोड़ दो और ब्राह्मणोंके कर्म्ममें लग जाओ। राज्य करना तो क्षत्रियका धर्म्म है। इसके लिये क्षत्रिय बनना पड़ेगा। माधवरावने क्षमा मांगी और आगे अपने कर्त्तव्यको

पूर्ण करनेकी प्रतिज्ञा की और इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह अपनी प्रतिज्ञामें पूरा निकला। परन्तु उसकी आयु बहुत थोड़ी थी। अभी उसे दश वर्ष गद्दीपर बैठे हुए थे कि उसको क्षयी रोग (तपेदिक) हो गया। उसका एक छोटा भाई नारायणराव था और एक चाचा रघबा था। उसने नारायणरावके हाथ मरते समय रघुबाको समर्पण किया। उससे प्रार्थना किया कि वह राज चलानेमें उसकी सहायता करे। मरहटा इतिहासका एक अङ्गरेज ऐतिहासिक बड़ी करुणाजनक भाषामें लिखता है कि इस नवयुवक पेशवाकी मृत्युने मरहटा राज्यकी उस नींवपर कुल्हाड़े रख दिये जिसे कि अबदालीकी सेना उखेड़ न सकी थी।

यह भयङ्कर मृत्यु उस समय हुई, जब मरहटा सेनापति सिंधियाने जो कि देहलीका अधिकारी था, शाह आलमको देहली बुलाया ताकि उसे देहलीके सिंहासनपर बिठाये। शाह आलमको देहलीके सिंहासनपर बिठाना केवल विडम्बना (बहाना) थी। सच्ची बात तो यह थी कि मरहटोंको उस समय निश्चय हो गया कि भारतवर्षके राज्यके लिये अब इस नवीन उन्नति करनेवाली शक्ति अर्थात् अङ्गरेजोंका अनुरोध करना पड़ेगा और इस अनुरोधके लिये आवश्यक था कि शाह आलमको उनके हाथसे निकाला जाय। १७६० ई० अर्थात् १८१७ सम्बत् में भी जब अङ्गरेजोंने बंगालमें अधिकार जमाया था तब मरहटोंकी इच्छा बङ्गालपर आक्रमण करनेकी थी। वे इस तय्यारीमें तत्पर थे कि अहमद शाह अबदालीके आक्रमणने उनकी नीति भंग कर दी और अङ्गरेजी बलको अपनी दृढ़ता सम्पादन करनेका एक अवसर मिल गया।

वारेनहेस्टिंगस भी यह चाल भली प्रकार समझता था। उसे भारतवर्षके विषयोंका पर्याप्त अनुभव था और इसमें कुछ

सन्देह नहीं, कि उसकी असाधारण बुद्धि और योग्यताने अंगरेजी बलको न केवल बचा लिया किन्तु उसकी नींव दृढ़ कर दी। ताकि भविष्यत्‌में भी भली भांति राज्य विस्तृत हो सके। वारेन-हेस्टिंगस बहुत कालतक भारतवर्षमें रह चुका था। वह जानता था, कि यहांके वासियोंके लिये चाहे वो राजकर्मचारी हों चाहे प्रजा, व्यक्तिगत स्वार्थके सामने जातीय लाभ कुछ सत्ता न रखते थे। वह सर्वदा स्वार्थपरायण हुए और अपना अपना प्रयोजन सिद्ध करनेके लिये जाति और देशके लाभको त्यागनेके लिये उद्यत थे। इस एक नीतिपर आचरण करनेसे इसने मरहट्टोंके सारे प्रयत्नोंको निष्फल सिद्ध कर दिया।

जब मरहट्टा जातिको औरंगज़ेबके प्रतिरोधमें कई वर्षोंतक मुठभेड़ तथा अपने व्यक्तित्वकी रक्षाके लिये संघर्ष करना पड़ा था, तो उस समय इनका कोई शक्तिशाली नेता न था। इसलिये भिन्न भिन्न सरदारोंका उत्साह तथा दिलेरीके बढ़ानेके लिये उन्होंने यह निश्चय किया, कि जो सरदार नए और नव विजित स्थान व प्रान्तमें हों, उनपर स्वमेव अपना राज्य करें और वहाँ वह पूर्णाधिकारी होवें और अपना सम्बन्ध कैन्द्रिक राज्यसे जोड़ा हुआ रक्खें। इस प्रकार बढ़ते हुए मरहट्टोंके चार बड़े राज्य स्थापित हो चुके थे। गुजरातमें गायकवाड़का, मालवामें सिन्धियोंका और मध्यम भारतमें होल्करका, और नागपुरमें भोंसला का। कैन्द्रिक राजसत्ता पेशवाके हाथमें थी। इसको मरहट्टा संघ अर्थात् (Mahratta Confideracy) कहा गया है। यह चारों ही मरहट्टा सरदार ब्राह्मणोंकी अपेक्षा नीच जातिके थे। सर्वसाधारणमें बहुधा यह कहा जाता है, कि जातपांतके कारण उनमें पारस्परिक ईर्ष्या द्वेष विद्यमान था, और उसी स्पर्धाने मरहट्टा साम्राज्यको निर्बल करके नष्ट भ्रष्ट

कर दिया। यह सर्वथा निराधार है। मरहट्टा सरदार यद्यपि छोटेसे उत्पन्न हों, तथापि उन्होंने रणक्षेत्रमें अपने शौर्य्य और पराक्रमसे शत्रुओंका राज्य जीता था, तो उनका अधिकार और पदवी क्षत्रियोंकी सी हो गई, और ब्राह्मण पेशवा सदा उनका पद क्षत्रियके समान स्वीकार करनेपर उद्यत थे।

मरहट्टा साम्राज्यके अन्दर दौर्बल्यके कारण राजनैतिक (Political) थे। वह यह थे, कि एक राष्ट्रसङ्घ (Confide-racy) की राज्य-शासन प्रणाली जिसमें सब अङ्गों तथा व्यक्तियोंके समानाधिकार हों, कभी संसारमें सफल नहीं हो सकती। अमेरिकाकी रियासतोंने थोड़े ही वर्षोंमें इस त्रुटिका अनुभव किया। ऐसी शासन-प्रणालीमें एक शक्तिशाली सत्ताके प्रभाव विशेषके अभावमें भिन्न भिन्न भाग वा व्यक्तियां अपना अपना स्वार्थ देखते हैं, और किसी आपत्तिके अवसरपर पृथक् हो जानेके लिये उद्यत हो जाते हैं। Confideracy (राष्ट्रसंघ) कान-फिड्रेसीके स्थानपर (Federal) फीडरल प्रकारकी शासन शैली स्थायी और चिरगामी प्रभावोंको रखती है अर्थात् भिन्न भिन्न राज्योंका ऐसा संगठन जिसमें कोई एक सत्ता सबपर प्रभाव डालने और राज्य करनेका साहस और बल रखती हो। कोई सम्बन्ध ऐसा दृढ़ नहीं हो सकता जो कि पृथक् पृथक् रिया-सतोंको एक स्थानपर संयुक्त रख सके। यदि उनको किसी बलवान् शक्तिका भय न हो। मरहट्टा संघमें यही दोष था, और यही उसकी निर्बलता थी, जिसके कारण मरहट्टोंका अधःपतन हुआ। यह दोष तो पीछेसे प्रकट हुआ पर मरहट्टा साम्राज्यके नाशका एक विकट कारण एक स्त्री आनन्दी बाई थी जो कि रघुबाकी स्त्री थी।

आनन्दी बाई सदैव अपने पतिके भाई बालाजी बाजीराव

पेशवासे जलती और उसकी स्त्रीसे लड़ती रहती थी। माधवरावकी मृत्युके अनन्तर उसका छोटा भाई नारायणराव गद्दीपर बैठा। रघुबा भी तीसरे पेशवाका भाई था। आनन्दी बाई कहती थी, कि जब नारायणराव पेशवा बन सकता था, तो उसका पति क्यों राजगद्दीसे वञ्चित रक्खा गया। जब उसका सारा प्रयत्न अपने पतिके लिये गद्दी प्राप्त करनेमें निष्फल हुआ तो उसने नारायणरावके विरुद्ध गुप्त षड्यन्त्र करना आरम्भ कर दिया। कुछ सिपाहियोंको इस बातपर सन्नद्ध किया कि वह नारायण रावका वध कर दें। जब खञ्जर (खड्ग) लेकर सिपाही नारायण रावका वध करनेके लिये आए तो वह डरकर भागा। उसकी आयुका अभी बाल्य-काल था। अतः अज्ञानवश दौड़कर अपने प्राण त्राणार्थ रघुबासे लिपट गया, कि मेरी प्राण रक्षा करो। रघुबा उससे पल्ला छुड़ाकर उसपर चढ़ गया, और बड़ी क्रूरता और निर्दयताके साथ उसका प्राणान्त कर दिया गया। पूना नगरमें यह समाचार विद्युत्के समान फैल गया और एक प्रकारसे ऐसे अनहोने दृश्यके देखने और सुननेवाले सबके हृदय काँप गये। इतना अत्याचारी होनेपर भी रघुबा पेशवा गद्दीपर बैठ गया और एक बार आनन्दी बाईकी छाती ठण्डी हुई। परन्तु लोग एक ब्रह्महत्याके दोषोको अपना पेशवा बना हुआ देखकर कैसे सहन कर सकते थे। सार्वजनिक सम्मति रामशास्त्रीने प्रकट रूपसे रघुबाको विदित कर दी और कह दिया कि जनताकी सम्मतिमें तुम्हारे पापका प्रायश्चित यह है कि चिता बनाकर जीवित ही अपने आपको उसमें जला दो। जब रघुबाने उसे अस्वीकृत किया तो राम-शास्त्रीने कहा, कि मैं तुम्हारे सदृश पापीके राज्यमें न रहूंगा। वह उसी समय काशीको चला गया। थोड़े कालके अनन्तर नारायण

रावकी स्त्रीने एक बच्चेको जन्म दिया। सब लोगोंने उसे पेशवाकी गद्दीपर बैठाना चाहा, और सार्वजनिक सम्मतिको क्रिया रूपमें सम्मान देनेवाला एक पुरुष नाना फरनवीस नामी उस समय जीवित था। यह एक साधारण अवस्थासे बड़ी उच्च कक्षा और अधिकारको प्राप्त कर चुका था और उस समय समस्त पूना नगरमें सबसे अधिक योग्य और परम नीतिज्ञ और बुद्धिशाली पुरुष था। वह उस बच्चे पेशवाका संरक्षक नियुक्त हुआ। रघुवा घबरा गया और उसने पूनासे भागकर बम्बईमें अँगरेज़ोंकी शरण पकड़ी। बम्बईमें चिरकालसे अँग्रेज कम्पनीका व्यापार होता था। बम्बईका द्वीप (टापू) इङ्गलैण्डको पुर्तगालके द्वारा चार्लस बादशाहके दहेज़ (Dowry) में मिला था। बम्बईके अँग्रेज़ोंने मद्रास और बंगालमें राजनैतिक शक्तिको बढ़ते देखा। उनके मनमें सदासे विचारतरंगें हिलोरें मार रही थीं, कि उन्हें भी कोई ऐसा अवसर उपस्थित हो, जब कि वह अपनी सत्ताकी स्थापना कर सके। उनकी ओरसे मास्टिन नामी एक अँग्रेज़ पूना दरबारमें एक राजदूतके रूपमें रहता था। उसका काम यह था, कि वह दरबारके सारे कार्य्य, ब्योरे तथा अवस्थासे उनको अपने उच्चाधिकारियोंको समय समयपर सूचित किया करे। जब पूना दरबारमें पारस्परिक कलह आरम्भ हुआ और उसे अपनी प्रयोजन सिद्धिके लिये एक सुअवसर मिला तब उसने रघुवाको समझा बुझाकर बम्बई भेजा। बम्बईके अँग्रेज़ सालसेट और बसीनके इलाके लेनेकी प्रतिज्ञापर रघुबाकी सहायता करनेपर सन्नद्ध हो गये, और कलकत्तामें फौजी सहायताके लिये लिखा। वारेनहेस्टिंगसने उनकी सहायता करनेको अपनी स्वीकृति दे दी। उसे उससे पूर्व ही पता लग चुका था, कि शाह आलमको देहली बुलाकर मरहट्टे अँग्रेज़ोंसे सामना करनेके

लिये विशेष उद्यम कर रहे थे। वारेनहेस्टिङ्गसको अब ऐसी शक्तिसे लड़ना था जो कि भारतवर्षमें अपना साम्राज्य स्थापित करना चाहती थी। बम्बईके अँग्रेज़ोंके प्रस्तावकी सहायतासे वह मरहटा गवर्नमेण्टके अन्दर फूट डलवाकर उसे निर्बल कर सकता था, और वह ऐसे उचित समयको अपने हाथसे खो देनेवाला आदमी न था।

मरहटा राज्यके सौभाग्यसे उनके नेतृत्वके लिये एक ऐसा पुरुष उत्पन्न हो गया, जो कि नीति, प्रयोग और बुद्धिमत्तामें तत्कालीन आर्यावर्त्तमें किसीसे न्यून न था। नाना फरनवीसने भी समझ लिया कि अँग्रेज़ोंका समस्त शक्ति लगाकर मरहटोंके विरुद्ध चाल चलनेमें यह उद्देश्य है, कि समस्त भारतमें निष्कण्टक राज्य करें। इसलिये उसने यह निश्चय किया कि सब प्रान्तोंमें जहाँ अँग्रेज़ी सत्ता स्थापित होनेकी सम्भावना है, उसे नष्ट करके देशको विदेशियोंके हाथसे एक बार बचा लिया जावे।

इस अभिप्रायसे नाना फरनवीसने एक बड़ा सम्मिलित और संगठित प्रयत्नकर अङ्गरेजोंका प्रतिरोध करनेका निश्चय किया। शाहआलम मरहटोंके साथ था। उसने मरहटा सरदारोंको बुलाकर इस बातपर उद्यत किया और नागपुरके भोंसला राजाको अपने पूर्ण बलसे बङ्गालपर चढ़ाई करनेके लिये कहा गया। इधर फ्रांसीसियोंसे पत्र व्यवहारकर उनसे समुद्री सेनाकी सहायताकी याचना की। उसने दक्षिणमें निज़ामअली, निज़ाम हैदराबादको अपने साथ मिलाया। परन्तु इन सबसे कहीं बढ़कर सहायक जो उसे मिली वह मैसूरका अधिपति हैदरअली था। हैदरअली भी एक साधारण अनपढ़ आदमी था पर उसमें एक विलक्षण योग्यता थी। उसका दादा फकीर सा था। उसका पिता सेनामें सिपाही था। हैदरअलीने युवावस्थामें कुछ साथी अपने साथ

एकत्रित किये और लूट मार करता हुआ उनका सरदार (नेता) बन गया। उसके साथी जो कुछ लूट लाते थे, उसका आधा उसे देते थे, आधा अपने पास रखते थे। उसकी सत्ता और ख्याति इतनी बढ़ गई कि मैसूरके राजाने उसे अपनी सेनामें नियुक्त कर लिया और बढ़ते बढ़ते एक दिन वह मैसूरका राजा बन गया। मैसूरका राजा अभी बाल्यावस्थामें था। उसका चचा उसे हटा देना चाहता था। हैदरअलीने राजाकी सहायता करके उसके बच्चेको हटा दिया और फिर राजाको कैद करके स्वयं राज्यका स्वामी बन गया। नवाब और निज़ाम उसे नीचकुलोत्पन्न जान उससे घृणाका व्यवहार करते थे और उसे उनके साथ लड़ाई झगड़ा करना पड़ता था। नवाब करनाटक और निज़ामने अङ्गरेजों और मरहटोंको अपने साथ मिलाकर हैदरअलीकी वृद्धिगत शक्तिको नष्ट करना चाहा। हैदरअली सबसे लड़ना न चाहता था। उसने मरहटोंको कुछ रुपया देकर उनको प्रसन्न कर लिया और फिर अकस्मात् सेना लेकर मद्रास जा पहुंचा। मद्रासकी सेना दूर गई हुई थी, गवर्नर भयभीत हो गया और हैदरअलीके कथनानुसार उससे परस्पर सहायता और मैत्रीकी प्रतिज्ञा कर ली। तत्पश्चात् जब हैदरअलीको उनकी सहायताकी आवश्यकता पड़ी तो अङ्गरेज़ोंने कोरा जवाब दे दिया। हैदरअली उस प्रतिज्ञाभङ्गके कारण अङ्गरेजोंसे अन्दर ही अन्दर खूब ईर्ष्या द्वेष की अग्निमें जल रहा था। अब उसके पास नाना फरनवीसके दूत पहुंचे और उसने मरहटोंके प्रस्तावपर अपनी हार्दिक अनुमति प्रकाश की। जब यह सारा गुप्त विचार (मंत्र) परिपक्क हो गया तो हैदरअलीने एक खुला पत्र अङ्गरेजोंके विरुद्ध दक्षिण में निकाला। जिसका सार यह था, कि विदेशी लोग सौदागरीके लिये इस देशमें आये थे, अब इसके स्वामी बन बैठे हैं

और हमें क्षणभर आराम (चैन) नहीं लेने देते। सब आर्य्य मुसलमानोंको पारस्परिक ऐक्य सम्पादन करके उन्हें बाहर निकाल देना चाहिये। जब हैदरअलीने आक्रमण शुरू किया तब सब मन्दिरों और मसजिदोंमें उसकी सफलताके लिये प्रार्थनाएँ की गईं और वह एक लाख सेना लेकर अँग्रेज़ोंके विरुद्ध चढ़ा। उनका देश (अधीकृत प्रान्त) उजाड़ दिया और उनकी फौज़ मद्रासमें जाकर कैद कर ली। इधर महादाजी सिन्धिया और होलकर, पेशवाकी सहायतामें अँगरेज़ी सेनाके विरोधमें लड़नेपर उद्यत थे, जो कि बम्बईसे रघुबाको गद्दीपर बैठानेके लिये चली। महादाजी सिन्धिया बड़ा वीर सेनाध्यक्ष था और साथ ही सदा रघुबाके नामपर धिक्कार और तिरस्कार देता था। सेना आ रही थी। लोग ग्रामोंके ग्राम उजाड़कर भाग गये। विवश हो सभी फौज घिर गई और उनको महादाजीके वशमें आना पड़ा। बड़े अनुनय, प्रार्थना, याचनाके अनन्तर रघुबाको उसे समर्पित करके सुलह करनी पड़ी। महादाजी सिन्धिया उस समय धोखेमें आ गया। रघुबा फिर उसकी निगरानी (संरक्षकता) से भाग गया और लड़ाई होती रही।

केवल नागपुरके राजा मोदाजी भोंसलाने अपने कर्त्तव्यका पालन न किया। भोंसलाकी ३० हजार मरहटा फौज उसके बेटे चम्पाजीकी अधीनतामें बंगालकी सीमापर पड़ी रही और दो वर्ष तक अपना ही व्यय करती रही। पूना सरकारको तो मोदाजी यह विश्वास दिलाना चाहता था कि उसने अपनी प्रतिज्ञानुसार फौज बङ्गालको रवाना कर दी है और इधर वारनहेस्टिंगसके साथ एक गुप्त मैत्री संगठन करके, उसे यह निश्चय दिलाया कि वह बंगालपर सर्वथैव आक्रमण न करेंगे। इस कारण वारनेहस्टिंगसको पूर्ण सुअवसर प्राप्त हो गया कि समस्त

सेना दूसरी दिशाओंको भेज दें। फौजका एक दल उसने बम्बईको सहायार्थ भेजा। एक सैनिक दल सिन्धियाके उत्तरीय प्रान्तपर आक्रमण करनेके लिये नियुक्त किया, जिससे कि सिन्धियाको इधर अपने देशकी रक्षार्थ आनेकी चिन्ता पड़े। कुछ कालके पश्चात् शेष सेना एकत्रित करके उसने सर आइर-कोटकी अध्यक्षतामें हैदरअलीके प्रतिरोधार्थ मद्रासको भेजी। मोदाजीने इस भारत देशमें अंग्रेजी राज्यकी जड़ोंको पक्का कर दिया। उसका मुख्य कारण यह था कि यद्यपि वह मरहटा संघ (Mahratta Confederacy) का सदस्य था तथापि उसके ऊपर कोई एक प्रभावशालिनी सत्ता न थी। वारेन हेस्टिंगसने उसे लोभ दिया कि तुम भोंसलावंशस्थ होनेके कारण मरहटा राज्य के वास्तविक अधिकारी हो। मोदाजीका एक ब्राह्मण मन्त्री था। उसका एक साला (पत्नीका भाई) वारेनहेस्टिंगसके पास नौकरीके लिये आया। वारेनहेस्टिंगसने उसे प्रचुर वेतन देकर बिना किसी कार्य्य-नियुक्तिके अपने समीप रख लिया और उसका असाधारण आतिथ्य, सम्मान और सत्कार करता रहा। अवसर पानेपर उसके द्वारा मन्त्रीसे पत्र-व्यवहार करके मोदाजी से प्रेम सम्बन्ध जोड़ लिया। उधर उत्तरकी ओर गोहरका राना मरहटोंसे जलता था। उसने अंग्रेजोंसे दोस्ती करके सिन्धिया-के इलाकेपर आक्रमण किया। जब सिन्धियाको अपनी राजधानी-में आपत्ति प्रतीत हुई तो उसने पूना छोड़कर इधर आनेका संकल्प कर लिया। मद्रासमें हैदर अलीकी सफलताकी कोई सीमा न रही। उसने निरन्तर कई वर्ष तक लड़ाईके अनुभवके पश्चात् बङ्गालसे गये हुए कमाण्डर आइरकोटकी फौजको घेर लिया। उसके पास रसदका सामान समाप्त हो गया। ग्रामोंकी भूमि खोद खोदकर उन्होंने अनाज निकाला। वह भी समाप्त हो

गया। कई दिनों तक फौज भूखी रही। फ्रांसीसी बेड़ा हैदरअलीकी सहायताके लिये समुद्रमें प्रस्तुत था। कलकत्तासे आये हुए रसदके जहाज कई दिनों तक प्रतीक्षा करते रहे। पर बेड़ेके डरसे समुद्र तटपर न आ सकते थे।

वङ्गालकी सारी सेनाका अन्त होनेवाला था, कि अकस्मात् फ्रांसीसी बेड़ेका एडमीरल (कप्तान) झण्डा उठाकर चल दिया। हैदरअलीने उससे बड़ी प्रार्थना और याचना की, कि वह थोड़ी देर और ठहर जावे। उसके देश और जातिके शत्रुओंका नाश होनेवाला था। न जाने उसे क्या लोभ दिया गया कि उसने हैदरअलीकी एक भी न सुनी। सामान रसद पहुँच गया। सेनाके अन्दर नवजीवन भर गया। फिर युद्धका पुनरारम्भ हुआ। पर हैदरअलीकी मृत्युने सारी योजनाएं और विचार नष्टभ्रष्ट कर दिये। हैदरअली ही अकेला नाना फरनवीसका सच्चा सहायक और हितैषी था। इसमें सन्देह नहीं कि निज़ाम भी साथ था पर थोड़ी चेष्टाके अनन्तर वारनहेस्टिंगसके के लिखनेपर निश्चेष्ट बैठा रहा। नाना फरनवीसने हैदरअली का मृत्यु समाचार पाते ही अंग्रेज़ोंसे सन्धि कर लेना उचित समझा। इस सन्धि-पत्रके अनुसार देहलीमें सेन्धियाके बल और शासनको स्वीकृत किया गया। अंग्रेज़ोंने रघुबाका साथ त्याग दिया और शेष परिस्थिति ज्योंकी त्यों रही। यह सन्धि सलबइमें १७८१ में हुई।

इन सारे युद्धोंके लिये वारनहेस्टिंगसको बहुत ज्यादा रुपयोंकी आवश्यकता पड़ी। अतः उसने अवधकी बेगमों और चेतसिंह राजा बनारसके साथ अन्याय करके सहायतार्थ रुपये बलात्कार वसूल किये। इस कारण इङ्गलैण्डमें उसपर अभियोग चलाया गया। जिसमें वह अन्तको मुक्त कर दिया गया।

पूना राज्यमें कलह और पारस्परिक ईर्ष्याद्वेषका बीज बोया गया, जो कि दिन प्रति दिन भयङ्कर रूप पकड़ता गया। उसके विपरीत अंग्रेज़ी सरकार एक जीवित जागृत जातीय संस्थाका परिणाम था। मरहटा सरकारकी पालिसी (उद्देश्य) का मूलाधार विशेष विशेष मनुष्योंका व्यक्तिगत स्वार्थ था और वह इन्हीं आदमियोंकी निजी सत्ता तक परिमित था। अंगरेजी सरकारकी नीति एक सुसम्बद्ध, क्रमबद्ध, जीवित शक्तिपर निर्भर थी। अधिकारी वर्गकी व्यक्तियोंका उससे कोई सम्बन्ध न था। दोनोंके संघर्षमें एक स्थायी और सुनियमित नीति ही अवशिष्ट रह सकती थी और उसे ही सफलता प्राप्त होती थी। वारनहेस्टिंगस चला गया और कार्नवालिस आ गया। उसमें केवल एक व्यक्तिका दूसरे व्यक्तिसे परिवर्तन हो गया था। पर गवर्नमेण्ट एक ही रही परन्तु उसके दूसरे पक्षमें जब १७०० में नाना फरनवीस मर गया तो मरहटा सरकार और उसके सब तरीके नष्ट हो गये। कार्नवालिसने मरहटे और निज़ामको अपने साथ कर लिया और हैदरअलीके पुत्र सुलतान टीपूसे लड़कर उसका बहुत सा देश छीन लिया। टीपू सुलतान (French Revolution) फ्रांसके विप्लव और नैपोलियनसे पूर्ण सहानुभूति रखता था और उनकी शासन प्रणालीको अपने राज्यमें प्रविष्ट करनेका बड़ा इच्छुक था। उसने नैपोलियनको बुला भेजा, कि वह भारतमें अपनी सेना सहित आवे और अङ्गरेज़ोंका आर्य्यावर्त्तसे वहिष्कार किया जावे।

१८०१ में लार्ड वैलज़ली गवर्नर जनरल बनकर आया। आते ही उसने भारतकी वास्तविक आन्तरिक दशाका दर्शन कर लिया। उसे फ्रांसकी ओरसे भय था। अतः उसने राजाओंको

अपने वशमें लानेका एक नवीन ढंग चलाया। उनसे उसने कहा कि यदि वह अङ्गरेज़ोंसे मैत्री रखना चाहते हैं तो आत्मरक्षाके लिये अङ्गरेज़ी सेना अपने व्ययपर रक्खें। निज़ाम और नवाब अवधने यह बात स्वीकार कर ली। बाकी रहे मरहटे। उस समय मरहटा साम्राज्य तीन नवयुवकोंके हाथमें आ गया। रघुवा का बेटा बाजीराव दूसरा पेशवा था। पुराना अनुभवी और शूर-वीर सेनापति महादाजी मर चुका था और उसका स्थानापन्न उनका दौहित्र दौलतराव सेन्धिया राज्य गद्दीपर बैठा। टिकाजी होलकरका उत्तराधिकारी जसवन्तराव होलकर भी नवयुवक ही था। उनका आपसमें शक्तिके लिये विवाद छिड़ गया। जसव-न्तरावने पूनापर चढ़ाई कर दी। बाजीरावने सेन्धियासे सहायता मांगी और अपने पिताके पदचिन्होंपर चलकर अङ्गरेज़ोंसे सहायताकी याचना की। उनसे सन्धि कर ली और वह नियम स्वीकृत किया, जिससे सहायक सेना रखना आवश्यक था। अब लार्ड वैलज़लीने सेन्धियाको वह नियम माननेके लिये बाधित किया। सेन्धियाने लड़ाई आरम्भ कर दी। हुलकर उसका सहायक न बना। अन्ततो गत्वा विवश होकर उसने भी अङ्गरेज़ोंसे सन्धि कर ली। अगले वर्ष होलकरने वैलजलीको दबाना चाहा। होलकर सेन्धियाको सहायतार्थ लिखता रहा पर सेन्धिया चुप-चाप बैठा रहा। इसी घटनाका वर्णन करते हुए एक इतिहास लेखकने सच्चा लिखा है कि आर्यों में पृथिवीराज और जयचन्द्रके पश्चात् इतनी शताब्दियां व्यतीत होनेपर भी न कोई नई बात सीखी और न उन्होंने अपने पुराने स्वभावको ही भुलाया। सेन्धियाको पराजित करनेपर अङ्गरेज़ दिल्लीके स्वामी बन गये। यद्यपि भरतपुरका घेरा १८०३ तक कुछ काल जारी रहा। क्योंकि यह किला बड़ा पक्का और सुदृढ़ था। इस दूसरे

युद्धमें पहिली स्थिति बदल गई। अब देशमें अङ्गरेज़ोंने मरहटोंका स्थान ले लिया।



सिक्खों और अंग्रेज़ोंका संघर्षण।

जिस समय अङ्गरेज़ और मरहटे भारतके राज्यके लिये परस्पर संघर्षण कर रहे थे। उस समय पंजाबमें सिक्ख अपनी राजधानी स्थापित करनेमें व्यग्र थे। हमने देखा है कि जब मुगल राज्यसत्ता औरङ्गजेबकी मृत्यु और घरेलू झगड़ोंके कारण निर्बल और निस्सत्व होकर बाहरी विजेताओंके आक्रमणोंसे जर्जर होकर अपने अधःपतनको अनुभव कर रही थी, उस समय सिख नेताओंने समूह एकत्र करके पञ्जाबके प्रान्तको बारह भागोंमें विभक्त कर लिया था।

उनकी शक्ति तलवार, पाशविक शारीरिक बल और पारस्परिक ऐक्य और दूसरोंको लूट मार पर आश्रित थी। इसी तरह आर्य जाटोंने भरतपुर आदि रियासतें स्थापित कर लीं।

पंजाबमें उस समय एक बन्दा बहादुर था। जिसकी इच्छा मुसलमानी राज्यके स्थानमें आर्य जातीय साम्राज्य स्थापन की थी। परन्तु शोक कि उसकी यह इच्छा उसके साथ ही समाप्त हो गई। उसके बाद वही एक विचार तरङ्गका प्रभाव सर्वत्र प्रचारित हुआ दिखाई देने लगा कि साधन भले ही कैसा हो, हमें अपना राज्य यथातथा बनाना चाहिये। खालसामें एक बात अत्यन्त प्रशंसनीय थी, कि जहां कहीं उन्हें समाचार मिलता था, कि अमुक स्थानपर अथवा अमुक पुरुषपर अत्याचार हुआ है वा वह दुःखित और पीड़ित है, उनकी औरतें वा बच्चे छीने गये हैं तो उसी समय सब मिसलोंके खालसा सिपाही इकट्ठे होकर लड़ने मरनेपर तय्यार हो जाते थे। उन्होंने क्षत्रियका काम अपने ऊपर ले लिया और सच्चे सिंह शूरवीर सूरमा निकले; परन्तु

उसके साथ हमें यह भी स्मरण रखना चाहिये कि वह राज्य शक्तिको भी अपने हस्तगत करना चाहते थे। इस युगकी परिस्थितियोंका विचार करते हुए तो यह इच्छा स्वतः स्वाभाविक और अनायासोत्पन्न थी। इन बारह भागोंका बल दिन प्रति दिन बढ़ता गया। बैसाखी और दीवालीके दिन सब लोग अमृतसरमें इकट्ठे होते थे। अपने अपने प्रान्तों (मिसलों) के झगड़े निर्णय करते थे और अपनी विजय-वृद्धिके प्रस्ताव निश्चित करते थे। लाहौर नगर अहमदशाह अबदालीका सूबा था। १७०५ में एक सिख सरदार जस्सासिंह बलालने लाहौरको विजय कर लिया और अपने नामका सिक्का चलाया जिस पर "अहमदका सूबा जस्सासिंहने फतह किया" यह शब्द अङ्कित थे। अहमद शाह सेना लेकर आया। सिख लाहौर छोड़ कर भाग गये। अहमदशाह लौट गया। वापस पहुँचते ही उसका देहपात हो गया। उसके चार पुत्रोंमें परस्पर दङ्गा हो गया। हरएक तख्त (शासन गद्दी) का अधिकारी बननेकी चेष्टा करता था। फिर सिक्खोंने लाहौरपर अधिकार जमा लिया। ज़मानशाह सेना लेकर रवाना हुआ। चनाबमें उसकी कुछ तोपें डूब गईं। उसके पीछे काबुलमें फसाद हो जानेपर उसे वापस जाना पड़ा। गुजरानवालेकी मिसलके सरदार रणजीतसिंहने जो कि अभी नौजवान ही था, वह तोपें निकलवाकर ज़मानशाहको पहुंचा दीं। ज़मानशाह उससे इतना प्रसन्न हुआ, कि उसे लाहौरका सूबा पारितोषिकमें दे गया। रणजीतसिंह फौज लेकर आया। और दूसरे सिक्खोंसे लाहौर छीन लिया। रणजीतसिंहने स्पष्ट देख लिया, कि सिक्ख सत्ता केवल उसी समय स्थिर रह सकेगी, यदि इन सब मिसलोंको मिलाकर एक सूत्रमें बांध कर एक राज्य बना दिया जावेगा।

अतः उसका एक कार्य्य यह था, कि अपना विवाह करके अपने पुत्रके विवाहको साधन रूप बना जागीरदारीकी उपाधि देकर उन नौ मिसलोंको अपने साथ कर लिया। सतलजके पारको तीन मिसलें पृथक् रह गईं। रणजीतसिंह सदा खालसाकी हकूमत है, ऐसाही कहा करता था और अपने आपको खालसेका सेवक ही कहता था। रणजीतसिंह सर्वथा अक्षर विद्यासे अनभिज्ञ था। उसे आदमी पहचाननेको ईश्वरदत्त विचित्र बुद्धि थी; उसने सिक्खों, आर्य और मुसलमानोंसे अपने दरबारी चुनकर नियुक्त किये। उसके अपने भाग (मिसल) के कुछ लोग उसके बड़े अनुरागी, सहायक और शूरवीर अफसर थे। अकालगढ़का दीवान सावनमल बड़ा नीतिमान पुरुष था। वज़ीराबादका दीवान मोहकमचन्द्र बड़ा शूरवीर फौज़ी अफसर था। एक ग्राममें मिश्र दीवानचन्द्र तोपखानेका मुख्याधिकारी था। गुजरानवालाका हरिसिंह नलवा उसका विख्यात जरनैल हुआ। रणजीतसिंहका दूसरा काम यह था कि उसने मुलतान, डेराजात, पेशावर और काशमीरके सूबा पर चढ़ाइयां कर उनको विजय किया और अपने राज्यमें समाविष्ट किया। काबुलके झगड़ोंके कारण शाहशुजाह भागकर रणजीतसिंहके पास आया और उससे अपनी काबुलकी राज्यगद्दीकी पुनः प्राप्तिके लिये सहायता मांगी। रणजीतसिंहने उससे प्रतिज्ञाएँ (शर्तें) कीं। उनमेंसे दो यह थीं। एक तो अफगानिस्तानमें गोवधको बन्दकर दिया जावे और दूसरे सोमनाथके मन्दिरके स्तूप लौटा दिये जायें। इसी अवसर पर उसने शाहशुजाहसे मित्रताके बहाने पगड़ी बदलकर कोहनूर हीरा ले लिया जो कि उसकी पगड़ीमें लगा हुआ था।

अंग्रेज़ोंको देहलीमें पाकर उसे उनसे सदा भय लगा रहता

था। उसके दिलमें शङ्का थी कि किसी दिन उसकी सब बनी बनाई राज्य सम्पत्ति अंग्रेज़ोंके हाथमें चली जावेगी। जसवन्त राव होलकर भागकर उसके पास सहायताकी याचना करने आया। परन्तु उस समय उसकी कुछ ताकत न थी। उसने सतलज पारकी तीन फुलकियां रियासतोंको अपने संगठनमें प्रविष्ट करना चाहा। उधर देहलीसे अँगरेज़ोंकी ओरसे दूत उसके पास आये। सरदारोंने बैठकर सलाहकी। एक सरदार बोल उठा। रणजीतसिंह है हैज़ा, अंग्रेज़ है तपेदिक, हैज़ेसे तो तपेदिक अच्छा है। कुछ देर जीवित तो रहेंगे और वह अंग्रेज़ोंके साथ होगये। जब अंग्रेजोंको फ्रांसके साथ युद्धमें नैपोलियनसे डर उत्पन्न हुआ कि वह ईरानकी तरफसे भारतपर आक्रमण करेगा तो उन्होंने रणजीतसिंहके पास दूत भेजा और उससे मैत्री सम्पादनकी। रणजीतसिंहकी सेना पेशावरके आगे काबुलकी तरफ अपना राज्य फैलानेमें व्यग्र थी कि रणजीतसिंह रोगी हुआ और १८३६ में परलोक सिधारा। उसका पुत्र खड्गसिंह राजसिंहासनपर बिराजमान हुआ। खड्गसिंहमें न तो कोई पिताका गुण था और न कोई योग्यता थी। चार वर्ष न व्यतीत हुए थे कि उसको भी मृत्युका ग्रास बनना पड़ा। उसका बेटा नौनिहालसिंह बड़ा बहादुर और अपने पितामहकी कृति था। वह पेशावरसे वापस लाहौर आया। पंजाबके दुर्भाग्यसे जब श्मशानसे चौथके दिन (मृत्युके पश्चात् चौथा दिन) अस्थिचयन करके आ रहे थे कि दरवाज़ेकी छत हाथी के हौदेपर गिर पड़ी और नौनिहालसिंह भी इस घटनासे अकाल मृत्युको प्राप्त हुआ।

अब लाहौरमें तीन दल बन्दियाँ हो गईं। एक दल तो खड्गसिंहकी रानी चन्द्रकौरके पक्षका सहायक था। दूसरा शेरसिंहका जो रणजीतसिंहका पुत्र था और तीसरा रानी

जिन्दांका जो दिलीपसिंहकी माता थी।

चन्द्रकौरको थोड़े ही दिन बाद एक दासीके द्वारा मरवा दिया गया। उसका परिणाम यह हुआ, कि उसके पक्षके सरदारोंने जिन्हें सन्ध्यावाला सरदार कहते थे, महाराजा शेरसिंहको जो गद्दीपर बैठा था, एक बन्दूक देनेके बहानेसे गोली चलाकर हनन कर डाला। अब दिलीपसिंहको सिंहासनपर बिठा दिया गया। सब अधिकार उसकी माताके अधीन थे। उसकी माताका एक भाई जवाहरसिंह जो बड़ा दुष्ट और आचारहीन था, राज्यका एक अधिकारी बन गया। उसने गुप्तमन्त्र द्वारा षड्यन्त्र रचकर महाराजा शेरसिंहके दो बच्चोंको मरवा डाला ताकि वे राजसिंहासनपर अपना स्वत्व न जमा सकें। इसपर खालसा फौजको अग्निकी तरह जोश आ गया। खालसा सेनाका बड़ा प्रभाव था। उसकी विधिपूर्वक नियमसे पञ्चायतें निर्वाचित होती थीं। उन्होंने जवाहरसिंहको मार डालनेकी सजा देनेका निश्चय किया। जवाहरसिंह महाराजा दिलीपसिंहको हाथीपर बिठाकर साथ ले आया। खालसा कोर्टकी ओरसे आज्ञा हुई कि नीचे उतर आओ और उसे गोली मार देनेकी आज्ञा हुई। जवाहरसिंह तो मारा गया। परन्तु रानी जिन्दांने संकल्प कर लिया कि वह उस खालसेका समूलोच्छेद करेगी जिसने उसके भाईको मृत्यु मुखमें पहुँचाया है। रानी जिन्दांके मन्त्री मूलासिंह और तेजसिंह उसके बड़े अन्तरङ्ग थे। उसके साथ उसने सम्मति गांठ ली और अंग्रेज़ोंकी सहायतासे खालसाकी फौजको छिन्न भिन्न करना चाहा।

अङ्गरेज़ उधर अम्बाले तक पहुँच गये थे। वह अपने लिये उचित समय ताड़ रहे थे। उनको जब इस परिस्थितिका ज्ञान हुआ तो उन्होंने सेना एकत्रित करके आगे बढ़ना आरम्भ किया।

इधर खालसा फौजको जिसे नैपोलियनके जरनेलोंने खूब कवायद-दान अर्थात् युद्ध विद्यामें सुशिक्षित और नियंत्रित कर दिया था और जिसकी संख्या ४०००० चालीस हजारके लगभग थी, उकसाया गया कि अङ्गरेज़ हमला (आक्रमण) करने आ रहे हैं। खालसा रणजीतसिंहकी समाधिपर इकट्ठे हुए और सबने शपथ खाई, कि अङ्गरेजोंको महाराजाके राजमें न आने देंगे। लालसिंह और तेजसिंहने कहा, हम इस प्रतिज्ञापर कमान करेंगे, यदि तुम विश्वास दिलाओ कि तुम युद्ध कालमें पञ्चायतोंको बन्द कर दोगे। उसे सब संगतने स्वीकृत कर लिया। दूसरी तरफसे अङ्गरेज़ फौज आ रही थी। उधरसे खालसा जो स्वयमेव सिपाही, खुद ही बोझ उठानेवाले, और आप ही रसद ढोनेवाले और आपही पुल बांधनेवाले इञ्जीनियर थे, सतलज दरियाके पार उतर गये। मुद्की, फ़ीरोज़ शहर और सुबराओंकी लड़ाइयों-का वर्णन लम्बा है। खालसाकी शूरवीरताके चमत्कार देखकर अङ्गरेज़ चकित हो गये। मुद्कीमें मीलों तक खालसा पीछे हटता और लड़ता चला गया पर पीठ नहीं दिखाई। फीरोज़ शहरमें अङ्गरेज़ फौज सब कुछ समाप्त कर बैठी। गवर्नर जनरल लार्ड हार्डिंग खुद रणक्षेत्रमें आ पहुँचा था। यदि लालसिंह चाहता तो अङ्गरेज़ी फौजको कैद कर लेता परन्तु उसके स्थानपर उसने Retire पीछे हटनेकी आज्ञा दी। अङ्गरेज़ अफसर तो कहते थे कि हमारा राज गया पर लालसिंहका कुछ और ही निश्चय था। वह तो खालसाको नष्ट करनेके लिये आया था न कि अङ्गरेज़ी फ़ौजको। हा! इस अभागे भारतके इतिहासमें कई मीरजाफर हुए हैं। सभराओंमें तेजसिंह स्वयमेव भाग आया और किशतियोंके पुलमेंसे किशतियां डुबो दीं ताकि कोई बचकर न आ सके। शामसिंह अटारीवालेने सफेद कफन

पहनकर वीरताकी चरम सीमा दिखा दी। साधारण जनतामें अभीतक प्रसिद्ध है कि जिन्दा राणीने खालसाके लिये बारुदकी बोरियोंके स्थानमें सरसोंको भरी हुई बोरियां रवाना की थीं।

जिन्दांकी कल्पना मिथ्या थी। जब लाहौरमें अङ्गरेज़ोंने अपने आपको महाराजा दिलीपसिंहका संरक्षक बनाया तो उसे ज्ञात हुआ कि खालसाकी बरबादीके साथ उसने सिक्ख राज्यको ही नष्टभ्रष्ट करा लिया था। अल्पकालानन्तर उसने उन्हीं अटारीवाले सरदारोंको साथ मिलाकर षड्यन्त्र रचना आरम्भ किया कि सिक्खराज्यको अङ्गरेज़ी सरकारसे विमुक्त कर लिया जावे। उस गुप्त सङ्घ रचनाका परिणाम दूसरा सिक्ख युद्ध हुआ। जिसमें दीवान मूलराज मुलतानवालेने भी भाग लिया और सरदार शेरसिंहने चेलयांवालेमें अङ्गरेज़ी सेनापर विजय प्राप्त की पर विजयके बाद पीछा न किया। उसकी तरफ अवहेलना दृष्टि रखी। अतः गुजरातकी लड़ाईमें सिक्ख सेना हार गयी। उसका एक कारण यह बताया जाता, है कि उस समय सिक्खोंका पुराना शत्रु काबुलका अमीर दोस्त मुहम्मद अङ्गरेज़ोंके विरुद्ध लड़नेको आया था परन्तु वहां लोभाकृष्ट होकर या किसी और अदृष्ट कारणसे अङ्गरेज़ोंकी ओर हो गया। पंजाब अङ्गरेज़ी राज्यसे मिला दिया गया। महाराजा दिलीपसिंह और रानी जिन्दां कैदकर लिये गये। कौंसिलके केवल दो सदस्य बा० भगतराम और पं० दीनानाथने पत्र पर हस्ताक्षर न किये। पं० दीनानाथने लार्ड डलहौज़ीसे फ्रांसकी उत्क्रान्तिकी ओर इशारा करके कहा कि अङ्गरेज़ तो ऐसी जाति है कि उसने बादशाहोंको उनके राजपाट वापस दिलानेके लिये इतना बड़ा युद्ध किया है। इस बच्चेका क्या दोष है? यह निरपराध तो अङ्गरेज़ोंके निरीक्षणमें था। लार्ड डलहौज़ीने उत्तर

दिया "चुप रहो, नहीं तो कालापानी जाओगे।" वह रोता हुआ बाहर आया और पंजाबके सिक्ख राज्यका नाटक समाप्त हुआ। लार्ड लारेन्सने कोहेनूर हीरा छीनकर इङ्गलैण्ड भेज दिया। अर्थात् भारतका राज्य आर्य्यावर्तसे इङ्गलैण्डमें चला गया। एक समयपर एक पुरुषने रणजीतसिंहसे पूछा कि कोहेनूरका क्या मूल्य होगा। महाराजने उत्तर दिया—"दो जूते।" दूसरे शब्दोंमें जिसके पास पाशविक बल हो वह उसका स्वामी बन जावे। सिक्खोंमेंसे एक संघ और निकला जिन्होंने एक विशेष सोसाइटी (सम्प्रदाय) "नामधारी" बनाकर फिर खालसा राज्य स्थापित करनेका संकल्प किया। उनका नेता गुरु रामसिंह था जिसने नामधारी पन्थके मौलिक सिद्धान्त अङ्गरेज़ी राज्यसे पूर्ण असहयोगपर रक्खे। अङ्गरेज़ी कचहरीमें न जाना, डाकमें चिट्ठियों तक रवाना न करना, सरकारी नौकरी न करना और आपसमें बांटकर खाना—यह साधारण नियम थे। उस पन्थमें स्त्रियोंके अधिकार पुरुषोंके समान थे।। इनको साधारणतया "कूका" नामसे प्रसिद्धि है। इनके कुछ व्यक्तियोंने अमृतसरमें बूचड़ोंको मार दिया। इसपर अमृतसरके आर्य रईस धनिक लोग पकड़े गये। इनके आदमियोंने स्वयमेव इस बूचड़ वधको स्वीकार कर लिया और उन्हें फांसी दे दी गई। इसपर उनमें अशान्ति फैल गई और उनके कुछ आदमियोंने मालेर कोटला पर धावा बोल दिया जो कि वहां तोपसे उड़ा दिये गये और नामधारी पन्थको Seditious राज्यविरोधी घोषित किया गया।

१८५७ की हलचल व लक्ष्मी बाई।

लार्ड डलहौज़ीके समयमें इस देशके ऊपर अंग्रेज़ी राज्य स्थापित होगया। लार्ड डलहौज़ीको सब देशमें एक राजनैतिक सत्ता (Political force) स्थापित करनेकी बड़ी उत्कण्ठा थी। उसने इसे पूरा करनेके लिए कई एक ऐसे साधन बर्ते, जिनसे लोगोंके दिलोंमें असन्तोष पैदा होता गया। अवधका नवाब वाजिदअली बड़ा आलसी, निष्क्रिय और दुराचारी था। उसे राज गद्दीसे उतार दिया गया। नागपुर और झांसीको रानियोंके सन्तानें न थीं, उन्हें उत्तराधिकारी (Adopted son) बनानेकी आज्ञा न दी गई और नागपुर सरकारने आप लेलिया और सरकारी राज्यमें मिला लिया।

देहलीमें अबूज़फ़र बहादुर शाह देहलीका "शहंशाह" कहलाता था। यद्यपि वह एक आजीविका प्राप्तके रूपमें रहता था, तथापि यह विचार स्थिर किया गया, कि उसके मरनेके पश्चात् यह उपाधि या पद हटा दिया जाय। इस कारण बादशाहकी बेगमें दिलमें जलने लगीं; क्योंकि इनके पुत्रसे भी यह पद छीना जाना था और राज्य गृहमें सरकारके विरुद्ध बात चीत होने लगी। पेशवा बाजीराव जो कि कानपुरके पास भटोरमें पेनशनकारके रूपमें रहता था, मर गया। उसने नाना साहिब धुन्दुपंथको मुतबन्ना पुत्रस्थानीय बनाया था, सरकारने उसकी पेनशन बंद्कर दी, इस प्रकार आर्यावर्तके रईसोंमें जिसमें रानियां और बेगमात भी थीं, सरकारके विरुद्ध विचार फैल रहा था। जब कि अंग्रेज़ी फ़ौजमें आर्य क्या और मुसलमान क्या, सब सिपाहियोंके अन्दर धर्मभङ्गके आधारपर जोश फैलना आरम्भ हुआ, उस समय नये कारतूस फौजोंमें जारी किये गये, जिनको मुखसे छूना पड़ता

था। सिपाहियोंमें इस बातकी प्रसिद्धि हो गई, कि इसमें गाय और सूअरकी चर्बी लगी है, और इससे आर्य और मुसलमानोंके धर्म्म भ्रष्ट करनेका लक्ष्य है। निराश राजाओं और नवाबोंने इस हलचलसे लाभ उठाना चाहा और हर स्थानपर फौजोंमें अंग्रेजोंके विरुद्ध विचार नियमित रूपसे फैला दिये। बंगालके विजयको सौ साल हो चुके थे। बस यह प्रसिद्ध होगया, कि एक शताब्दीके पश्चात् यह राज समाप्त हो जायगा। बारकपुरमें दो पलटनोंने कारतूस छूनेसे इनकार कर दिया और कुछ अंग्रेज़ अफसर मार डाले। वह दोनों पलटनें बर्खास्त कर दी गईं। इससे हलचल या यह क्रान्ति स्थान स्थानपर फैल गयी। मेरठसे आग लगनी शुरू हुई। पलटनने कारतूसके प्रयोग और स्पर्शसे इनकार कर दिया। अंग्रेज़ अफसरोंने कुछ सिपाहियोंको कैद कर दिया। बाकी सिपाही नगरमें गये। शहरमें स्त्रियोंने उन्हें कहा, तुमको लज्जा नहीं आती, सिपाही बने फिरते हो, तुम्हारे साथी ज़ंजीरोंमें पड़े हैं। वे जोशमें आए। गिरजामें आग लगा दी, कितने अंग्रेज़ हनन कर दिये और रातके अन्दर अन्दर देहली पहुंच कर शाही झण्डा बुलन्द कर दिया। जहां जहां फौज थी, यही परिस्थिति उत्पन्न हो गई। सिपाही अफसरोंको मारकर देहली पहुँचने लगे। कानपुरका कतल अधिक शोक जनक है क्योंकि उसमें लोगोंने स्त्रियों और बच्चोंको भी कतल कर दिया। कानपुरमें एक गाने और नाचनेवाली वेश्याका मकान सिपाहियोंके गुप्त समझौतेका केन्द्रस्थान था। देहली, कानपुर और लखनऊ उत्क्रान्तिके मुख्य स्थान थे। पंजाबकी फौजको इसकी कुछ खबर न थी और न उनको इसमें निमन्त्रित किया गया। पंजाबकी फौजने अंग्रेज़ी सरकारकी सहायता करके दिल्लीको पुनः उनके अधिकारमें कर दिया। कानपुरमें नाना साहब—तांतिया

टोपी और लखनऊमें अहमदशाह दो वर्ष तक लड़ते रहे। यह आग ग्राम ग्राम और शहर शहर लग गई। झांसीकी रानी लक्ष्मी बाईका हाथ उसमें पुरुषोंसे बढ़कर था। झांसीको अंग्रेज़ी फौजने जा घेरा। रानी स्वयम् घोड़ेपर सवार सिपाहियोंकी वरदी पहने लड़ती थी। जब वहां कोई चारा न रहा तो उधरसे निकल ग्वालियरमें लड़ाई जारी रक्खी। तलवारके घाव शरीरपर आए। घोड़ा भगाती जाती थी, कि एक साधुकी कुटियाके पास उसका दम निकला। उसने चिता बनाकर उसका विधि-पूर्वक दाह संस्कार कर दिया।

दो वर्षके बाद शनैः शनैः यह अग्नि शान्त की गई। बसोहली आदि नगरोंमें कितने ही आदमी तलवारके घाट उतारे गये। मलका विक्टोरियाकी ओरसे एक घोषणा पत्र निकाला गया कि राज्य अब कम्पनीसे इंगलैंडकी महारानीके हाथमें चला गया है और वह सारी प्रजासे समान व्यवहार करेगा। किसीके मज़हबमें हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा और कोई स्वदेशी रियासत न मिलाई जायगी। यह एक अधिकारोंका चार्टर (प्रमाण पत्र) था जो कि सिपाही दलकी उत्क्रान्तिके बाद लोगोंको मिला। इसमें सारी प्रजाके अधिकारोंको बिना रंगके, धर्मके अथवा विचारोंकी विशेषताके समान ही माना गया। उसके अनन्तर भारत वर्षमें नई पोलीटिकल (राजनैतिक) तरङ्ग चली।

उपसंहार ।

नवीन भारत ।

आपने सम्भवतः यह नवीन भारतका शब्द बहुत बार सुना होगा पर इसपर विचार नहीं किया होगा। वह कौनसी नई शक्तियां हैं जो कि इस भारतीय आधुनिक युगको पिछले समयके आर्यावर्त्तसे भिन्न करती हैं। सबसे मुख्य बात जो वर्तमान कालको विशिष्ट बनाती है वह यह है कि सारा देश, जातीय चेतनता अथवा जागृतिके तरङ्गोंसे तरङ्गित हो रहा है और इस जातीयताकी लहर दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। यह चेतनता पहले कभी विद्यमान न थी। यदि कुछ थी भी तो बड़ी अनस्थायी और थोड़े परिमाणमें। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह जागृति एक सुदृढ़ राज्यके अन्दर हमारे जकड़े जानेसे पैदा हुई है और साथ ही यह आधुनिक युगकी संस्थाओं और समाचारपत्रों आदिका परिणाम है। देशके किसी कोनेमें अन्याय होता है तो समस्त देशमें इसका ढिंडोरा पिट जाता है। किसी प्रान्तमें रोग, दुर्भिक्ष अथवा दारिद्र्यसे जनता पीड़ित होती है तो सारे देशमें वह गूंज प्रतिध्वनित हो जाती है और पढ़ने सुनने वालोंके हृदय द्रवीभूत होकर पीड़ितोंके प्रति स्नेह और सहानुभूतिका प्रकाश करने लग जाते हैं। एक वेदनासे जातिकी नब्ज़ाका धड़कना जातीय जागृतिका प्रमाण है। यदि यह परिणाम दासता (गुलामी) से भी पैदा हुआ है, तो भी मैं इसे गुलामीका बड़ा भारी लाभ समझता हूं।

इससे पूर्व मतमतान्तरजन्य भेद बड़े वेगमें था और इसके साथ प्रान्तीयता (Locality) का भेद भी था। अर्थात् लोगोंके

अन्दर (Provincial Spirit) प्रान्तीय भेद भाव बड़ा जोरों पर था। मैं यह नहीं कहता, कि यह भेद अब सर्वथा लुप्त होगया है। अभी तक धार्मिक सहानुभूति बड़ी प्रबल विद्यमान है। मुसलमान अपनी धार्मिक त्रुटियाँ भली भांति अनुभव करते हैं। सिक्खोंको भी मज़हबी बातें (मुआमले) बड़े अपील करते हैं अर्थात् हार्दिक स्नेहाकर्षक हैं। परन्तु उसके साथ साथ नई बात जो हुई है, वह यह है कि राष्ट्रीयताका भाव भी पैदा होगया है और यह दिन प्रति दिन बढ़ रहा है। इसी प्रकार प्रान्तिक भाव भी हमारे अन्दर काम करता चला जा रहा है। महाराष्ट्र निवासी मरहट्टोंको अधिक प्रेम और सम्मानकी दृष्टिसे देखते हैं। बंगाल इस अंशमें सबसे बढ़ा हुआ है। उन्हें तो बंगाल ही में सब देश दिखाई देता है। मद्रासमें यह भाव सर्वथैव नहीं पाया जाता तथापि यह प्रान्तिक लहर भी राष्ट्रीय भावकी अपेक्षा कम होती प्रतीत देती है। ज्यों ज्यों जातीयतासे प्रेम बढ़ेगा हलके यो तङ्ग करने वाले विचार कम होते जायँगे। मुसलमानोंके अन्दर धार्मिक ऐक्यता और जागृति बड़े जोरकी पाई जाती थी। मुसलमान हो जानेपर एक आदमीको सब समान अधिकार मिल जाते थे। परन्तु जबतक कोई व्यक्ति इसलाम धर्म्ममें न था तबतक उसके कोई अधिकार न थे अर्थात् एक व्यक्तिकी राजनैतिक योग्यता भी चन्द धार्मिक सिद्धान्त मानने या न मानने पर निर्भर थी। राजपूत लोग एक राज्याधिकारी वर्गकी, योग्यतामें मुसलमानोंका सामना करते रहे, जब मरहट्टोंके अन्दर जीवन ज्योति चमकी और वह एक राजनैतिक सत्ता बन गये तो उनके अन्दर एक ही भाव काम करता था अर्थात मरहट्टी राज्य भारत भरमें स्थापित हो जावे। राजपूत राजोंसे मैत्री पैदा करके उनसे सम्मिलित हो एक सम्मिलित उद्देश्य

बनानेके स्थानमें मरहटोंने उनसे लड़ाई करके उनसे भी कर (चौथ) वसूल करनी चाही और उन्हें अपना आधीन माण्डलिक बनाना चाहा। पंजाबमें जब सिक्खोंका राज्य हुआ तो उन्होंने भी यही प्रयत्न किया कि जैसे राजपूत राज करते थे, जैसे मरहटे राजे बन गये, वैसे ही सिक्ख भी पंजाबके या देहलीके राजा बन जावें। बन्दाका दृष्टान्त इसको स्पष्ट कर देता है कि किस प्रकार ५००० सिक्ख एक रुपया और आठ आना तनखाह पर नवाबसे जा मिले और बागबानपुराकी लड़ाईमें नवाबके पक्षमें बन्दाकी फ़ौजसे लड़ते रहे। बन्दाके हार जानेका सबसे बड़ा कारण यही था।

मुसलमान हमला करनेवालोंने और उनके विरुद्ध राजपूतों, मरहटों और सिक्खोंने बड़ी बहादुरियां और कुरबानियां कीं परन्तु उनके मनमें मत अथवा सम्प्रदायका काम करता था। वर्त्तमान जातीयताकी तरङ्गके अन्दर एक विशेष बात काम करती है, कि प्रजाकी रक्षाके लिये प्रजाके प्रतिनिधियोंकी ओरसे ही प्रजाका शासन हो और किसी विशेष व्यक्ति, या सम्प्रदायका दूसरोंपर अधिकार नहीं। कई लोगोंका विश्वास है, कि १८५७ का गदर जातिकी चेतनताका परिणाम था। मेरा उनसे मतभेद है। मेरे विचारमें यह सिपाही विद्रोह Sepoy Mutiny राजाओं और फौजोंके परस्पर समझौतेसे हुआ था। जिन राजाओंके हाथसे राज्य सत्ता खोई गई थी, वह मन हीमें बड़े जलते थे और अनुकूल परिस्थितिको ढूंढ़ रहे थे। जब अङ्गरेज अफसरोंने फौजियोंके मज़हबमें हस्तक्षेप करना चाहा तो उनकी हार्दिक इच्छा यह थी कि फौज लामज़हब (बेधर्म) होकर सदैवके लिये उनकी तरफ हो जावे। यद्यपि फौज़ी लोग देश क्या है इसको कुछ न जानते थे मगर भारतीय धर्म-भाव उनके अन्दर

बड़ा प्रबल था। परिणाम यह हुआ, कि इस अशान्तिसे लाभ उठाकर राजाओंने फौजको अपनी तरफ कर लिया। उनके दिलमें ईर्ष्या और द्वेष था। इसलिये वह उन लोगोंको नष्ट भ्रष्ट और समूलोच्छेद करनेपर उद्यत हो गये, जिन्होंने उनको दुःख दिया था। परन्तु उनके सामने स्वतन्त्र राज्य-स्थापनाकी कोई युक्ति अथवा योजना न थी। महाराणी विक्टोरियाने अपनी घोषणामें इन दोनों बुराइयोंको सदाके लिये दूर कर दिया कि आगेको किसीके मज़हबमें हस्तक्षेप नहीं किया जावेगा और किसी स्वदेशी रियासतको राज्यमें सम्मिलित नहीं किया जायगा। आधुनिक मज़हबी स्वतन्त्रता और रियासतोंकी स्थिति इस गदरके बड़े भारी फल हैं। यदि उनके दिलोंमें कोई और अग्नि होती तो उसका कुछ न कुछ अंश अवशिष्ट रहकर अपने परिणाम भविष्यमें अवश्य दिखाते। दूसरी बड़ी शक्ति (Force) आधुनिक कालकी देशभक्ति (Patriotism) की तरङ्ग है। जब कोई जाति एक इन्द्रियाकार होकर समष्टि रूपमें विचार करनेके योग्य हो जाती है तो देश भक्तिका उत्पन्न होना इसका अवश्यम्भावी फल है। पहली अवस्था वर्त्तमान हुए बिना दूसरीका कभी आविर्भाव नहीं हो सकता। संसारमें Action (क्रिया) और Reaction (प्रतिक्रिया) का नियम काम करता है। आप आहरण पर हथौड़ा मारते हैं। नीचेसे आहरणकी तरफसे reaction (प्रतिक्रिया) होती है। जब मुसलमान आक्रमक भारतवर्षमें आये तो उनका अभिप्राय मज़हबका फैलाव अधिक करके या और दूसरोंको लूट मार कर उनपर अपना शासन स्थापित करना था। ठीक इसी प्रकारका reaction (प्रतिक्रिया) आर्योंकी ओरसे हुई। मरहटोंने वही विधि वर्तकर आर्य राज्योंकी स्थापना की। आर्य

जाटोंने ऐसा किया। सिक्खोंने ऐसाही किया। अङ्गरेज़ी राज्य आर्यावर्त्त पर एक देश भक्तिके भावपर स्थिर था। हर एक अङ्गरेज़ बच्चा अपने देशके लाभके लिये क्षेत्रमें आता है और इसके लिये प्राण तक न्योछावर करनेपर उद्यत है। अङ्गरेज़ी राज्यकी स्थितिका यही एक रहस्य है। इस देशपर इस देशभावकी चोट लगी, इससे वैसा ही उसके प्रतिकारमें प्रभाव पैदा हुआ। यह देश भक्ति भिन्न भिन्न लहरोंके रूपमें प्रकट हुई। जहांपर अङ्गरेज़ अपने देशका पोलीटिकल (राजनैतिक) लाभ उद्देशमें रखते हैं, इसके साथ वह अपने धर्म और साहित्यसे प्यार रखते हैं। ईसाइयोंने आकर अपनी सभ्यता और मज़हब फैलाना आरम्भ किया। इसके विरुद्ध एक तो ब्राह्मसमाज खड़ी हुई ताकि ईसाई मत जातिको सर्वथा ही न खा जावे। उनका इलाज यह था कि सब मज़हब सच्चाईका बीज रखते हैं। आर्य धर्ममें भी वह सच्चाई विद्यमान है। इसके साथ आर्य्यसमाज एक पग और आगे बढ़ा। जिसने बताया कि सब सच्चाई वैदिक धर्मसे निकली है और आर्य सभ्यता सर्वोत्तम है। हमें सब संसारको आर्य धर्मके झण्डेके तले लाना चाहिये। इससे बढ़ी हुई थियोसाफिकल सोसाईटी हुई। जिसका मद्रासमें जोर हुआ। मैडिन ब्लेवेट्स्यकी और कर्नल आल्कार स्वामी दयानन्दको गुरु बनाकर यहां आए। पीछे पृथक् होकर कार्य करना चाहा। इस हेतुसे कि आर्यों के सब ही रीति नीति और भ्रमात्मक विश्वास भी ठीक है। स्वामी विवेकानन्दने आर्य सभ्यता अमेरिका और योरूपमें फैलायी। गोरक्षिणी सभाकी तरङ्ग जो संयुक्त प्रान्तमें चलाई गई आर्थिक (Economic) और राजनैतिक (Political) उद्देशोंके आश्रित थी। महाराष्ट्रमें स्वदेशी और पोलीटिकल तरङ्ग आरम्भकालसे ही ज़ोर पर रही। मि० ह्यूमने चन्द बड़े

आदमियोंको एकत्रित करके कांग्रेसकी नींव डाली जो कि भिन्न भिन्न प्रदेशोंमें अपने वार्षिक उत्सव और सम्मेलन करके ऐक्य और सहयोगके उसूलका प्रचार करती रही। १९०५ में जापान और रूसके मध्यमें युद्ध हुआ। जापानके विजयी होनेपर भारतमें जापानका नाम और देशभक्तिके उदाहरण हर ग्राम और हर नगरमें फैल गए। उस समय लार्ड कर्ज़नकी वंग विच्छेद (Partition of Bengal) और बंगवासी जनताके सार्वजनिक सम्मतिकी अवहेलना किये जानेपर स्वदेशी और बहिष्कार (Boycott) का प्रचार हुआ। यही स्वदेशीकी तरङ्ग पंजाबमें फैली और लायलपुर और लाहौरके जाटोंमें नहरके महसूल (कर) बढ़ाए जानेपर ऐजीटेशन (जोश) जोरसे फैल गया। जिसका परिणाम ला० लाजपतरायजी और सा० अजितसिंहजीका Deportation (पंजाबसे बहिष्कार) हुआ।

कांग्रेसके स्थापन पर मुसलमानोंके नेता सय्यद अहमदने मुसलमानोंको उपदेश दिया कि वे कांग्रेससे पृथक् रहें। अन्तमें कुछ काल पश्चात् मुसलमानोंको मुसलीमलीग बनानेकी आवश्यकता हुई। इटली और बलकानका टर्कीसे जङ्ग हुआ। इसमें मुसलमानोंके अन्दर योरूपके विरुद्ध जज़बा (भाव) पैदा हुआ। नवयुवक टर्कीमें गये। उनको वहांसे एक शिक्षा दी गयी कि जबतक तुम्हारी अपने देशमें कोई प्रशंसनीय और वर्णोचित स्थिति नहीं होती, तुम तुर्कोंकी कोई उचित सेवा या सहायता नहीं कर सकते। वर्त्तमान महायुद्धमें टर्की जरमनीके साथ हो गया। स्वभावतः संसारके सब मुसलमानोंकी सहानुभूति टर्की और जरमनीके साथ थी। तुर्कोंका मित्र दल (allies) के साथ होना सम्भव ही न था; क्योंकि रूस चिरकालसे तुर्कोंका शत्रु चला आता था। मित्र दलकी विजय

हो जानेपर यदि टर्कीके साथ नरम बरताव होता तो सम्भव था कि सब ही आर्य मुसलिम भारतके Politics (राजनीति) में बहुत भाग न लेते। परन्तु मित्रदल तुर्कों के साथ क्यों विशेष रूपसे नरमीका सलूक करते, फलतः पक्के दीनदार मुसलमानोंके दिल अङ्गरेज़ो राज्यसे अधिक निराश हो गये। वह इस परिणामपर पहुँचे कि संसारकी नीतिमें भारतवर्षके मुसलमानोंका बड़ा प्रभाव हो सकता है यदि उनका अपने देशकी पालिसीमें कुछ अधिकार हो। यद्यपि अभीतक मैं यह नहीं कह सकता कि भारतवर्षके मुसलमानोंके दिलोंमें सच्चो देशभक्ति पैदा हो गयी है लेकिन इतना ज़रूर है कि अब इनके दिलोंका मुख इधरको आ रहा है और भारतवर्षको एक ही कठिन समस्या आर्य—मुसलिम ऐक्य हल होती दिखाई देती है।

सिक्ख मतकी संख्या बहुत थोड़ो सी है। मगर एक जङ्गी फिरका होनेके कारण सिक्खोंकी स्थिति आर्यावर्तके इतिहासमें बहुत ऊँचो है। सिक्ख राज्यकी समाप्ति पर सिक्ख साधारण आर्य मात्रमें ही मिल गये। इनका पृथक् कोई व्यक्तित्व न रहा था। जब कि फिर गवर्नमेण्टकी ओर इनकी कदर व इज्ज़त अधिक हो गयो। मुझे याद है कि पहले जन संख्याके कागज़ोंमें मज़हबके आगे कुछ न होता था। अकस्मात् १६१६ में यह नोट बढ़ाया गया "हिन्दु-मुसलमान या सिक्ख।" सिक्ख एक पृथक् जाति बनने लगी और हर मुआमलेमें पृथक् हो रही। ताकि दूसरोंके प्रभावमें आकर एक न हो जावे। अभी तक वह पूरे तौरपर एक होनेपर तय्यार नहीं। भारतवर्षके कुली चिरकालसे अन्य देशों तथा उपनिवेशोंमें ले जाए जाते हैं। अफ्रिका और दक्षिण अमेरिकाके अंगरेजी उपनिवेशोंमें इनकी दशा आधी गुलामी की है। कैनेडामें और अमेरिकामें प्रायः सिक्ख लोग

गये हैं। यह फौज और पुलिसमें भरती होकर चीनकी बंदरगाह हांकांग और शंघाईमें गये। वहांसे कोई दिलचला अमेरिका चला गया। उसने खबर दी और हज़ारोंकी संख्यामें यह लोग नौकरी छोड़ छोड़कर वहां जा पहुँचे। कैनेडाके गोरे लोगोंको इनका दुःख हुआ। उन्होंने रोकना चाहा और एक कानून बनाया कि कोई भी कैनेडाका यात्री सीधा अपने देशसे आना चाहिये। गुरुदित्तसिंह जापानी जहाज़ लेकर कलकत्तासे कैनेडा पहुँचा। वहां इनके साथ बुरा बर्ताव हुआ। इससे कैनेडा और अमेरिकाके सिक्ख और दूसरे लोग जल गये। उधर स्वतन्त्रताके वायुमण्डलमें रहकर मानुषी समताका विचार उनके दिलोंमें घुस गया था। उन्होंने इस अपमानको अनुभव किया जो कि अपने देशके अन्दर रहनेवाले कभी नहीं अनुभव कर सकते। महायुद्ध आरम्भ होनेपर सिक्ख लोग सैकड़ों हज़ारोंकी संख्यामें अपने देशमें आए ताकि अपने देशवासियों और सिक्ख जातिको सचेत करें। इनको जो कष्ट हुआ या जो कुर्बानी उन्होंने की बहुत ही नज़दीकी हालात हैं।

इन सबका नेता एक नवयुवक लड़का करतारसिंह था जिसकी आयु १६ वर्षकी थी। जिसे बादमें फांसी चढ़ाया गया। दुआबाका कोई नगर या ग्राम नहीं, जहाँसे कोई न कोई सिक्ख इस शोरशमें प्रविष्ट न हुआ हो।

रौलट एक्टके विरुद्ध महात्मा गान्धीने आवाज़ उठाई। भारतके सब निवासी भिन्न भिन्न परिस्थितियोंके कारण अत्यन्त दुःखित और तङ्ग आए हुए थे। सब आर्य मुसलमान सिक्ख उसके विरुद्ध खड़े हो गये। यह एक विचित्र और अपूर्व ऐक्य था जो कि आर्यावर्त्त देशमें पैदा हुआ। इस जातीय एकताका उत्तर मारशल लासे मिला। तो भी यह प्रेम और ऐक्य तरङ्ग

उस भयङ्कर मारशल लाके दुःखसे भी बच निकला है। यह देश भक्तिकी आग एक नई भट्टी पैदा हुई जिसमें पुराने पक्षपात और इर्षा द्वेषोंके दग्ध हो जानेकी आशा की जा सकती है।

तीसरी (Force) शक्ति मानवी जन्मसिद्ध राजनैतिक अधिकारोंका ज्ञान है। इसका अर्थ यह है, कि प्रत्येक मनुष्य अपने देश और समाजके भीतर जहां उसके लिये कुछ नियत कर्तव्य हैं वहां इसके नियत अधिकार भी हैं। जहां हर एक मनुष्यके लिये यह उचित है कि वह अपने समाज (सोसाइटी) की रीति, प्रथा या नियमको भङ्ग न करे क्योंकि वह समाजमें रहता हुआ उनसे विशेष लाभ प्राप्त करता है। वहां उसको यह अधिकार है। वह सोसाइटीके भले और बुरेके सम्बन्धमें अपनी सम्मति रक्खे और यथासम्भव इस अपनी सम्मतिका प्रयोग करे। व्यवस्थाके अनुसार कर्त्तव्य कर्मके नियत और विभक्त हो जानेसे सबसे बुरा प्रभाव जो आर्य जाति पर यह हुआ कि साधारण लोगोंने राज्य सम्बन्धी कामोंसे अपने आपको सर्वथा पृथक् और असम्बद्ध कर लिया। अतः चिरकाल तक सोसाइटी जंगी हालतसे बची रही। सब लोग वैश्योंके कामोंमें लग गए। इस महायुद्धसे पूर्व इङ्गलेण्डकी रुचि भी इसी ओर थी। अंग्रेज विचारक और विद्वान युद्धके स्वरूपसे विरुद्ध थे। स्पेन्सरने यहां तक लिखा कि जितनी वर्त्तमान (तत्कालिक) Industriation (व्यापार धन्धा)की बढ़ती होती उतनाही जाति-युद्धका होना असम्भव सा होता जाता है। जर्मनी उसके विरुद्ध युद्धकी तय्यारीमें लगा रहा। युद्धके प्रारम्भमें अंग्रेज़ जातिने अपनी निर्बलताको अनुभव किया और यदि पुराने कालकी लड़ाई तलवार और भालोंकी होती तो अंग्रेज जातिका कोई ठिकाना न था, परन्तु उनके पक्षमें बात यह थी

कि विज्ञान (साइन्स) की उन्नतिने युद्धको और ही प्रकारका स्वरूप दे दिया। इन मैशीनगनोंकी सहायतासे क्या एक बच्चा भी वैसे ही लड़ सकता है जैसा कि बड़ा भारी युद्ध-विद्यामें कुशल हस्त मनुष्य।

भारतमें चूंकि किसी विदेशीय शत्रुसे प्रतियोगिता न हुई थी। राजपूतोंकी संख्या बहुत संकुचित और परिमित हो गई। साधारण लोगोंका विचार भी न रहा कि आवश्यकतानुसार वह भी क्षत्रियका काम कर सकते हैं। उन्होंने न केवल तलवार पकड़ना पाप समझा प्रत्युत उनका देश रक्षा तथा व्यवस्थामें कोई हाथ ही न था। राज्यपर अधिकार कर लेना तथा और और प्रबन्ध आदि कर लेना साधारण लोगोंके लिये ऐसा हो गया, जैसे मदारीके हाथमें जादूका खेल होता है। जिसे कि वह दूर खड़े हुए आश्चर्यसे देखते हैं और उसके सम्बन्धमें कोई बात चलाना अथवा शङ्का उठाना पाप समझते हैं। कोई लुटेरा कहींसे चला। चन्द साथी लूट मारकी लालचमें एकत्रित किये। जिस देश वो प्रान्तपर चाहा अधिकार कर लिया। लोगोंकी अवस्था बैलोंकी सी हो गई थी। एकसे दूसरेके अधिकारमें चले गये। हैदरअलीका दादा फकीर था, बाप सिपाही और वह आप बादशाह बन गया। खुसरो एक कमीना शूद्र गुलाम था। पर वह दिल्लीका बादशाह बन गया। हसन गंगूका उदाहरण भी इसी बातको प्रमाणित करता है।

राजपूत और सिक्ख सरदार एक जगहसे चल पड़े, दूसरे स्थानपर जाके अपना शासन चलाना शुरु कर दिया। बङ्गालकी अनारकिस्ट (अराजकता फैलाने वाली) पार्टी ठीक यही अभिप्राय अपने सामने रक्खे हुए थी। उनका उद्देश्य बम्ब और डाकासे रुपया जमा करके किलापर अधिकार जमा लेना था।

उनका ज़ोर तबसे हुआ। ला० लाजपतरायजीके देश निष्कासनके बाद यह ख्याल जोरसे फैल गया कि सरकार भाषण और लेखनमें स्वतन्त्रता न रहने देगी। कांग्रेसमें नई कौमी पार्टी पैदा हुई। उनके अखबारात कलकत्तामें आरम्भ हुए जिनके अस्तित्वका स्वीकार गवर्नमेण्ट नहीं करती थी। बन्देमातरम्, सन्ध्या, युगान्तर अखबार थे, जो तब प्रचलित किये गये। झगड़ेमें, कुछ मुसलमानोंने आर्य जातिपर सखतीकी। आर्य लोगोंने आत्मरक्षाके लिये समितियां स्थापित कीं। उनको रुपया जमा करनेके लिये डाका काममें लाया गया। उसी तरह बादमें पंजाबमें लाकर लोगोंको गुमराह किया गया। जब एक ग्राममें जाकर लूट मारकी जावे तो इससे देश भक्ति किस प्रकार पैदा हो सकती है। लोगोंको बताना यह है कि वह समझें कि उनकी गवर्नमेण्टमें उनका हाथ होना चाहिये। इसका अर्थान्तर यह है कि सरकारको अच्छा व बुरा कहनेका और उनके कृत्योंपर आलोचना करनेका अधिकार उनको प्राप्त है। इसे ओपीनियन या सार्वजनिक सम्मति कहते हैं। सर्वसाधारणकी रायका भाव यह है कि लोग गवर्नमेण्टके कामोंमें हस्तक्षेप करनेके अधिकारी हैं। उसका परिणाम यह होता है कि आज एक आदमी अच्छा है लोगोंका नेता है कल वह धोखा देता है लोग उसे छोड़ देते हैं। उसका कोई सम्मान नहीं होता। फिर भारतवर्षमें वह दृश्य न होंगे जो हम पीछे इतिहासमें देखते चले आए हैं। जितने Viceroy (वाईसराय) हुए हैं उनमें लार्ड रिपन विशेष वर्णनके पात्र हैं क्योंकि उन्होंने Municipal-Self Government (नागरिक स्वराज्य) की नींव डाली। इन कमेटियोंमें अभी तक कोई जीवन न था। लेकिन ऊपरी ढाँचा, पिञ्जर या शरीर विद्यमान था। लोगोंको बुद्धि आनेसे वही जीवित

जागृत संस्थाए बननी शुरू हुई हैं। इस युद्धसे लोगोंको अपनी वास्तविक स्थितिका ज्ञान हुआ है। जंगके लिये भरतीके लिये सरकारको अपना जादू छोड़ना पड़ा और लोगोंके पास जाना पड़ा। इससे लोगोंको अपनी शक्तिका पता लगा। सच तो यह है कि यह एक प्रकारकी Renaissance अर्थात् नयी राष्ट्रीयताका जन्म भारत देशमें हुआ है। वर्त्तमान Reform Scheme शासन सुधार पद्धति कितनी अपूर्ण है। लार्ड रिपनकी कमेटियोंकी तरह एक प्रकारका पिंजर है, जिसमें जीवन पड़ जानेसे देशके लिये एक Constitution राज्य व्यवस्थापक और नियामक सभाका काम देगी।

* समाप्त *

भक्ति मार्गके यात्रियोंके लिये आत्मप्रसाद।